Hindi / English / Gujarati

मुहूर्त चिन्तामणि

महाकाव्य

ॐ नमः शिवाय

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
शुभाशुभप्रकरण	
मङ्गलाचरण ...	१
तिथीशचक्र ...	२
नन्दातिथिसंज्ञाचक्र ...	३
तिथिवारमृत्युयोगचक्र ...	४
नक्षत्रवारदग्धयोगचक्र ...	४
अधम तिथियों का चक्र ...	५
दग्धविषाख्यहुताशनचक्र ...	६
यमघंटचक्र ...	६
शून्यतिथिचक्र ...	७
निन्द्य तिथि और निन्द्य नक्षत्र ...	७
चैत्रादि मासों में शून्य नक्षत्र ...	८
चैत्रादि मासों में शून्य राशियाँ ...	८
प्रतिपदादि विषम तिथियों में दग्ध लग्नें ...	९
पूर्वोक्त दुष्ट योगों का परिहार ...	९
शुभ कर्मों में निषिद्ध योग ...	९
गृहप्रवेश, यात्रा तथा विवाह में त्याज्य वार, नक्षत्र ...	१०
आनन्दादि अट्ठाइस योग ...	१०
योगों के जानने का उपाय ...	११
आनन्दादि चक्र ...	१२
दुष्टयोगों का परिहार ...	१३
संपूर्ण दोषों का नाशक रवियोग ...	१३
सर्वार्थसिद्धियोग ...	१३
सर्वार्थसिद्धियोगचक्र ...	१४
उत्पातादियोगचतुष्टय चक्र ...	१४
निन्दितयोगों का परिहार ...	१५
संपूर्ण कृत्यों में वर्जनीय वस्तुएँ	१५
सूर्य और चन्द्रग्रहण के त्याज्य नक्षत्र और दिन ...	१६
त्याज्य नक्षत्र और योग आदि ...	१६
पक्षरन्ध्र तिथि और उनका परिहार	१७
कुलिक आदि दुष्ट मुहूर्त ...	१७
प्रकारान्तर से वर्जित मुहूर्त ...	१८
देशभेद से होलाष्टक का निषेध ...	१९
चन्द्रमा अनुकूल होने से दुष्ट योग भी शुभ होते हैं ...	१९
अन्य परिहार ...	२०
भद्रा आदि का परिहार ...	२०
भद्राकाल ...	२०
भद्रा के मुख और पुच्छ का विचार	२०
भद्रा का निवास और फल ...	२१
शुक्रास्त आदि में वर्जनीय क्रिया	२१
सिंह और मकरराशि में स्थित बृहस्पति का दोष ...	२२
सिंहस्थ बृहस्पति-दोष का परिहार	२२
लुप्त संवत्सर-दोष और उसका परिहार ...	२४
होरासिद्धि के लिए वारप्रवृत्ति ...	२४
कालहोरा ...	२५
कालहोरा का प्रयोजन ...	२५
संपूर्ण कार्यों में निषिद्ध मन्वादि और युगादि तिथियाँ ...	२६
नक्षत्रप्रकरण	
नक्षत्रों के स्वामी ...	२६
नक्षत्र-स्वामियों का चक्र ...	२७
नक्षत्रों की संज्ञा ...	२७
नक्षत्रों की अधोमुखादि संज्ञा ...	२९
मूँगा और दाँत आदि धारण करने का मुहूर्त ...	३०
नवीन वस्त्र के जलने आदि का शुभाशुभ फल ...	३०

विषय		पृष्ठ
वस्त्रनवधाचक्र	...	३१
निन्द्यकाल में भी वस्त्रधारण	...	३१
राजदर्शन, मद्यारम्भ और गो-क्रय-विक्रय का मुहूर्त	...	३१
पशुओं के पालने का मुहूर्त	...	३२
औषध और सूचीकर्म का मुहूर्त	...	३२
क्रय-विक्रय मुहूर्तों का परस्पर निषेध तथा क्रयमुहूर्त	...	३३
विक्रय और विपणि का मुहूर्त	...	३३
घोड़ा और हाथी के कृत्य का मुहूर्त		३४
भूषाघटनादि का मुहूर्त	...	३४
मुद्रापातन और वस्त्रक्षालन का मुहूर्त	...	३५
तलवार आदि के धारण और शय्या आदि के उपभोग का मुहूर्त	...	३५
नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञा	...	३६
अन्धाक्षादि चक्र	...	३६
अन्धाक्षादि नक्षत्रों का फल	...	३७
धन के व्यवहार में निषिद्ध नक्षत्रादि		३७
जलाशय और नृत्यारंभ का मुहूर्त		३७
स्वामी की सेवा करने का मुहूर्त		३८
द्रव्यप्रयोग और ऋणग्रहण का मुहूर्त		३८
हल चलाने का मुहूर्त	...	३९
बीजोप्ति मुहूर्त	...	३९
राहुभात् फणिचक्र	...	४०
सूर्यभुक्तभात् हलचक्र	...	४०
शिरामोक्ष और विरेकादि के मुहूर्त		४०
धान्यच्छेदन-मुहूर्त	...	४१
कणमर्दन और सस्यरोपण का मुहूर्त	...	४१
धान्य-स्थिति और धान्यवृद्धि का मुहूर्त	...	४२
शान्तिक और पौष्टिक मुहूर्त	...	४२
होमाहुति मुहूर्त	...	४३
अग्निवास और उसका शुभाशुभत्व		४३
नवान्नभक्षण-मुहूर्त	...	४४
नौकाघट्टन-मुहूर्त	...	४४
वीरसाधन व अभिचार का मुहूर्त		४४
रोग शान्त होने पर स्नान का मुहूर्त		४४
शिल्पविद्या के आरम्भ का मुहूर्त	...	४५
सन्धि करने का मुहूर्त	...	४५
परीक्षा का मुहूर्त	...	४५
सब शुभ कार्यों में लग्नशुद्धि	...	४६
जिन नक्षत्रों में ज्वर आने से मृत्यु हो जाती है अथवा जितने दिनों तक ज्वर रहता है उनका वर्णन	...	४६
रोगी के शीघ्र ही मरने का योग		४७
प्रेतक्रिया का मुहूर्त	...	४७
त्रिपुष्करयोग और उसका फल	...	४८
लिङ्गदाह का निषिद्धकाल	...	४८
अभुक्तमूलघटी	...	४९
मूल और आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न सन्तान का शुभाशुभ फल	...	५०
मूल का निवास	...	५०
गण्डान्त आदि में जन्मे हुए का अरिष्ट और उसका परिहार	...	५१
अश्विनी आदि नक्षत्रों की संख्या		५१
नक्षत्रों का स्वरूप	...	५१
जलाशय और देवप्रतिष्ठा आदि का मुहूर्त्त	...	५३

संक्रान्तिप्रकरण

संक्रान्ति-नाम, वार तथा नक्षत्रों का चक्र	...	५४
दिनरात्रि के विभाग से संक्रान्तियों का शुभाशुभ फल	...	५५
शेष संक्रान्तियों के नाम	...	५६
संक्रान्ति का पुण्यकाल	...	५६
रात्रि में संक्रान्ति का विशेष पुण्यकाल		५६
अर्धरात्रि में संक्रान्ति का पुण्यकाल		५६
सन्ध्याकाल का प्रमाण	...	५७
संक्रान्तियों का विशेष पुण्यकाल	...	५७
सायन संक्रान्तियों का पुण्यकाल		५८
नक्षत्रों की सम, बृहत् और जघन्य संज्ञा	...	५८

विषय	पृष्ठ
उक्त संज्ञाओं का प्रयोजन ...	५८
कर्क संक्रान्ति के रविवारादि में अब्द-विंशोपक ...	५९
कर्कसंक्रान्ति में अब्दविंशोपकचक्र ...	५९
संक्रान्तियों के वाहन, वस्त्र, आयुध, भक्ष्य और लेपन आदि का विचार ...	६०
संक्रातिवश से शुभाशुभ फल ...	६२
संक्रान्ति के नक्षत्र से जन्म-नक्षत्रचक्र ...	६२
सूर्यादि के बली रहते कार्य और संक्रान्ति करते हुए ग्रहों का बल ...	६३
अधिकमास और क्षय मास का निर्णय	६३
अथ गोचरप्रकरण	
सूर्यादि ग्रहों का शुभ व विद्ध विचार ...	६४
वामवेध और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का बल ...	६६
क्रमवेध और विपरीतवेध में मतभेद ...	६७
ग्रहणनक्षत्र का फल ...	६८
चन्द्रमा का विशेष शुभाशुभत्व ...	६८
प्रकारान्तर से चन्द्रमा का शुभाशुभ फल	६९
ग्रहों की शांति के लिए नव-रत्नों का धारण ...	६९
प्रत्येक ग्रह की प्रसन्नता के लिए माणिक्यादि का धारण ...	७०
ताराओं के नाम और फल ...	७०
दुष्ट तारा का परिहार ...	७१
चन्द्रमा की अवस्था ...	७१
अवस्थाओं के नाम और फल ...	७२
ग्रहदोष की शान्ति के लिए औषध-युक्त जल से स्नान ...	७२
ग्रह गन्तव्य राशि का फल कितने दिन पहले देने लगते हैं ...	७३
दुष्ट योगादि की शांति के लिए दान ...	७३
राश्यन्तर में गये हुए ग्रहों के फल देने का काल ...	७३
संस्कारप्रकरण	
प्रथम रजोदर्शन में उत्तम, मध्यम, निकृष्ट नक्षत्र ...	७४
निन्दित प्रथम रजोदर्शन ...	७५
प्रथम रजस्वला के स्नान का मुहूर्त ...	७५
गर्भादान का मुहूर्त ...	७६
गर्भाधान में लग्नबल ...	७६
सीमन्तोन्नयन मुहूर्त ...	७७
गर्भाधान से लेकर प्रसव पर्यंत महीनों के स्वामी ...	७७
पुंसवन का मुहूर्त ...	७८
जातकर्म और नामकर्म का मुहूर्त ...	७८
प्रसूता स्त्री के स्नान करने का मुहूर्त ...	७९
प्रथम आदि महीनों में बालक के दाँत निकलने का फल ...	७९
दोलारोहण का मुहूर्त ...	७९
जलपूजा का मुहूर्त ...	८१
अन्नप्राशन का मुहूर्त ...	८१
अन्नप्राशन के लिए लग्न-शुद्धि ...	८२
अन्नप्राशन मुहूर्त में ग्रहों का फल ...	८२
बालकों को भूमि में बैठाने का मुहूर्त ...	८३
बालक की जीविका-परीक्षा का मुहूर्त ...	८३
ताम्बूलभक्षणमुहूर्त ...	८३
कर्णवेध मुहूर्त ...	८३
कर्णवेध में लग्नशुद्धि ...	८५
मुण्डन आदि में निषिद्ध काल ...	८५
शुक्र और बृहस्पति की बाल्यावस्था ...	८६
मतान्तर से बाल्यवृद्धावस्था ...	८६
चूड़ाकर्म का मुहूर्त ...	८७
जिसकी माता गर्भवती हो उसके मुण्डन का मुहूर्त ...	८७
तारा-दोष का अपवाद ...	८८
मुन्डन आदि कार्यों में निषिद्ध काल ...	८८
साधारण क्षौर आदि का मुहूर्त और निषेध ...	८९
निमित्तवश क्षौरकर्म ...	८९
क्षौरकर्म में राजाओं के लिए विशेष ...	८९

विषय	पृष्ठ
अक्षरारम्भ का मुहूर्त ...	९०
विद्यारम्भ का मुहूर्त ...	९०
वर्णक्रम से यज्ञोपवीत का समय ...	९१
यज्ञोपवीत के नक्षत्रादि ...	९१
यज्ञोपवीत में लग्नदोष ...	९२
यज्ञोपवीत में लग्न के गुण ...	९२
वर्णेश और शाखेश ...	९३
शाखेश और वर्णेश का प्रयोजन ...	९३
जन्म मासादि का यज्ञोपवीत में अपवाद ...	९३
बृहस्पति का बल ...	९४
गुरुदोषापवाद ...	९४
यज्ञोपवीत में निषिद्ध समय ...	९४
सूर्यादि ग्रहों के नवांश में यज्ञोपवीत होने का फल ...	९५
यज्ञोपवीत में चन्द्रनवांश का फल ...	९५
केन्द्रस्थित सूर्यादि ग्रहों का फल ...	९६
यज्ञोपवीतकाल में संयुक्त ग्रहों का फल ...	९६
यज्ञोपवीत में चन्द्रवश से शुभाशुभ योग ...	९६
अनध्यायसंज्ञक तिथियाँ ...	९७
प्रदोष-लक्षण ...	९७
ब्रह्मौदन के पहले उत्पात होने पर शान्ति का विधान ...	९७
वेदों के भेद से यज्ञोपवीत के नक्षत्र ...	९८
यज्ञोपवीतादि में धर्मशास्त्र का विचार ...	९८
छुरिकाबन्धन का मुहूर्त ...	९९
केशान्तकर्म का मुहूर्त ...	९९

विवाहप्रकरण

विषय	पृष्ठ
विवाहप्रश्नविधि ...	१००
विवाहकारक अन्य योग ...	१००
वैधव्य योग ...	१०१
कुलटा और मृतवत्सायोग ...	१०१
विवाहभंगयोग ...	१०१
जन्मकालिक बालविधवायोग की शान्ति का उपाय ...	१०२
प्रश्न के समय प्रथम सन्तान का विचार ...	१०२
प्रश्नकाल में साधारण शुभाशुभ फल ...	१०३
कन्यावरण मुहूर्त ...	१०३
वरवरण अर्थात् फलदान का मुहूर्त ...	१०३
विवाहकाल में ग्रहशुद्धि ...	१०४
विवाह के महीने ...	१०४
सन्तानभेद से जन्ममासादि अशुभ और शुभ विवाह ...	१०४
ज्येष्ठ मास में विशेष ...	१०५
विवाहादि विशेष का निषेध ...	१०५
विपत्ति में विवाहविचार ...	१०६
उक्त विषय पर विशेष ...	१०६
दुष्ट नक्षत्रों में उत्पन्न वरकन्या का फल ...	१०७
अष्टकूट ...	१०७
वर्णकूट ...	१०८
वश्यकूट ...	१०८
ताराकूट ...	१०९
योनिकूट ...	१०९
ग्रहमैत्रीकूट ...	११०
गणकूट ...	१११
गणों का फल ...	११२
भकूट ...	११२
दुष्ट भकूट का उद्धार ...	११३
दुष्ट गणकूट, भकूट और ग्रहकूटों का परिहार ...	११४
नाड़ीविचार ...	११४
अन्य प्रकार का वर्गकूट ...	११५
अवर्गादि चक्र ...	११५
नक्षत्र और राशि के एक और भिन्न होने का विचार ...	११६
राशियों के स्वामी ...	११६
राशीशचक्र ...	११६
नवांशचक्र ...	११७

विषय	पृष्ठ
होरा	११७
त्रिशांश	११८
त्रिशांशचक्र	११८
द्रेष्काण	११८
द्रेष्काणचक्र	११९
द्वादशांशविधि	११९
द्वादशांशचक्र	१२०
षड्वर्ग	१२०
नक्षत्रों की पूर्वार्धयोगि आदि संज्ञा और उनका फल ...	१२०
स्वामी और सेवक के जन्मनक्षत्र का विचार	१२१
गण्डान्त का दोष	१२१
कर्तरीदोष	१२२
संग्रहदोष	१२३
अष्टम स्थान का दोष और उसका परिहार	१२३
अन्य परिहार	१२३
आठवीं राशि के नवांशादि और बारहवीं राशि का दोष ...	१२४
विषघटी दोष	१२४
दिन के पन्द्रह मुहूर्त ...	१२६
रात्रि के पन्द्रह मुहूर्त ...	१२६
आदित्यादि वारों में निषिद्ध मुहूर्त ...	१२७
विवाह के नक्षत्र और अभिजित् नक्षत्र का मान ...	१२७
ग्रहों द्वारा नक्षत्रों का वेध ...	१२८
सप्तशलाकाचक्र में ग्रहों द्वारा नक्षत्रों का वेध ...	१२९
सप्तशलाकाचक्र ...	१३०
क्रूरग्रहों से बिद्ध नक्षत्रों का दोष और उसका परिहार ...	१३०
लत्तादोष ...	१३१
पातयोग ...	१३१
क्रान्तिसाम्ययोग ...	१३२
एकार्गलदोष ...	१३२
उपग्रहदोष ...	१३३
पातादि दोषों पर विशेष ...	१३३
अशुभ अर्द्धयामचक्र ...	१३४
कुलिकदोष ...	१३४
कुलिकमुहूर्तचक्र ...	१३५
दग्धातिथि ...	१३५
दग्धातिथिचक्र ...	१३५
जामित्रदोष ...	१३५
एकार्गल आदि दोषों का परिहार ...	१३६
देशभेद से उक्त दोषों का परिहार ...	१३६
दश दोष ...	१३६
उक्त दश दोषों का फल ...	१३७
दक्षिण देशों में प्रसिद्ध बाणदोष ...	१३९
अन्य बाणदोष ...	१३९
बाणदोष का परिहार ...	१४०
ग्रहों की दृष्टि	१४०
लग्नस्थान की शुद्धि ...	१४१
लग्न से सातवें भाव की शुद्धि ...	१४२
अन्य प्रकार से लग्न और सातवें भाव की शुद्धि ...	१४२
सूर्यसंक्रान्ति का दोष ...	१४३
सूर्यादि ग्रहों की संक्रान्तियों में निषिद्ध काल ...	१४३
पंगु और आन्धादि लग्नदोष ...	१४३
मतान्तर से पंगु आदि दोष ...	१४४
पंग्वादि लग्नों का फल ...	१४४
शुभनवांश ...	१४५
विहित नवांशों में भी किसी का निषेध ...	१४५
सर्वथा लग्नभङ्ग योग ...	१४५
विवाहकालिक शुभग्रह ...	१४६
कर्तरी आदि महादोषों का परिहार ...	१४६
वर्षा आदि अनेक दोषों का परिहार ...	१४७
अन्य दोषों का परिहार ...	१४७
सामान्य दोषों का परिहार ...	१४७

विषय	पृष्ठ
लग्न का विंशोपक बल ...	१४८
श्वश्रूवादि के सुख-दुःख जानने का उपाय ...	१४८
संकरवर्णों के विवाह का मुहूर्त ...	१४६
गान्धर्वादि विवाह में और त्रिपदी-चक्र में नक्षत्रशुद्धि ...	१४६
सूर्य के नक्षत्र से अशुभ और शुभ नक्षत्र ...	१५०
विवाह से पूर्व होनेवाले कार्यों का मुहूर्त ...	१५०
वेदी के लक्षण तथा मंडप का उद्वासन ...	१५०
मंडप के खम्भ गाड़ने का मुहूर्त ...	१५१
स्तम्भचक्र ...	१५१
गोधूलिप्रशंसा ...	१५१
समय-भेद से गोधूलिकाल ...	१५२
गोधूलि-समय में त्याज्य दोष ...	१५२
सूर्य की स्पष्टगति ...	१५३
सूर्य स्पष्ट करने की रीति ...	१५३
लग्नघटिका साधनार्थ लग्नभुक्तांश-साधन ...	१५४
लग्न और सूर्य से इष्टकालसाधन	१५४
लखनऊ का लग्नमान ...	१५५
इष्टकाल बनाने की विशेष रीति ...	१५५
शुभ कार्यों में अवश्य त्यागने योग्य दोष ...	१५६
कन्या आदि के तेल आदि लगाने की संख्या ...	१५८

वधूप्रवेश प्रकरण

विषय	पृष्ठ
वधूप्रवेश का मुहूर्त ...	१५६
विवाह के बाद प्रथम वर्ष के महीनों में स्वामी के घर में स्त्री के रहने का फल ...	१५६

द्विरागमन प्रकरण

विषय	पृष्ठ
सम्मुख और दक्षिण शुक्र का दोष ...	१६०
शुक्रदोष का परिहार ...	१६१

अग्न्याधानप्रकरण

विषय	पृष्ठ
लग्नशुद्धि ...	१६२
अग्न्याधानकालिक लग्नवश से यज्ञ-कारक योग ...	१६२

राजाभिषेकप्रकरण

विषय	पृष्ठ
नक्षत्र तथा लग्नशुद्धि ...	१६३
राजाभिषेक काल में ग्रहस्थिति फल ...	१६३
सम्पत्ति तथा पृथ्वीस्थिति ये दो योग ...	१६४

यात्राप्रकरण

विषय	पृष्ठ
प्रश्नकालिक शुभयात्रायोग ...	१६५
प्रश्नकालिक अशुभयात्रायोग ...	१६६
प्रश्नद्वारा यात्रा की दिशा का निर्णय ...	१६६
मासभेद से यात्रा के शुभाशुभ भेद और तारा ...	१६७
यात्रा में निषिद्ध तिथि और विहित तिथि ...	१६७
वारशूल और नक्षत्रशूल ...	१६८
कालविशेष में विशेष नक्षत्रों का निषेध ...	१६८
यात्रा में मध्यम नक्षत्र तथा कई निषिद्ध नक्षत्रों की त्याज्य घटी ...	१६६
अन्य मत से त्याज्य घटी ...	१६६
नक्षत्रों की जीवपक्षादि संज्ञा ...	१६६
जीवपक्षादि संज्ञा चक्र ...	१७०
जीवपक्षादि का विशेष फल ...	१७०
युद्धयात्रा के उपयोगी कुलाकुल संज्ञक तिथि, वार और नक्षत्र ...	१७१
पन्थाराहु का विचार ...	१७२
पन्थाराहुचक्र ...	१७३
पन्थाराहुचक्रफल ...	१७३
पौषादि मासों की परीवादि तिथियों में पूर्वादि दिशाओं की यात्रा का शुभाशुभ फल ...	१७३
तिथिचक्र	१७५

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
सर्वांक योग ...	१७६	शुभलग्न	१८६
महाडल और भ्रमण योग ...	१७६	दिशाओं के स्वामी	१८७
हिम्बराख्य योग ...	१७७	दिक्स्वामिचक्र ...	१८७
घातचन्द्र योग	१७७	दिगीश कहने का प्रयोजन ...	१८७
घातचन्द्रचक्र	१७७	लालाटिक योग	१८८
घातक नक्षत्रपाद	१७७	प्रास्थानिक यात्रायोग	१८८
घातक नक्षत्रपादचक्र	१७८	समयबल	१८९
घातक तिथियाँ	१७८	लग्नादि बारह भावों के नाम ...	१८९
घाततिथिचक्र	१७९	यात्रा में ग्रहों का शुभाशुभ फल ...	१९०
घातक वार	१७९	यात्रा के अधिकारी ...	१९०
घात वारचक्र	१७९	योगयात्रा	१९०
घातक नक्षत्र	१७९	यात्राकालिक योगादि	१९५
घातनक्षत्रचक्र	१८०	विजयादशमी की प्रशंसा ...	१९६
तिथियोगिनी	१८०	यात्रा में चित्तशुद्धि की प्रधानता ...	१९६
योगिनीचक्र	१८०	यात्राप्रतिबन्धक कार्य	१९६
घातक लग्न	१८०	यात्राविशेष का विचार ...	१९७
घातक लग्नचक्र	१८१	यात्रा में त्रिनवमी दोष ...	१९७
कालपाशयोग	१८१	यात्राकाल में कर्तव्य विधि ...	१९८
कालपाशचक्र	१८२	नक्षत्रदोहद	१९८
परिघदण्डदोष	१८२	दिग्दोहद	१९९
परिघदण्डचक्र	१८२	वारदोहद	१९९
आग्नेयादि कोणों की यात्रा तथा परिघदण्ड का अपवाद ...	१८३	तिथिदोहद	१९९
परिघदण्ड का अन्य अपवाद तथा केन्द्र आदि स्थानों में वक्री ग्रह का निषेध ...	१८३	यात्रा का अन्य प्रकार	२००
		दिशाओं के वाहन	२००
		यात्रा करने का स्थान	२००
		प्रस्थानविधि	२०१
अयनशुद्धि ...	१८३	मतभेद से प्रस्थान कितनी दूर पर करना चाहिए	२०१
सम्मुख शुक्रदोष	१८४	प्रस्थान की स्थिति का प्रमाण तथा यात्रा में त्याज्य वस्तु ...	२०२
वक्रनीचादिस्थित शुक्रदोष ...	१८४		
कालविशेष में शुक्रदोषाभाव तथा अस्तादि विचार ...	१८५	यात्रा के अन्य नियम ...	२०३
लग्नविशेष का त्याग ...	१८५	आवश्यक यात्रा में अकालवृष्टि की शान्ति	२०३
मीन और मीन के नवांश का फल तथा शुभलग्न	१८५	शुभ शकुन	२०४
अन्य अनिष्ट लग्न	१८६	अशुभ शकुन	२०४
अन्य शुभ लग्न	१८६	अन्य शकुन	२०५
सम्मुख तथा पृष्ठगत लग्न ...	१८६	वामभाग में शुभ शकुन ...	२०६

विषय	पृष्ठ
दक्षिणभाग में शुभ शकुन ...	२०६
साधारण शकुन ...	२०६
अशुभ शकुन का उद्धार ...	२०७
यात्रा से लौटने पर गृहप्रवेश का मुहूर्त ...	२०७
पूर्वोक्त दोषों का पुनः परिगणन ...	२०८
लग्न के दोषों का पुनः परिगणन ...	२०८

वास्तुप्रकरण

विषय	पृष्ठ
राशिद्वारा निषिद्ध वासस्थान ...	२१०
ग्रामनिषिद्ध वासस्थानचक्र ...	२११
इष्ट नक्षत्र व इष्ट आय के द्वारा घर बनाने की और विस्तारादि आयों की विधि ...	२११
ध्वज आदि आयों का प्रयोजन ...	२१३
गृहारम्भ में निषिद्धकाल ...	२१३
व्यय तथा अंश ...	२१४
शालाध्रुवांक ...	२१४
ध्रुवादिकों की नामाक्षरसंख्या ...	२१५
ध्रुव आदिक सोलह घरों के नाम ...	२१५
अन्य आचार्य के मत से आय-वार इत्यादि नव पदार्थों का साधन ...	२१६
गृहारम्भ में वृषवास्तुचक्र ...	२१७
वृषवास्तुचक्र सूर्यभात् ...	२१८
गृहारंभचक्र सूर्यभात् ...	२१८
सौर और चान्द्र महीनों की एकता से घर का दरवाजा ...	२१८
अन्य प्रकार से सौर चान्द्रमासों की एकता ...	२१९
तिथियों के क्रम से द्वार का निषेध ...	२२०
गृहारम्भ में पञ्चांगशुद्धि ...	२२०
देवालय आदि के स्थानभेद से राहु का मुख ...	२२१
राहुचक्र ...	२२२
घर में कूप बनाने की विधि ...	२२२
गृह-कूपचक्र ...	२२२
मकान के भीतर कहाँ कौन घर बनाना चाहिए ...	२२३
गृहायुर्दाय योग ...	२२३
लक्ष्मीयुक्त ग्रहयोग ...	२२४
परहस्तगामी योग ...	२२४
गृहारम्भ में शुभसूचक काल ...	२२४
द्वारचक्र ...	२२५

गृहप्रवेशप्रकरण

विषय	पृष्ठ
गृहप्रवेशमुहूर्त ...	२२७
जीर्णगृहप्रवेश ...	२२७
वास्तुपूजा आदि के नक्षत्र ...	२२८
वामसूर्यचक्र ...	२२६
तिथियों के क्रम से पूर्व आदि द्वार-वाले घरों में प्रवेश ...	२२६
गृहप्रवेश में कलशवास्तुचक्र ...	२२६
कलशवास्तुचक्र ...	२३०
गृहप्रवेश के पश्चात् कर्तव्यविधि ...	२३१
कवि-वंश-वर्णन प्रकरण ...	२३१

इति

मुहूर्त्तचिन्तामणि

भाषा-टीका सहित

शुभाशुभप्रकरण

मंगलाचरण

गौरीश्रवःकेतकपत्रभङ्गमाकृष्य हस्तेन ददन्मुखाग्रे ।
विघ्नं मुहूर्त्ताकलितद्वितीयदन्तप्ररोहो हरतु द्विपास्यः ॥ १ ॥

अन्वयः—गौरीश्रवःकेतकपत्रभंगं हस्तेन आकृष्य मुखाग्रे ददत् (अतएव) मुहूर्त्ता कलितद्वितीयदन्तप्ररोहो द्विपास्यः (अस्माकं) विघ्नं हरतु ॥ १ ॥

श्रीपार्वतीजी के कान में स्थित केतकी के फूल के दल को सूँड़ से लेकर ओष्ठ पर धरते समय मुहूर्त्तभर दूसरे दाँत के सदृश करने वाले श्रीगणेशजी हमारे विघ्न को हरें ॥ १ ॥

ग्रन्थ रचने का प्रयोजन

क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भम् ।
अनन्तदैवज्ञसुतः स रामो मुहूर्त्तचिन्तामणिमातनोति ॥ २ ॥

अन्वयः—अनन्तदैवज्ञसुतः स रामः क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भं-मुहूर्त्तचिन्तामणिं आतनोति ॥ २ ॥

अनन्त दैवज्ञ के पुत्र राम मुहूर्त्तचिन्तामणि नाम ग्रन्थ की रचना करते हैं । यह ग्रन्थ जातकर्म आदि अनेक कर्मों के करने वा न करने योग्य शुभाशुभ मुहूर्त्त के जानने का कारण है और इसमें थोड़े शब्दों में मुख्य अर्थ प्रकट

किये गये हैं। मुहूर्त्तचिन्तामणि के दो अर्थ हैं। पहिला यह कि दिन और रात्रि के पन्द्रहवें भाग को और किसी कार्य को करने के लिए विचारे हुए शुभाशुभ काल को मुहूर्त्त कहते हैं। उसके शुभाशुभत्व के विचारने के लिए जितने ग्रन्थ हैं उन सबों में श्रेष्ठ। दूसरा अर्थ यह है कि वाञ्छित फल देनेवाले मणि के सदृश वाञ्छित मुहूर्त्तों का ज्ञान करानेवाला ग्रन्थ ॥ २ ॥

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः ।
शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥ ३ ॥

अन्वयः—वह्निः, कः, गौरी, गणेशः, अहिः, गुहः, रविः, शिवः, दुर्गा, अन्तकः, विश्वे, हरिः, कामः, शिवः, शशी, (एते) तिथीशाः (ज्ञेयाः) ॥ ३ ॥

अग्नि, ब्रह्मा, पार्वती, गणेश, सर्प, कार्त्तिकेय, सूर्य, शिव, दुर्गा, यम, विश्वेदेव, हरि, कामदेव, शिव और चन्द्रमा ये देवता क्रम से प्रतिपदादि पन्द्रह तिथियों के स्वामी हैं, अर्थात् प्रतिपदा के अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, तृतीया के पार्वती, चतुर्थी के गणेश, पंचमी के सर्प, षष्ठी के कार्त्तिकेय, सप्तमी के सूर्य, अष्टमी के शिव, नवमी के दुर्गा, दशमी के यम, एकादशी के विश्वेदेव, द्वादशी के हरि, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव, पूर्णमासी के चन्द्रमा और अमावस के पितर स्वामी हैं। जिन तिथियों के जो स्वामी हैं, उन देवताओं की पूजा वा प्रतिष्ठा आदि उन्हीं तिथियों में करने से शुभदायक होते हैं ॥ ३ ॥

तिथीशचक्र

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०
अग्नि	ब्रह्मा	पार्वती	गणेशजी	सर्प	कार्त्तिकेय	सूर्य	शिव	दुर्गा	यम	विश्वेदेव	हरि	काम	शिव	चन्द्र	पितर

तिथियों की नन्दादि संज्ञा और उनका शुभाशुभत्व

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेति तिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः ।
सितेऽसिते शस्तसमाधमाः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ॥ ४ ॥

अन्वयः—सिते (शुक्ले) नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णा इति तिथ्यः अशुभमध्यशस्ताः (ज्ञेयाः)। असिते (कृष्णपक्षे) शस्तसमाधमाः स्युः। च (पुनः) सितज्ञभौमार्किगुरौ (क्रमेण) सिद्धाः (सिद्धयोगाः स्युः) ॥ ४ ॥

नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा—ये प्रतिपदा से पञ्चमी पर्यन्त, षष्ठी से दशमी पर्यन्त और एकादशी से पूर्णमासी पर्यन्त तिथियों की संज्ञा हैं, अर्थात् प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी—इनकी नन्दा संज्ञा; द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी—इनकी भद्रा संज्ञा; तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी—इनकी जया संज्ञा; चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी—इनकी रिक्ता संज्ञा और पञ्चमी, दशमी, पूर्णमासी और अमावस—इनकी पूर्णा संज्ञा है। ये तिथियाँ क्रम से शुक्लपक्ष में अच्छे कार्य के लिए अधम, मध्यम, उत्तम और कृष्णपक्ष में उत्तम, मध्यम, अधम हैं, अर्थात् शुक्लपक्ष की प्रतिपदा अधम, षष्ठी मध्यम, एकादशी उत्तम और कृष्णपक्ष में प्रतिपदा उत्तम, षष्ठी मध्यम, एकादशी अधम है। ऐसे ही भद्रा आदि तिथियों में भी जानना चाहिए और यही तिथियाँ क्रम से शुक्र, बुध, मंगल, शनैश्चर, बृहस्पति इनके दिनों में हों, अर्थात् शुक्र के दिन नन्दा, बुध के दिन भद्रा, मङ्गल के दिन जया, शनैश्चर के दिन रिक्ता और बृहस्पति के दिन पूर्णा हो तो किये हुए कार्य की सिद्धि करनेवाली होती हैं। इस कारण सिद्धा भी नाम है ॥ ४ ॥

नन्दादितिथिसंज्ञाचक्रम्

१ ६ ११	२ ७ १२	३ ८ १३	४ ९ १४	५ १० १५ ३०
नन्दा	भद्रा	जया	रक्ता	पूर्णा
शु०	बु०	मं०	श०	बृ०
सिद्धा	मिद्धा	सिद्धा	सिद्धा	सिद्धा

सूर्यादि वारों में निषिद्ध तिथि और निषिद्ध नक्षत्र

नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या जया च रिक्ताभद्रापूर्णसंज्ञाऽधमार्कात् ।
याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठार्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभं स्यात् ॥ ५ ॥

अन्वयः—अर्कात् (क्रमेण) नन्दा, भद्रा, नन्दिकाख्या, जया, रिक्ता, भद्रा, पूर्णसंज्ञा अधमा स्यात्। च (पुनः) रवेः याम्यं, त्वाष्ट्रं, वैश्वदेवं, धनिष्ठा, अर्यम्णं, ज्येष्ठा, अन्त्यं (क्रमेण) दग्धभं स्यात् ॥ ५ ॥

सूर्यादि वारों में नन्दा, भद्रा, नन्दा, जया, रिक्ता, भद्रा, पूर्णा ये तिथियाँ क्रम से मृतसंज्ञक हैं, अर्थात् रविवार को नन्दा, सोमवार को भद्रा,

मंगल को नन्दा, बुध को जया, बृहस्पति को रिक्ता, शुक्र को भद्रा और शनैश्चर को पूर्णा मृतसंज्ञक होती है। इनमें कोई शुभ कार्य न करना चाहिए। 'पूर्णामृतार्कात्' इसमें अकार का प्रश्लेष मानने से अमृत संज्ञा होती है अर्थात् शुभप्रद है। कुछ प्राचीन आचार्यों ने ऐसा ही कहा है। जैसे—आदित्यभौमयोर्नन्दा भद्रा शुक्रशशांकयोः। जया सौम्ये गुरौ रिक्ता पूर्णाऽऽर्कावमृता शुभाः। आर्कौ=शनौ।

तिथिवारमृत्युयोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
१	२	१	३	४	२	५
६	७	६	८	९	७	१०
११	१२	११	१३	१४	१२	१५

सूर्यादि वारों में क्रम से भरणी, चित्रा, उत्तराषाढ़, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा और रेवती ये नक्षत्र दग्धसंज्ञक हैं, अर्थात् रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगल को उत्तराषाढ़, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पति को उत्तराफाल्गुनी, शुक्र को ज्येष्ठा और शनैश्चर को रेवती दग्धसंज्ञक हैं। इनमें कोई शुभ कार्य न करना चाहिए॥ ५॥

नक्षत्रवारदग्धयोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
भरणी	चित्रा	उत्तराषाढ़	धनिष्ठा	उत्तराफाल्गुनी	ज्येष्ठा	रेवती

अधम तिथियाँ और दँतून करने का निषेध

षष्ठ्यादितिथयो मन्दाद्विलोमं प्रतिपद्बुधे।
सप्तम्यर्केऽधमाः षष्ठ्याद्यामाश्च रदधावने॥ ६॥

अन्वयः—मन्दात् विलोमं षष्ठ्यादितिथयः, बुधे प्रतिपत्, अर्के सप्तमी, (अधमाः) च (पुनः) रदधावने षष्ठ्याद्यामाः अधमाः॥ ६॥

शनैश्चर से लेकर उलटे क्रम से रविवार तक षष्ठी सप्तमी आदि सीधे क्रम से अधम संज्ञक होती हैं, अर्थात् शनैश्चर को षष्ठी, शुक्रवार को सप्तमी, बृहस्पति को अष्टमी, बुधवार को नवमी, मंगल को दशमी, सोमवार को एका-

दशी, रविवार को द्वादशी ये अधम संज्ञक हैं। इसे क्रकच योग कहते हैं। और बुधवार को प्रतिपदा तथा रविवार को सप्तमी भी अधम हैं। इसे संवर्तक योग कहते हैं। इनमें कोई शुभ कार्य नहीं करना चाहिए।

अधम तिथियों का चक्र

शनैश्चर	शुक्र	बृहस्पति	बुधवार	मंगल	सोमवार	रविवार	दिन
६	७	८	९ १	१०	११	१२ ७	तिथि

षष्ठी, प्रतिपदा और अमावस ये तिथियाँ दँतून करने में निषिद्ध हैं अर्थात् इनमें दँतून न करना चाहिए॥ ६॥

तैल आदि का निषेध

षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु नो सेवेत ना तैलपले क्षुरं रतम्।
नाभ्यञ्जनं विश्वदशद्विके तिथौ धात्रीफलैः स्नानममाद्रिगोष्वसत्॥ ७॥

अन्वयः—षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु (क्रमेण) ना (पुरुषः) तैलपले, क्षुरं, रत नो सेवेत। विश्वदशद्विके तिथौ अभ्यञ्जनं (तथा) अमाद्रिगोषु धात्रीफलैः स्नानं असत्॥ ७॥

छठि, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस—इन तिथियों में क्रम से पुरुष तेल, मांस, क्षौर, रति इन कर्मों को न करे, अर्थात् छठि को तेल न लगावे, अष्टमी को मांसभक्षण न करे, चतुर्दशी को बाल न बनवावे और अमावस को मैथुन[1] न करे। त्रयोदशी, दशमी, दुइज—इन तिथियों में उबटन न लगावे। अमावस, सप्तमी, नवमी—इन तिथियों में आँवला के फलसहित स्नान न करे॥ ७॥

दग्ध, विषाख्य, हुताशन और यमघंट योग

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः।
सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशा दग्धा विषाख्याश्च हुताशनाश्च॥ ८॥
सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति मघाविशाखाशिवमूलवह्निः।
ब्राह्मचं करोर्काद्यमघण्टकाश्च शुभे विवर्ज्यागमने त्ववश्यम्॥ ९॥

१—अमावास्यां पौर्णमास्यां च दारां न गच्छेद्यदि गच्छेत्तर्हि निरिन्द्रियो भवेत्।

अन्वयः—सूर्यादिवारे (क्रमेण) सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दाः, वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः, सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशाः तिथयः (क्रमात्) दग्धाः, विषाख्याः, हुताशनाः भवन्ति च (तथा) अर्कात् (क्रमेण) मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ब्राह्मंकरः यमघण्टकाः भवन्ति। (इमे) शुभे विवर्ज्याः गमने तु अवश्यं (विवर्ज्याः) ॥ ८-९ ॥

रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगल को पञ्चमी, बुधवार को तीज, बृहस्पति को छठि, शुक्रवार को अष्टमी, शनैश्चर को नवमी हो तो दग्धयोग होता है तथा रविवार को चौथि, सोमवार को छठि, मंगल को सप्तमी, बुधवार को दुइज, बृहस्पति को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी, शनैश्चर को सप्तमी हो तो विषाख्ययोग होता है और रविवार को द्वादशी, सोमवार को छठि, मंगल को सप्तमी, बुधवार को अष्टमी, बृहस्पति को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनैश्चर को एकादशी हो तो हुताशनयोग होता है ॥ ८ ॥

सूर्यादि वारों में मघा, विशाखा, आर्द्रा, मूल, कृत्तिका, रोहिणी और हस्त ये नक्षत्र हों, अर्थात् रविवार को मघा, सोमवार को विशाखा, मंगल को आर्द्रा, बुधवार को मूल, बृहस्पति को कृत्तिका, शुक्रवार को रोहिणी और शनैश्चर को हस्त हो तो यमघण्टयोग होता है। यह योग शुभ कार्यों में वर्जनीय है। परन्तु यात्रा में तो अवश्य ही वर्जित है ॥ ९ ॥

दग्ध, विषाख्य हुताशन चक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर	वार
१२	११	५	३	६	८	९	दग्ध
४	६	७	२	८	९	७	विषाख्य
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशन

यमघण्टचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृत्तिका	रोहिणी	हस्त

शून्य तिथियाँ

भाद्रे चन्द्रदृशौ नभस्यनलनेत्रे माधवे द्वादशी
पौषे वेदशरा इषे दशशिवा मार्गेऽद्रिनागा मधौ।

गोऽष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिता
उर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे शराङ्गाब्धयः ॥ १० ॥
शक्राः पश्च सिते शक्राद्रयग्निविश्वरसाः क्रमात् ॥

अन्वयः—भाद्रे चन्द्रदृशौ, नभसि अनलनेत्रे, माधवे द्वादशी, पौषे वेदशराः, इषे दशशिवाः, मार्गे अद्रिनागाः, मधौ गोऽष्टौ, उभयपक्षगाः तिथयः बुधैः शून्याः कीर्तिताः। (तथा) ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे क्रमात् शराङ्गाब्धयः शक्राः, पञ्च तथा सिते (शुक्ले) शक्राद्रयग्निविश्वरसाः (तिथयः) शून्याः कीर्तिताः ॥ १० ॥

भादौं महीने में प्रतिपदा और दुइज, श्रावण में दुइज और तीज, वैशाख में द्वादशी, पौष में चौथि और पञ्चमी, कुआर में दशमी और एकादशी, अगहन में सप्तमी और अष्टमी, चैत्र में अष्टमी और नवमी ये शुक्ल-कृष्ण दोनों पक्षों की तिथियाँ पण्डितों ने शून्य कही हैं। कार्त्तिक, आषाढ़, फाल्गुन, ज्येष्ठ, माघ, इन महीनों में कृष्णपक्ष की पञ्चमी, छठि, चौथि, चतुर्दशी, पञ्चमी अर्थात् कार्त्तिककृष्ण पञ्चमी, आषाढ़कृष्ण छठि, फाल्गुनकृष्ण चौथि, ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दशी, माघकृष्ण पञ्चमी भी शून्य हैं और इन्हीं महीनों के शुक्लपक्ष की चतुर्दशी, सप्तमी, तीज, त्रयोदशी और छठि ये तिथियाँ क्रम से शून्य हैं ॥ १० ॥

शून्यतिथिचक्र

भादौं	श्रावण	वैशाख	पौष	कुआर	अगहन	चैत्र	कार्तिक	आषाढ़	फाल्गुन	ज्येष्ठ	माघ	मास
१ २	२ ३	१२	४ ५	१० ११	७ ८	८ ९	५	६	४	१४	५	कृष्ण तिथि
१ २	२ ३	१२	४ ५	१० ११	७ ८	८ ९	१४	७	३	१३	६	शुक्ल तिथि

निन्द्य तिथि और निन्द्य नक्षत्र

तथा निन्द्यं शुभे सार्पं द्वादश्यां वैश्वमादिमे ॥ ११ ॥
अनुराधा द्वितीयायां पञ्चम्यां पितृभं तथा।
त्र्युत्तराश्च तृतीयायामेकादश्यां च रोहिणी ॥ १२ ॥
स्वातीचित्रे त्रयोदश्यां सप्तम्यां हस्तराक्षसे।
नवम्यां कृत्तिकाऽष्टम्यां पूभा षष्ठ्यां च रोहिणी ॥ १३ ॥

अन्वयः —तथा शुभे (शुभकार्ये) द्वादश्यां सार्पं निन्द्यं, आदिमे वैश्वम् निन्द्यम्, द्वितीयायां अनुराधा (निंद्या), पञ्चम्यां पित्र्यभम् निद्यम् तथा तृतीयायां त्र्युत्तराः (निंद्याः), एकादश्यां रोहिणी (निंद्या), त्रयोदश्यां स्वातीचित्रे (निन्द्ये), सप्तम्यां हस्त-राक्षसे (निन्द्ये), नवम्यां कृत्तिका (निन्द्या), अष्टम्यां पूभा (निन्द्या), षष्ठ्यां रोहिणी (निन्द्या) ॥ ११-१३ ॥

द्वादशी तिथि में आश्लेषा, प्रतिपदा में उत्तराषाढ़, द्वितीया में अनुराधा, पञ्चमी में मघा, तृतीया में तीनों उत्तरा अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, एकादशी में रोहिणी, त्रयोदशी में स्वाती और चित्रा, सप्तमी में हस्त और मूल, नवमी में कृत्तिका, अष्टमी में पूर्वभाद्रपद और छठि में रोहिणी निंद्य हैं। इन तिथियों में ये नक्षत्र हों तो शुभ कार्य न करे ॥ ११-१३ ॥

चैत्रादि मासों में शून्य नक्षत्र

कदास्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ ।
वैश्वश्रुती पाशिपौष्णे अजपादग्निपितृभे ॥ १४ ॥
चित्राद्वीशौ शिवाश्व्यर्काः श्रुतिमूले यमेन्द्रभे ।
चैत्रादिमासे शून्याख्यास्तारा वित्तविनाशकाः ॥ १५ ॥

अन्वयः—चैत्रादिमासे (क्रमेण) कदास्रभे, त्वाष्ट्रवायू, विश्वेज्यो, भगवासवौ, वैश्वश्रुती, पाशिपौष्णे, अजपात्, अग्निपितृभे, चित्राद्वीशौ, शिवाश्व्यर्काः, श्रुतिमूले, यमेन्द्रभे (एताः) वित्तविनाशकाः शून्याख्याः ताराः (ज्ञेयाः) ॥ १४-१५ ॥

चैत्र में रोहिणी और अश्विनी, वैशाख में चित्रा और स्वाती, ज्येष्ठ में उत्तराषाढ़ और पुष्य, आषाढ़ में पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण में उत्तराषाढ़ और श्रवण, भादौ में शतभिष और रेवती, कुआर में पूर्वभाद्रपद, कार्त्तिक में कृत्तिका और मघा, अगहन में चित्रा और विशाखा, पौष में आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघ में श्रवण और मूल, फाल्गुन में भरणी और ज्येष्ठा नक्षत्र शून्य हैं। इनमें शुभ कार्य करने से धन का नाश होता है ॥ १४-१५ ॥

चैत्रादि मासों में शून्य राशियाँ

घटो झषो गौर्मिथुनं मेषकन्याऽलितौलिनः ।
धनुः कर्को मृगः सिंहश्चैत्रादौ शून्यराशय ॥ १६ ॥

अन्वयः—चैत्रादौ (क्रमेण) घटः, झषः, गौः, मिथुनं, मेषकन्यालितौलिनः, धनुः, कर्कः, मृगः, सिंहः (एते) शून्यराशयः (ज्ञेयाः) ॥ १६ ॥

चैत्र में कुम्भ, वैशाख में मीन, ज्येष्ठ में वृष, आषाढ़ में मिथुन, श्रावण में मेष, भादौं में कन्या, कुवार में वृश्चिक, कार्त्तिक में तुला, अगहन में धनु, पौष में कर्क, माघ में मकर और फाल्गुन में सिंह शून्य है। इन लग्नों में शुभ कार्य न करना चाहिए ॥ १६ ॥

प्रतिपदादि विषम तिथियों में दग्ध लग्नें

पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटैणौ मृगेन्द्रनक्रौ मिथुनाङ्गने च।
चापेन्दुभे कर्कहरी हयान्त्यौ गोन्त्यौ च नेष्ठे तिथिशून्यलग्ने ॥ १७ ॥

अन्वयः—पक्षादितः ओजतिथौ (क्रमेण) घटैणौ, मृगेन्द्रनक्रौ, मिथुनाङ्गने, चापेन्दुभे, कर्कहरी, हयान्त्यौ, गोन्त्यौ (एते) तिथिशून्यलग्ने, नेष्टे ॥ १७ ॥

शुक्ल और कृष्ण पक्ष की विषम तिथियों में ये लग्ने दग्धसंज्ञक हैं। प्रतिपदा में तुला और मकर, तृतीया में सिंह और मकर, पञ्चमी में मिथन और कन्या, सप्तमी में कर्क और धनु, नवमी में कर्क और सिंह, एकादशी में धनु और मीन, त्रयोदशी में वृष और मीन शून्य हैं। इसलिये इनमें कोई शुभ कार्य न करे ॥ १७ ॥

पूर्वोक्त दुष्ट योगों का परिहार

तिथयो मासशून्याश्च शून्यलग्नानि यान्यपि।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणीतरेषु तु ॥ १८ ॥
पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिताः ॥ १९ ॥

अन्वयः—मासशून्याः तिथयः अपि च (पुनः) यानि शून्यलग्नानि (तानि) मध्यदेशे विवर्ज्यानि, इतरेषु (देवेषु) तु न दूष्याणि ॥ १८ ॥ पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि, मासशून्याः राशयश्च गौडमालवयोः (देशयोः) त्याज्याः, अन्यदेशें न गर्हिताः ॥ १९ ॥

मासों की शून्य तिथियाँ और शून्य लग्नें मध्यदेश में ही वर्जित हैं, अन्य देशों में नहीं। पंगु, अन्ध और काण लग्नें तथा मासों की शून्य राशियाँ गौड़ और मालव देश में त्याज्य हैं, अन्य देशों में निन्दित नहीं हैं ॥ १८-१९ ॥

शुभ कर्मों में निषिद्ध योग

वर्जयेत्सर्वकार्येषु हस्तार्कं पञ्चमीतिथौ।
भौमाश्विनीं च सप्तम्यां षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा ॥ २० ॥

बुधानुराधामष्टम्यां　दशम्यां　भृगुरेवतीम् ।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादश्यां शनिरोहिणीम् ।। २१ ।।

अन्वयः—पञ्चमीतिथौ हस्तार्कं, सप्तम्यां भौमाश्विनीं, षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं, अष्टम्यां बुधानुराधां, दशम्यां भृगुरेवतीं, नवम्यां गुरुपुष्यं, एकादश्यां शनिरोहिणीं च सर्वकार्येषु वर्जयेत् ।। २०-२१ ।।

पञ्चमी तिथि में हस्त नक्षत्र और रविवार, सप्तमी में अश्विनी नक्षत्र और मङ्गलवार, छठि में मृगशिरा नक्षत्र और सोमवार, अष्टमी में अनुराधा नक्षत्र और बुधवार, दशमी में रेवती नक्षत्र और शुक्रवार, नवमी में पुष्य नक्षत्र और बृहस्पतिवार, एकादशी में रोहिणी नक्षत्र और शनिवार हो तो शुभ कर्मों में त्याग देना चाहिए ।। २०-२१ ।।

गृहप्रवेश, यात्रा और विवाह में क्रम से वर्जनीय वार तथा नक्षत्र

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम् ।
भौमेऽश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ।। २२ ।।

अन्वयः—गृहप्रवेशे, यात्रायां, च (पुनः) विवाहे, यथाक्रमं भौमेऽश्विनीं, शनौ ब्राह्मं, गुरौ पुष्यं, विवर्जयेत् ।। २२ ।।

गृहप्रवेश, यात्रा और विवाह में क्रम से मङ्गल के दिन अश्विनी, शनैश्चर के दिन रोहिणी और बृहस्पति के दिन पुष्य नक्षत्र वर्जित है। अर्थात् मङ्गल के दिन अश्विनी नक्षत्र हो तो गृहप्रवेश, शनैश्चर के दिन रोहिणी नक्षत्र हो तो यात्रा और बृहस्पति के दिन पुष्य नक्षत्र हो तो विवाह न करना चाहिए ।। २२ ।।

आनन्दादि अट्ठाइस योग

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो धातासौम्यौ ध्वाङ्क्षकेतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ।। २३ ।।
उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।
मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्यप्रवर्द्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ।। २४ ।।

अन्वयः—आनन्दाख्यः, कालदण्डः, च (पुनः) धूम्रः, धाता, सौम्यः, ध्वांक्षकेतू, श्रीवत्साख्यः, वज्रकं च मुद्गर, छत्रं, मित्रं, मानसं, पद्मलुम्बौ, उत्पातमृत्यू, किल

(निश्चयेन) काणसिद्धी, शुभः, अमृताख्यः, मुसलं, गदः च मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्य-प्रवर्धमानाः क्रमेण (एते अष्टाविंशतियोगाः) स्वनाम्ना फलदाः (भवन्ति) ॥ २३-२४ ॥

आनन्द, कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वज्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्ब, उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातंग, रक्ष, चर, सुस्थिर और प्रवर्द्धमान, ये अट्ठाइस योग अपने नाम के सदृश फल देनेवाले हैं ॥ २३-२४ ॥

इन योगों के जानने का उपाय

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे ।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्या मन्दे च वारुणात् ॥ २५ ॥

अन्वयः—अर्के दास्रात्, इन्दौ मृगात्, भौमे सार्पात्, बुधे करात्, गुरौ मैत्रात्, भृगौ वैश्वात्, मन्दे वारुणात् (आनन्दादयो योगाः क्रमेण) गण्याः ॥ २५ ॥

रविवार को अश्विनी से, सोमवार को मृगशिरा से, मंगल को आश्लेषा से, बुध को हस्त से, बृहस्पति को अनुराधा से, शुक्र को उत्तराषाढ़ से, शनैश्चर को शतभिष से, अभिजित् के सहित इष्ट दिन नक्षत्र तक गणना करने से जितनी संख्या हो आनन्दादि गणना से उतनी ही संख्यावाला योग इष्ट दिन में जानना चाहिए। जैसे रविवार के दिन यदि श्रवण नक्षत्र हो तो अश्विनी से अभिजित् सहित गिनने पर श्रवण तेइसवाँ हुआ और आनन्दादिकों की गणना करने पर गदयोग तेइसवाँ हुआ। यही योग उस रविवार को होगा। इसी रीति से और भी जानना चाहिए ॥ २५ ॥

———:o:———

आनन्दादिचक्र

योग	सूर्यवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	बृह० वार	शुक्रवार	शनिवार
आनन्द	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ० षाढ़	शतभिष
कालदण्ड	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्ना	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वाभाद्र०
धूम्र	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भाद्र०
धाता	रोहिणी	पुष्य	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती
सौम्य	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ० षाढ़	शतभिष	अश्विनी
ध्वांक्ष	आर्द्रा	मघा	चित्ना	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वाभा०	भरणी
केतु	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भा०	कृत्तिका
श्रीवत्स	पुष्य	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी
वज्र	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ० षाढ़	शतभिष	अश्विनी	मृगशिरा
मुद्गर	मघा	चित्ना	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वाभा०	भरणी	आर्द्रा
छत्न	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु
मित्र	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य
मानस	हस्त	अनुराधा	उ० षाढ़	शतभिष	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा
पद्म	चित्ना	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वाभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा
लुम्ब	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०
उत्पात	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ० फा०
मृत्यु	अनुराधा	उ० षाढ़	शतभिष	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त
काण	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वाभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्ना
सिद्धि	मूल	श्रवण	उ०भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पू० फा०	स्वाती
शुभ	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ० फा०	विशाखा
अमृत	उ० षाढ़	शतभिष	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा
मुसल	अभि०	पूर्वाभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्ना	ज्येष्ठा
गद	श्रवण	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल
मातंग	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़
रक्ष	शतभिष	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ० षाढ़
चर	पूर्वाभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्ना	ज्येष्ठा	अभिजित्
सुस्थिर	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण
प्रवर्ध०	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा

दुष्ट योगों का परिहार

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदेश्वाः ।
धूम्रे काले मौसले भूर्द्वयं द्वे रक्षो मृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ।। २६ ।।

अन्वयः—ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे (योगे) इषुनाड्यः, पदमलुम्बे (योगे) वेदाः, गदे अश्वाः [सप्त] नाड्यः वर्ज्याः । धूम्रे भूः, काणे द्वयं, मौसले द्वे, च (पुनः) रक्षो-मृत्यूत्पातकालाः (योगः) सर्वे वर्ज्याः ।। २६ ।।

ध्वांक्ष, वज्र, मुद्गर इन तीन योगों में प्रथम पाँच दण्ड; पद्म, लुम्ब इन दो में प्रथम चार दण्ड, गद योग में प्रथम सात दण्ड; धूम्र में एक दण्ड; काण में दो दण्ड; मुसल में दो दण्ड, और रक्ष, मृत्यु, उत्पात, काल, ये सम्पूर्ण, शुभ कार्यों में वर्जनीय हैं ।। २६ ।।

सम्पूर्ण दोषों का नाशक रवियोग

सूर्यभाद्वेदगोतर्कदिग्विश्वनखसंमिते ।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसंघविनाशकाः ।। २७ ।।

अन्वयः—(श्लोकक्रमेण) सुगमः ।। २७ ।।

सूर्य जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र से वर्तमान चन्द्र नक्षत्र चौथा, नवाँ, छठा, दशवाँ, तेरहवाँ, बीसवाँ हो तो रवियोग होता है । यह सम्पूर्ण दोषों का नाश करनेवाला है ।। २७ ।।

सर्वार्थसिद्धियोग

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्य कृशानुसार्पं ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ।। २८ ।।
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि सर्वार्थसिद्धिचै कथितानि पूर्वैः ।। २९ ।।

अन्वयः—(श्लोकक्रमेण) पूर्वैः (एतानि) सर्वार्थसिद्धचै कथितानि ।। २८-२९ ।।

रविवार को हस्त, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, पुष्य, अश्विनी; सोमवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा; मंगल को अश्विनी, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका, आश्लेषा; बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, मृगशिरा; बृहस्पति को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य; शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण; शनैश्चर को श्रवण, रोहिणी और स्वाती हो तो सर्वार्थसिद्धि योग होता है । इस योग में जो कार्य किया जाता है वह सिद्ध होता है ।। २९ ।।

सर्वार्थसिद्धियोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
हस्त	श्रवण	अश्विनी	रोहिणी	रेवती	रेवती	श्रवण
मूल	रोहिणी	उ०भाद्रपद	अनुराधा	अनुराधा	अनुराधा	रोहिणी
उ० ३	मृगशिरा	कृत्तिका	हस्त	अश्विनी	अश्विनी	स्वाती
पुष्य	पुष्य	आश्लेषा	कृत्तिका	पुनर्वसु	पुनर्वसु	
अश्विनी	अनुराधा		मृगशिरा	पुष्य	श्रवण	

उत्पातादि योगचतुष्टय

द्वीशात्तोयाद्वासवात्पौष्णभाच्च ब्राह्मात्पुष्यादर्यमर्क्षाच्चतुर्भैः ।
स्यादुत्पातो मृत्युकाणौ च सिद्धिर्वारेऽर्काद्येतत्फलं नामतुल्यम् ॥ ३० ॥

अन्वयः—अर्काद्ये वारे द्वीशात्, तोयात्, वासवात्, पौष्णभात्, ब्राह्मात्, पुष्यात्, अर्यमर्क्षात्, चतुर्भैः उत्पातः स्यात् मृत्युकाणौ (भवेताम्) सिद्धिः स्यात्, तत्फलं नामतुल्यं (ज्ञेयम्) ॥ ३० ॥

रविवारादि सात दिनों में क्रम से विशाखा, पूर्वाषाढ़, धनिष्ठा, रेवती, रोहिणी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रों से चार-चार नक्षत्र उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि ये चार योग होते हैं अर्थात् रविवार को विशाखा उत्पात, अनुराधा मृत्यु, ज्येष्ठा काण, मूल सिद्धियोग; सोमवार को पूर्वाषाढ़ उत्पात, उत्तराषाढ़ मृत्यु, अभिजित् काण, श्रवण सिद्धियोग; मंगल को धनिष्ठा उत्पात, शतभिष मृत्यु, पूर्वाभाद्रपद काण, उत्तराभाद्रपद सिद्धियोग; बुधवार को रेवती उत्पात, अश्विनी मृत्यु, भरणी काण, कृत्तिका सिद्धियोग; बृहस्पति को रोहिणी उत्पात, मृगशिरा मृत्यु, आर्द्रा काण, पुनर्वसु सिद्धियोग; शुक्रवार को पुष्य उत्पात, आश्लेषा मृत्यु, मघा काण, पूर्वाफाल्गुनी सिद्धियोग; शनैश्चर को उत्तराफाल्गुनी उत्पात, हस्त मृत्यु, चित्रा काण, स्वाती सिद्धियोग होता है। इन चारों योगों का फल भी इनके नाम के सदृश ही होता है ॥ ३० ॥

उत्पातादियोगचतुष्टयचक्र

योग	रवि	सोम	मंगल	बुधवार	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
उत्पात	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ०फा०
मृत्यु	अनुराधा	उत्तराषाढ़	शतभिष	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त
काण	ज्येष्ठा	अभिजित्	पूर्वाभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
सिद्धि	मूल	श्रवण	उ०भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती

निन्दित योगों का परिहार

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूणवङ्गखशेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥ ३१ ॥

अन्वयः—तिथिवारोत्थाः, तिथिभोत्थाः, भवारजाः, तथा त्रितयजाः, कुयोगाः हूणवंगखशेषु (देशेषु) एव वर्ज्याः ॥ ३१ ॥

तिथि-वार के योग से, तिथि-नक्षत्र के योग से, नक्षत्र-वार के योग से और तिथि-वार-नक्षत्र इन तीनों के योग से जितने कुयोग कहे हैं वे सब हूण देश, वंग देश और खश देश में ही वर्जनीय हैं, अन्य देशों में नहीं ॥ ३१ ॥

सम्पूर्ण कृत्यों में वर्जनीय वस्तुएँ

सर्वस्मिन्विधुपापयुक्तनुलवावर्द्धे निशाह्नोर्घटी-
त्र्यंशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम् ।
उत्पातग्रहतोऽद्रयहांश्च शुभदोत्पातैश्च दुष्टं दिनं
षण्मासं ग्रहभिन्नभं त्यज शुभे यौद्धं तथोत्पातभम् ॥ ३२ ॥

अन्वयः—विधुपापयुक्तनुलवौ, निशाह्नोः अर्धे [मध्ये] घटीत्र्यंशं, वै (निश्चयेन) कुनवांशकं, ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयं, उत्पातग्रहतः अद्रयहान्, शुभदोत्पातैः दुष्टं दिनं, सर्वस्मिन् शुभे त्यज । ग्रहभिन्नभं यौद्ध (भं), तथा उत्पातभं षण्मासं (यावत्) सर्वस्मिन् शुभे त्यज ॥ ३२ ॥

चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, शनैश्चर, राहु और केतु से युक्त लग्न, और नवांश; आधी रात और मध्याह्न में बीस-बीस पल (दस पहिले और दस पीछे); पापग्रह का नवांश; सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण से पूर्व तीन दिन, भूकम्प आदि उत्पात और चन्द्र-सूर्य-ग्रहण के पश्चात् सात दिन तथा शुभद उत्पात का दिन, इन सब को शुभ कार्यों में त्याग दे। मंगलादि पाँच ग्रहों से भेद को प्राप्त हुआ नक्षत्र, जिस नक्षत्र में मंगलादि पापग्रहों का युद्ध हुआ हो वह नक्षत्र, जिस नक्षत्र में कोई उत्पात हुआ हो वह नक्षत्र, इन सबको सम्पूर्ण शुभ कार्यों में छः महीने तक त्याग करे। उत्पात और शुभदोत्पात—इन दोनों में यह भेद है कि जो वसन्तादि ऋतुओं में बिजली गिरना आदि वराहमिहिर ने कहा है वे तो शुभदोत्पात हैं और वही उक्त ऋतुओं को छोड़ अन्य ऋतुओं में होने से उत्पात कहे जाते हैं। ग्रह-युद्ध चार प्रकार का है—उल्लेख १ भेद २ अंशुविमर्द ३ अपसव्य ४। मंगलादि ग्रहों का परस्पर स्पर्श उल्लेख कहा जाता है। जब एक ग्रह दूसरे ग्रह को ढक ले तब

भेद कहा जाता है। दो ग्रहों की किरणों का परस्पर मिलकर एक हो जाना अंशुविमर्द कहा जाता है और अंशुविमर्द नामक युद्ध में एक ग्रह के हीन होने पर अपसव्य कहा जाता है। ऐसा वराहमिहिराचार्य ने कहा है ॥ ३२ ॥

सूर्य और चन्द्रग्रहण के त्याज्य नक्षत्र और दिन

नेष्टं ग्रहर्क्षं सकलार्द्धपादग्रासे क्रमात्तर्कगुणेन्दुमासान् ।
पूर्वं परस्तादुभयोस्त्रिघस्रा ग्रस्तेऽस्तगे वाप्युदितेऽर्द्धखण्डे ॥ ३३ ॥

अन्वयः—सकलार्धपादग्रासे क्रमात् तर्कगुणेन्दुमासान् ग्रहर्क्षं नेष्टम् । ग्रस्तेऽस्तगे पूर्वं त्रिघस्रा नेष्टाः । ग्रस्तेऽभ्युदिते परस्तात् (त्रिघस्रा नेष्टाः) । अर्धखण्डे (ग्रासे) उभयोः (पूर्वापरयोः) त्रिघस्राः (त्रित्रिघस्राः) नेष्टाः ॥ ३३ ॥

चन्द्रमा वा सूर्य के बिम्ब का सर्वग्रास हो तो छः महीने तक, अर्द्धग्रास हो तो तीन महीने तक, चतुर्थांश का ग्रास हो तो एक ही महीने वह नक्षत्र त्याज्य होता है जिस नक्षत्र में ग्रहण हुआ हो। अर्थात् उक्त दिनों तक उस नक्षत्र में कोई शुभ कार्य न करे। यदि ग्रहण लगते ही सूर्य या चन्द्र अस्त हो जाय तो पहले तीन दिन में और यदि ग्रसित सूर्य या चन्द्रमा उदय हो तो ग्रहण होने के अनन्तर तीन दिन में कोई शुभ कार्य न करना चाहिए। यदि अर्द्धग्रास हो तो तीन दिन पहले और तीन दिन पश्चात् और ग्रहण का दिन भी शुभ कर्मों में त्यागना चाहिए ॥ ३३ ॥

त्याज्य नक्षत्र और योग आदि

जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपातभद्रा-
वैधृत्यमापितृदिनानि तिथिक्षयर्द्धी ।
न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्धपाता
विष्कुम्भवज्रघटिकात्रयमेव वर्ज्यम् ॥ ३४ ॥
परिघार्धं पञ्च शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः ।
व्याघाते नवनाड्यश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु ॥ ३५ ॥

अन्वयः—जन्मर्क्षमासतिथयः (वर्ज्याः), व्यतिपातभद्रावैधृत्यमापितृदिनानि (वर्ज्यानि), तिथिक्षयर्धी (वर्ज्ये), न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्धपाताः (वर्ज्याः), विष्कुम्भवज्रघटिकात्रयं एव वर्ज्यम् । सर्वेषु कर्मसु परिघार्धं (वर्ज्यम्), शूले पञ्च, गण्डातिगण्डयोः षट्, व्याघाते नव नाड्यः वर्ज्याः ॥ ३४-३५ ॥

जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मतिथि, व्यतीपातयोग, भद्रा, वैधृतियोग, अमावास्या, माता-पिता के मरने की तिथि, क्षयतिथि, वृद्धितिथि, क्षयमास, अधिमास, कुलिक, अर्द्धयाम और महापात योग सम्पूर्ण शुभ कार्यों में त्याज्य हैं। विष्कुम्भ और वज्र के तीन तीन दण्ड परिघयोग का पूर्वार्द्ध, शूलयोग के प्रथम पाँच दण्ड, गण्ड और अतिगण्ड के छः छः दण्ड और व्याघात योग के नवदण्ड सम्पूर्ण शुभ कार्यों में वर्जनीय हैं ।। ३४-३५ ।।

पक्षरन्ध्रतिथि और उनका परिहार

वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ त्यजेत् ।
वस्वङ्कमनुतत्त्वाशा शरा नाडीः पराः शुभाः ।। ३६ ।।

अन्वयः—वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ (क्रमेण) वस्वङ्कमनुतत्त्वाशाः शराः नाडीः त्यजेत्, पराः शुभाः (भवन्ति) ।। ३६ ।।

चौथि, छठि, अष्टमी, नवमी, द्वादशी और चतुर्दशी इन तिथियों की पक्षरंध्र संज्ञा है। इनमें कोई शुभ कार्य न करे। किन्तु यदि कोई आवश्यक कार्य हो तो चौथि के आठ दण्ड, छठि के नव, अष्टमी के चौदह, नवमी के चौबिस, द्वादशी के दश और चतुर्दशी के पाँच दण्ड त्याग दे, शेष सब शुभ हैं ।। ३६ ।।

कुलिक आदि दुष्ट मुहूर्त्त

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः ।
वाराद्द्विघ्ने क्रमान्मन्दे बुधे जीवे कुजे क्षणः ।। ३७ ।।

अन्वयः—वारात् मन्दे बुधे, जीवे, द्विघ्ने (सति) क्रमात् कुलिकः, कालवेला यमघण्टः, कण्टकः, क्षणः, (मुहूर्तः स्यात्) ।। ३७ ।।

जिस दिन कुलिकादि दोषों का विचार करना हो उस दिन से शनैश्चर, बुध, बृहस्पति और मंगल तक गिनने से जितनी संख्या हों उनको दो से गुणा करे। उसी संख्यावाला मुहूर्त्त क्रम से कुलिक, कालवेला, यमघण्ट और कण्टक दोष होता है। यथा रविवार को ये दोष विचारना है तो रविवार से शनैश्चर तक सात संख्या हुईं। इसको दो से गुण दिया, चौदह हुए, यही चौदहवाँ मुहूर्त्त कुलिक दोष हुआ। रविवार से बुधवार तक गिना तो चार हुए, इसको दो से गुणा तो आठ हुए, यही आठवाँ मुहूर्त्त कालवेला हुआ। ऐसे ही बृहस्पति तक गिना तो पाँच हुए, इनको दो से गुणा तो दश हुए, यही दशवाँ मुहूर्त्त यमघण्ट हुआ। ऐसे ही मंगल तक

गिनने से तीन संख्या हुई। इसको दो से गुणा तो छः हुए, यही छठा मुहूर्त्त कंटक दोष हुआ। ऐसे ही अन्य दिनों से उक्त दिनों तक गणना करने से कुलिकादि स्पष्ट होंगे। दिन के सोलहवें अंश को मुहूर्त्त कहते हैं। कुलिक मुहूर्त्त में शुभ कर्म करने से सर्वथा नाश, यमघण्ट में दरिद्रता, कालवेला में मृत्यु और कंटक में विघ्न होता है। परन्तु ये रात्रि में दूषित नहीं हैं। यदि अति आवश्यक कार्य हो तो इन दोषों का उत्तरार्द्ध त्यागना चाहिए॥ ३७॥

कुलिक आदि दुष्टमुहूर्त्तचक्र

	रविवार	सोमवार	मंगल	बुधवार	बृहस्पति	शुक्रवार	शनैश्चर	वार
मुहूर्त्त	१४	१२	१०	८	६	४	२	कुलिक
मुहूर्त्त	८	६	४	२	१४	१२	१०	कालवेला
मुहूर्त्त	१०	८	६	४	२	१४	१२	यमघण्ट
मुहूर्त्त	६	४	२	१४	१२	१०	८	कण्टक

प्रकारान्तर से वर्जित मुहूर्त्त

सूर्ये षट्स्वरनागदिङ्मनुमिताश्चन्द्रेऽब्धिषटकुञ्जरां-
कार्का विश्वपुरन्दराः क्षितिसुते द्वयग्न्यब्धितर्का दिशः।
सौम्ये द्वयब्धिगजाङ्कदिङ्मनुमिता जीवे द्विषड्भास्कराः
शक्राख्यास्तिथयः कलाश्च भृगुजे वेदेषु तर्कग्रहाः॥ ३८॥
दिग्भास्करा मनुमिताश्च शनौ शशिद्वि-
नागा दिशो भवदिवाकरसंमिताश्च।
दुष्टः क्षणः कुलिककण्टककालवेला-
स्स्युश्चार्धयामयमघण्टगताः कलांशाः॥ ३९॥

अन्वयः—सूर्ये षट् स्वरनागदिङ्मनुमिताः, चन्द्रेऽब्धिषट्कुञ्जराङ्कार्का विश्वपुरन्दराः, क्षितिसुते द्वयग्न्यब्धितर्काः दिशः, सौम्ये द्वयब्धिगजाङ्कदिङ्मनुमिताः, जीवे द्विषड्भास्कराः, शक्राख्याः, तिथयः कलाः च भृगुजे वेदेषुतर्कग्रहाः दिग्भास्कराः मनुमिताः च शनौ शशिद्विनागा दिशा भवदिवाकरसंमिता च कलांशाः (मुहूर्ताः) दुष्टः क्षणः स्यात् कुलिककण्टककालवेलाः स्युः। अर्धयामयमघण्टगताः स्युः॥ ३८-३९॥

रविवार को छठा, सातवाँ, आठवाँ, दशवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त; सोमवार को चौथा, छठा, आठवाँ, नवाँ, बारहवाँ, तेरहवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त; मंगल को दूसरा, तीसरा, चौथा, छठा, दशवाँ मुहूर्त्त; बुधवार को दूसरा, चौथा,

आठवाँ, नवाँ, दशवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त; बृहस्पति को दूसरा, छठा, बारहवाँ, चौदहवाँ, पन्द्रहवाँ, सोलहवाँ मुहूर्त्त; शुक्रवार को चौथा, पाँचवाँ, छठा, नवाँ, दशवाँ, बारहवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त और शनैश्चर को पहिला, दूसरा, आठवाँ, दशवाँ, गेरहवाँ, बारहवाँ मुहूर्त्त निन्दित होता है। इन्हीं मुहूर्त्तों में कोई दुष्टक्षण, कोई कुलिक, कंटक, कालवेला, अर्द्धयाम और यमघण्ट होते हैं। दिनमान का सोलहवाँ भाग एक मुहूर्त्त है ॥ ३८-३९ ॥

वर्जित मुहूर्त्तों का चक्र

रविवार	६	७	८	१०	१४		
सोमवार	४	६	८	९	१२	१३	१४
मंगल	२	३	४	६	१०		
बुधवार	२	४	८	९	१०	१४	
बृहस्पति	२	६	१२	१४	१५	१६	
शुक्रवार	४	५	६	९	१०	१२	१४
शनैश्चर	१	२	८	१०	११	१२	

देशभेद से होलाष्टक का निषेध

विपाशेरावतीतीरे शतद्र्वाश्च त्रिपुष्करे।
विवाहादिशुभे नेष्टं होलिकाप्राग्दिनाष्टकम् ॥ ४० ॥

अन्वयः—विपाशेरावतीतीरे, शतद्र्वाः (तीरे) त्रिपुष्करे (देशे) विवाहादिशुभे होलिकाप्राग्दिनाष्टकं नेष्टम् ॥ ४० ॥

विपाशा, इरावती और शतद्रु नदी के तट पर बसे हुए देशों में और त्रिपुष्कर देश में विवाह आदि शुभ कार्यों में होलिकादहन से पूर्व आठ दिन निषिद्ध हैं, अन्य देशों में नहीं ॥ ४० ॥

चन्द्रमा अनुकूल होने से दुष्ट योग भी शुभ होते हैं

मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभाञ्जगुः।
केचिद्यामोत्तरं चान्ये यात्रायामेव निन्दितान् ॥ ४१ ॥

अन्वयः—इन्दौ शस्ते मृत्युक्रकचदग्धादीन् (योगान्) शुभान् जगुः। केचित् यामोत्तरं (शुभान् जगुः)। अन्ये यात्रायामेव निन्दितान् जगुः ॥ ४१ ॥

कोई आचार्य चन्द्रमा के शुभ रहते मृत्यु योग, क्रकचयोग, दग्धयोग, विषाख्य और हुताशनाख्य योग को शुभ कहते हैं, और कोई कहते हैं कि एक पहर के बाद ये सब योग शुभ होते हैं। कोई तो कहते हैं कि ये यात्रा में ही निन्दित हैं ॥ ४१ ॥

अन्य परिहार

अयोगे सुयोगोपि चेत्स्यात्तदानीमयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति ।
परे लग्नशुद्धा कुयोगादिनाशं दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम् ॥ ४२ ॥

अन्वयः—चेत् अयोगे सुयोगोऽपि स्यात् तदानीं एष (सुयोगः) अयोगं निहत्य सिद्धिं तनोति, परे (आचाय) लग्नशुद्धया कुयोगादिनाशं (वदन्ति), विष्टिपूर्वं दिनार्धोत्तरं शस्तं (कथयन्ति) ॥ ४२ ॥

यदि ककचादि कोई दुष्टयोग हो और उसी काल में कोई सिद्धादि शुभ योग भी हो तो वह शुभ योग उस ककचादि के फल को नष्ट करके कार्य की सिद्धि करता है। कोई आचार्य कहते हैं कि लग्न शुद्ध हो तो उसी से संपूर्ण कुयोगों का नाश होता है। भद्रा आदि मध्याह्न के अनन्तर शुभ होते हैं।

भद्रा आदि का परिहार

"विष्टिरंगारकश्चैवव्यतीपातश्चवैधृतिः ।
प्रत्यरं जन्मनक्षत्रं मध्याह्नात्परतः शुभम् ॥"

भद्रा, मंगल दिन, व्यतीपात, वैधृति, प्रत्यरितारा, जन्मनक्षत्र ये सब मध्याह्न के अनन्तर शुभ होते हैं ॥ ४२ ॥

भद्राकाल

शुक्ले पूर्वार्द्धेऽष्टमीपञ्चदश्योर्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्द्धे ।
कृष्णेऽन्त्यार्द्धे स्यात्तृतीयादशम्योः पूर्वे भागे सप्तमीशंभुतिथ्योः ॥ ४३ ॥

अन्वयः—शुक्ले अष्टमी पञ्चदश्योः पूर्वार्धे, (तथा) एकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे भद्रा (भवति)। कृष्णे तृतीयादशम्योः अन्त्यार्धे, सप्तमीशम्भुतिथ्योः पूर्वे भागे भद्रा (भवति) ॥ ४३ ॥

शुक्लपक्ष की अष्टमी और पूर्णमासी के पूर्वार्द्ध में तथा एकादशी और चौथि के उत्तरार्द्ध में भद्रा होती है। कृष्णपक्ष की तीज और दशमी के उत्तरार्द्ध में तथा सप्तमी और चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध में भद्रा होती है ॥ ४३ ॥

भद्रा के मुख और पुच्छ का विचार

पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादिघट्यः शरा
विष्टेरास्यमसद्गजेन्दुरसरामाद्र्यश्विबाणाब्धिषु ।
यामेष्वन्त्यघटीत्रयं शुभकरं पुच्छं तथा वासरे
विष्टिस्तिथ्यपरार्धजा शुभकरी रात्रौ च पूर्वार्धजा ॥ ४४ ॥

अन्वयः—पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादिघटयः शराः विष्टेः आस्यं (प्रोक्तं तत्) असत्। गजेन्दुरसरामाद्रयश्विबाणाब्धिषु यामेषु अन्त्यघटीत्रयं विष्टेः पुच्छं (प्रोक्तं तत्) शुभकरं। तिथ्यपरार्धजा विष्टिः वासरे तथा पूर्वार्धजा विष्टिः रात्रौ शुभकरी (भवति) ॥ ४४ ॥

चौथि, अष्टमी, एकादशी, पूर्णमासी, तीज, सप्तमी, दशमी और चतुर्दशी, इन तिथियों में क्रम से पाँचवें, दूसरे, सातवें, चौथे, आठवें, तीसरे, छठे और पहिले, इन पहरों की पूर्व की पाँच घड़ी भद्रा का मुख है वह अशुभ होता है। और इन्हीं उक्त तिथियों में क्रम से आठवें, पहिले, छठे, तीसरे, सातवें, दूसरे, पाँचवें और चौथे, इन पहरों के अन्त की तीन घड़ी भद्रा की पुच्छ हैं वह शुभ फलदायक होती हैं। तिथि के उत्तरार्द्ध में होनेवाली भद्रा यदि दिन में हो और तिथि के पूर्वार्द्ध में होनेवाली भद्रा यदि रात्रि में हो तो शुभ होती है ॥ ४४ ॥

भद्रा का निवास और फल

कुम्भकर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात्त्रयेऽलिगे।
स्त्रीधनुर्जूकनक्रेऽधो भद्रा तत्रैव तत्फलम् ॥ ४५ ॥

अन्वयः—कुम्भकर्कद्वये अब्जे [चन्द्रे] मर्त्ये [मृत्युलोके], [तथा] अजात् [मेषात्] त्रये अलिगे [अब्जे] स्वर्गे, (तथा) स्त्रीधनुर्जूकनक्रे [अब्जे] अधः [पाताले] भद्रा तिष्ठति। (यत्र तिष्ठति) तत्रैव तत्फलं (भवति) ॥ ४५ ॥

यदि चन्द्रमा कुम्भ, मीन, कर्क वा सिंह में हो तो भद्रा मृत्यलोक में, मेष, वृष, मिथुन वा वृश्चिक में हो तो स्वर्गलोक में और कन्या, तुला, धनु वा मकर में हो तो पाताललोक में भद्रा का निवास जानना। जिस लोक में भद्रा का निवास होता है उसी लोक में उसका शुभाशुभ फल भी होता है ॥ ४५ ॥

शुक्रास्त आदि में वर्जनीय क्रिया

वाप्यारामतडागकूपभवनारम्भप्रतिष्ठे व्रता-
रम्भोत्सर्गवधूप्रवेशनमहादानानि सोमाष्टके।
गोदानाग्रयणप्रपाप्रथमकोपाकर्मवेदव्रतं
नीलोद्वाहमथातिपन्नशिशुसंस्कारान्सुरस्थापनम् ॥ ४६ ॥
दीक्षामौञ्जिविवाहमुण्डनमपूर्वं देवतीर्थेक्षणं
संन्यासाग्निपरिग्रहौ नृपतिसंदर्शाभिषेकौ गमम्।
चातुर्मास्यसमावृती श्रवणयोर्वेधं परीक्षां त्यजेद्
वृद्धत्वास्तशिशुत्वइज्यसितयोर्न्यूनाधिमासे तथा ॥ ४७ ॥

अन्वयः—इज्यसितयोः वृद्धत्वास्तशिशुत्वे (तथा) न्यूनाधिमासे वाप्यारामतडाग-कूपभवनारम्भप्रतिष्ठे, व्रतारम्भोत्सर्गवधूप्रवेशनमहादानानि, सोमाष्टके गोदानाग्रयण-प्रपाप्रथमकोपाकर्म, वेदव्रतम्, नीलोद्वाहं, अथ अतिपन्नशिशुसंस्कारान्, सुरस्थापनम्, दीक्षामौञ्जिविवाहमुण्डनम्, अपूर्वं देवतीर्थेक्षणम्, संन्यासाग्निपरिग्रहौ नृपतिसंदर्शाभिषेकौ, गमम्, चातुर्मास्यसमावृती, श्रवणयोर्वेधं, परीक्षां त्यजेत् ॥ ४६-४७ ॥

बावली, बगीचा, तड़ाग, कूप और गृह के बनाने का प्रारम्भ और स्थापना (गृहप्रवेश); किसी व्रत का आरम्भ वा उद्यापन, वधूप्रवेश, तुलादान आदि महादान, सोमयज्ञ, अष्टकाश्राद्ध, केशान्तकर्म, नवान्न, पौशाला, प्रथम श्रावणीकर्म, वेदारम्भ, काम्य वृषोत्सर्ग पिछड़े हुए जातकर्म नामकर्म आदि संस्कार, देवताओं का स्थापन, मन्त्रग्रहण, यज्ञोपवीत, विवाह, मुण्डन, किसी देवता का प्रथम दर्शन, तीर्थयात्रा, संन्यास, अग्निहोत्रादि के लिए अग्नि का ग्रहण करना, राजा का प्रथम दर्शन, राजा का अभिषेक, यात्रा, चातुर्मास्य नामक योग समावर्तन कर्म, कर्णछेदन, इन सब कर्मों को बृहस्पति और शुक्र के वृद्ध, बाल वा अस्त रहते, मलमास और क्षयमास में न करना चाहिए ॥ ४६-४७ ॥

सिंह और मकर राशि में स्थित बृहस्पति का दोष

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थजीवे वर्ज्यं केचिद्वक्रगे चातिचारे ।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपि पक्षे प्रोचुस्तद्वद्दन्तरत्नादिभूषाम् ॥ ४८ ॥

अन्वयः—अस्ते वर्ज्यं (कर्म) सिंहनक्रस्थजीवेऽपि वर्ज्यम् । केचित् [आचार्याः] वक्रगे च (तथा) अतिचारे [जीवे] गुर्वादित्ये, विश्वघस्रे पक्षेऽपि (वर्ज्यं) तद्वत् दन्त-रत्नादिभूषां (च) (वर्ज्यं) प्रोचुः ॥ ४८ ॥

बृहस्पति वा शुक्र के अस्त में जिन शुभ कर्मों का निषेध किया है वे सब कर्म सिंह वा मकर राशियों में बृहस्पति के रहते भी वर्ज्य हैं । कोई आचार्य कहते हैं कि बृहस्पति के वक्री रहते वा अतिचार करते और गुर्वादित्य अर्थात् सूर्य और बृहस्पति के एकत्र रहते पूर्वोक्त (वाप्यारामेत्यादि) शुभ कर्म न करे । उसी तरह दाँत और रत्न से बने हुए आभूषणों को भी बृहस्पति वा शुक्र के अस्तादि काल में न धारण करे ॥ ४८ ॥

सिंहस्थ बृहस्पतिदोष का परिहार

सिंहे गुरौ सिंहलवे विवाहो नेष्टोऽथ गोदोत्तरतश्च यावत् ।
भागीरथी याम्यतटं च दोषो नान्यत्र देशे तपनेऽपि मेषे ॥ ४९ ॥

अन्वयः—सिंहे सिंहलवे गुरौ (सति) विवाहः नेष्टः, अथ गोदोत्तरतः भागीरथी याम्यतटं (यावत्) दोषः । अन्यत्र देशे न (दोषः) । मेषे तपने [सूर्ये] अपि (दोषः न) ॥ ४९ ॥

सिंहराशि में सिंह ही के नवांश में बृहस्पति स्थित हो तो विवाह इष्ट नहीं है, अर्थात् सिंह के नवांश को छोड़कर सिंह राशि के शेष अंशों में बृहस्पति के रहते विवाह करने का निषेध नहीं है । अथवा सिंह राशि में बृहस्पति के रहते गोदावरी नदी के उत्तर किनारे से लेकर गङ्गा के दक्षिण किनारे तक के देशों में विवाहादि शुभ कार्य करने में दोष है, अन्य देशों में नहीं । अथवा सिंह राशि में बृहस्पति के रहते भी मेष में सूर्य स्थित हो तो विवाहादि शुभकर्म करने में दोष नहीं है ॥ ४९ ॥

सिंहस्थ गुरुदोष और उसका परिहार

मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः ।
गङ्गागोदान्तरं हित्वा शेषाङ्घ्रिषु न दोषकृत् ॥ ५० ॥
मेषेऽर्के सन् व्रतोद्वाहौ गङ्गागोदान्तरेऽपि च ।
सर्वः सिंहगुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौडगुर्जरे ॥ ५१ ॥

अन्वयः—मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः । शेषाङ्घ्रिषु गङ्गागोदान्तरं हित्वा दोषकृत् न (भवति) । मेषेऽर्के गंगागोदान्तरेऽपि सद्व्रतोद्वाहौ (भवेताम्) । कलिंगे गौडगुर्जरे (देशे) सर्वः सिंहगुरुः वर्ज्यः ॥ ५०-५१ ॥

मघा नक्षत्र के प्रथम चरण से लेकर पूर्वाफाल्गुनी के प्रथमचरणपर्यन्त पाँच चरणों में बृहस्पति सब देशों में निन्दित है । शेष चरणों में अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी के दूसरे चरण से लेकर उत्तराफाल्गुनी के प्रथमचरणपर्यन्त चार चरणों में गङ्गा और गोदावरी के मध्य में बसे हुए देशों को छोड़कर अन्य देशों में दोषकारक नहीं है । यदि सूर्य मेष में हो और बृहस्पति सिंह राशि में हो तो गङ्गा और गोदावरी के मध्यवर्ती देशों में भी यज्ञोपवीत और विवाह शुभ है । परन्तु कलिङ्ग, गौड़, गुर्जर इन देशों में सम्पूर्ण सिंहस्थ बृहस्पति वर्जनीय है ॥ ५०-५१ ॥

मकर में स्थित बृहस्पति के परिहार

रेवापूर्वे गण्डकीपश्चिमे च शोणस्योदग्दक्षिणे नीच इज्यः ।
वर्ज्यो नायं कौङ्कणे मागधे च गौडे सिन्धौ वर्जनीयः शुभेषु ॥ ५२ ॥

अन्वयः—रेवापूर्वे, गण्डकीपश्चिमे, शोणस्य उदक्दक्षिणे [तीरे] नीचः इज्यः न वर्ज्यः। कौंकणे, मागधे, गौडे च (तथा) सिन्धौ (देशे) अयं शुभेषु वर्जनीयः (स्यात्) ॥ ५२ ॥

नर्मदा नदी के पूर्व, गण्डकी नदी के पश्चिम और शोणनद के उत्तर तथा दक्षिण देशों में मकरराशिस्थित बृहस्पति विवाहादि शुभ कार्यों में वर्जनीय नहीं है, किन्तु कोङ्कण, मागध, गौड और सिन्धु देश में शुभ कार्यों में वर्जित है ॥ ५२ ॥

लुप्तसंवत्सर दोष और उसका परिहार

गोजान्त्यकुम्भेतरभेऽतिचारगो नो पूर्वराशिं गुरुरेति वक्रितः।
तदा विलुप्ताब्दइहातिनिन्दितः शुभेषु रेवासुरनिम्नगान्तरे ॥ ५३ ॥

अन्वयः—गोजान्त्यकुम्भेतरभे अतिचारगः गुरुः वक्रितः (पुनः) पूर्वराशिं नो एति तदा लुप्ताब्दः। (स) इह रेवासुरनिम्नगान्तरे शुभेषु अतिनिन्दितः (स्यात्) ॥ ५३ ॥

वृष, मेष, मीन और कुम्भ के अतिरिक्त अन्य किसी राशि में स्थित बृहस्पति उस राशि से अगली राशि में अतिचार करके गया हो और फिर वक्री होकर पूर्वराशि में जिस वर्ष में न आया हो वह लुप्तसंवत्सर कहा जाता है। वह विवाहादि शुभकार्य में अतिशय निन्दित है, परन्तु नर्मदा और गंगा के मध्य ही में निन्दित है ॥ ५३ ॥

होरासिद्धि के लिये वारप्रवृत्ति

पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैर्युतोनास्तिथयो दिनार्धतः।
ऊनाधिकास्तद्विवरोद्भवैः पलैरूर्ध्वं तथाऽधो दिनपप्रवेशनम् ॥ ५४ ॥

अन्वयः—पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैः युतोनाः तिथयः (पञ्चदश) यदि दिनार्धतः ऊनाधिका (तदा) तद्विवरोद्भवैः पलैः ऊर्ध्वं तथा अधः दिनप्रवेशनम् (स्यात्) ॥ ५४ ॥

लङ्का से लेकर उज्जयिनी और कुरुक्षेत्रादि देश तथा सुमेरुपर्वतपर्यन्त भूमध्यरेखा कही जाती है। जिस देश में वारप्रवृत्ति जानना हो वह देश उक्त रेखा से पूर्व या पश्चिम जितने योजन पर हो, उन योजनों में उन्हीं का चतुर्थांश घटाकर जितने शेष रहें उन्हें पल मानकर, इष्ट देश यदि रेखा से पश्चिम हो तो पन्द्रह में जोड़े और पूर्व हो तो घटावे। यदि वे जुड़े या घटे हुए पन्द्रह इष्ट दिनमानार्ध के बराबर हों तो सूर्योदय काल ही में और यदि न्यून या अधिक हों तो दोनों का अन्तर करे। उस अन्तर के जितने पल हों, यदि न्यून हों तो उतने ही पल सूर्योदय से पर और अधिक हों तो

उतने ही पल सूर्योदय से पूर्व, वारप्रवृत्ति होती है। उदाहरण—कुरुक्षेत्र से लखनऊ ४८ योजन पूर्व है। इन योजनों का चतुर्थांश १२ इन्हीं ४८ में घटाया तो शेष ३६ पल हुए। उक्त योजन मध्यरेखा से पूर्व होने के कारण इन ३६ पलों को १५ दण्ड में घटाया तो १४ दण्ड २४ पल शेष रहे। ये दंड-पल इष्ट दिनमानार्द्ध १७।२ दण्डादि से न्यून होने के कारण, इन दोनों में जो अन्तर है अर्थात् २ दण्ड ३८ पल, सूर्योदय होने के पश्चात् लखनऊ में वारप्रवृत्ति जाननी चाहिए ॥ ५४॥

कालहोरा

वारादेर्घटिका द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः।
सैकास्तष्टा नगैः कालहोरेशा दिनपात् क्रमात् ॥ ५५॥

अन्वयः—वारादेः घटिकाः द्विघ्नाः, स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः, सैकाः, नगै तष्टाः, दिनपात् कमात् कालहोरेशाः (भवन्ति) ॥ ५५॥

वारप्रवृत्तिकाल से लेकर इष्टकालपर्यन्त जितने दण्डादि हों उनको दो से गुणा करके दो जगह रक्खे। एक स्थान में पाँच का भाग देकर जो शेष रहे उसे दूसरे स्थान में घटावे। जो शेष रहे उसमें एक और जोड़ दे तब सात का भाग देने से जो शेष रहे वह दिवस के स्वामी के क्रम से कालहोरेश होगा। उदाहरण—यदि रविवार को वारप्रवृत्ति से लेकर इष्टकाल पर्यन्त ६ दण्ड हों, २ से गुणा तो १२ हुए। इनको दो स्थानों में रखकर एक स्थान में ५ का भाग दिया, २ शेष रहे, उन्हें दूसरे स्थान में घटाया तो १० शेष रहे। एक जोड़ा तो ११ हुए। उनमें ७ का भाग दिया तो ४ शेष रहे। रविवार से गिना तो चौथा बुध हुआ यही उस काल में कालहोरेश हुआ ॥ ५५॥

कालहोरा का प्रयोजन

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लङ्घ्यः पारिघश्चापिदण्डः ॥ ५६॥

अन्वयः—वारे प्रोक्तं (कर्म) तस्य (वारस्य) कालहोरासु कुर्यात्। (तथा) धिष्ण्ये प्रोक्तं अस्य स्वामितिथ्यंशके (मुहूर्ते) कुर्यात्। क्षणेषु (मुहूर्त्तेषु) दिक्शूलादि (अवश्यं) चिन्त्यम्। पारिघः दण्डः अपि नैव उल्लंघ्यः ॥ ५६॥

जो कार्य जिस वार में विहित है वह आवश्यक हो तो उसके कालहोरा में करने को महर्षियों ने कहा है, और जो कार्य जिस नक्षत्र में विहित है वह

उस नक्षत्र के स्वामी के मुहूर्त्त में करे। इन मुहूर्तों में भी दिक्शूल, वारशूल, नक्षत्रशूल आदि का विचार करना चाहिए, और परिघ दण्ड का उल्लंघन तो किसी तरह भी न करे ॥ ५६ ॥

मन्वादि और युगादि तिथियाँ

मन्वाद्यास्त्रितिथी मधौ तिथिरवी ऊर्जे शुचौ दिकतिथी
ज्येष्ठेऽन्त्ये च तिथिस्त्विषे नव तपस्यश्वाः सहस्ये शिवाः।
भाद्रेऽग्निश्च सिते त्वमाष्टनभसः कृष्णे युगाद्याः सिते
गोऽग्नी बाहुलराधयोर्मदनदर्शौ भाद्रमाघासिते ॥ ५७ ॥
इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ शुभाशुभप्रकरणं समाप्तम् ॥ १ ॥

अन्वयः—मधौ सिते त्रितिथी, ऊर्जे सिते तिथिरवी, शुचौ सिते दिक्तिथी, ज्येष्ठे अन्त्ये च तिथिः, इषे सिते नव, तपसि सिते अश्वाः, सहस्ये सिते शिवाः भाद्रे सिते अग्निः, नभसः कृष्णे अमा अष्टमी मन्वाद्या भवन्ति। (तथा) बाहुलराधयोः सिते गोग्नी, भाद्रमाघासिते मदनदर्शौ युगाद्या भवन्ति ॥ ५७ ॥

चैत्रशुक्ल तीज और पूर्णमासी, कार्त्तिकशुक्ल पूर्णमासी और द्वादशी, आषाढ़शुक्ल दशमी और पूर्णमासी, ज्येष्ठ और फाल्गुन की पूर्णमासी, आश्विन-शुक्ल नवमी, माघशुक्ल सप्तमी, पौषशुक्ल एकादशी, भाद्रपदशुक्ल तीज, श्रावणशुक्ल अमावस और अष्टमी, ये मन्वादि तिथियाँ हैं। कार्त्तिकशुक्ल नवमी, वैशाखशुक्ल तीज, भाद्रपदकृष्ण त्रयोदशी और माघकृष्ण अमावस ये युगादि तिथियाँ हैं। इनमें विवाहादि शुभकर्म न करे ॥ ५७ ॥

नक्षत्रप्रकरण

—:०:—

नक्षत्रों के स्वामी

नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृद्रुद्रादितीज्योरगा
ऋक्षेशाः पितरो भगोऽर्यमरवी त्वष्टा समीरः क्रमात्।
शक्राग्नी खलुमित्र शक्रनिर्ऋतिः क्षीराणि विश्वेविधि-
र्गोविन्दोवसुतोयपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः ॥ १ ॥

१—विवाहप्रकरण में कहेंगे।

अन्वयः—नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृद्रुद्रादितीज्योरगाः, पितरः, भगः, अर्यमरवी, त्वष्टा, समीरः, शक्राग्नी, मित्रः, शक्रः निर्ऋतिः, क्षीराणि, विश्वे, विधिः, गोविन्दः, वसुतोयपाजचरणाहिर्बुध्न्यपषाभिधाः (एते) क्रमात् ऋक्षेशाः (ज्ञेयाः) ॥ १ ॥

अश्विनी नक्षत्र के स्वामी अश्विनीकुमार, भरणी के यमराज, कृत्तिका के अग्नि, रोहिणी के ब्रह्मा, मृगशिरा के चन्द्रमा, आर्द्रा के रुद्र, पुनर्वसु के अदिति, पुष्य के बृहस्पति, आश्लेषा के सर्प, मघा के पितर, पूर्वाफाल्गुनी के भग देवता अर्थात् सूर्यविशेष, उत्तराफाल्गुनी के अर्यमा अर्थात् सूर्यविशेष, हस्त के सूर्य, चित्रा के विश्वकर्मा, स्वाती के वायु, विशाखा के इन्द्र और अग्नि, अनुराधा के मित्र अर्थात् सूर्यविशेष, ज्येष्ठा के इन्द्र, मूल के के राक्षस, पूर्वाषाढ़ के जल, उत्तराषाढ़ के विश्वेदेव, अभिजित् के ब्रह्मा, श्रवण के विष्णु, धनिष्ठा के वसु, शतभिष के वरुण, पूर्वाभाद्रपद के अजचरण अर्थात् रुद्रविशेष, उत्तराभाद्रपद के अहिर्बुध्न्य अर्थात् रुद्रविशेष, रेवती के पूषा अर्थात् सूर्यविशेष स्वामी हैं ॥ १ ॥

नक्षत्र-स्वामियों का चक्र

अ०	अ०कु०	पुन०	अदिति	हस्त	सूर्य	मूल	राक्षस	श०	वरुण
भ०	यम	पुष्य	बृहस्प०	चित्रा	त्वष्टा	पू०	जल	पू०	अजच०
कृ०	अग्नि	अश्ले०	सर्प	स्वा०	वायु	उ०	विश्वे०	उ०	अ० बु०
रो०	ब्रह्मा	मघा	पितर	वि०	इन्द्र अ०	अ०	विधि	रे०	पूषा
मृ०	चन्द्रमा	पू०	भग	अनु०	मित्र	श्र०	विष्णु	×	×
आ०	रुद्र	उ०	अर्यमा	ज्ये०	इन्द्र	ध०	वसु	×	×

नक्षत्रों की संज्ञा

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥ २ ॥

अन्वयः—उत्तरात्रयरोहिण्यः भास्करः च ध्रुवं [ध्रुवसंज्ञं] स्थिरं [स्थिरसंज्ञञ्च] तत्र स्थिरं [स्थिरकर्म] बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये (भवति) ॥ २ ॥

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी ये चार नक्षत्र और रविवार इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमें स्थिर कार्य, बीज बोना, घर बनवाना व शान्ति करना, गाँव के समीप बगीचा लगवाना और आदि शब्द से मृदुसंज्ञक नक्षत्रों का भी कार्य करना चाहिए ॥ २ ॥

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—स्वात्यादित्ये श्रुतेः त्रीणि (तथा) चन्द्रः चरं, चलं च (संज्ञं ज्ञेयम्) तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिका-गमनादिकम् (शुभं भवति) ॥ ३ ॥

स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष ये पाँच नक्षत्र और सोमवार इनकी चर और चल संज्ञा है। इनमें हाथी, घोड़े आदि पर चढ़ना, बगीचा लगाना, यात्रा करना, और आदि शब्द से लघुसंज्ञक नक्षत्रों का भी कार्य करना शुभ है ॥ ३ ॥

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥ ४ ॥

अन्वयः—पूर्वात्रयं याम्यमघे तथा कुजः, उग्रं क्रूरं (च ज्ञेयम्) तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि, विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥ ४ ॥

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा, ये पाँच नक्षत्र और मंगल दिन, इनकी क्रूर और उग्र संज्ञा है। इनमें मारण, अग्नि का कार्य, शठता का कार्य, विष का कार्य, हथियार का कार्य और आदि शब्द से दारुणसंज्ञक नक्षत्रों का कार्य, ये सब सिद्ध होते हैं ॥ ४ ॥

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥ ५ ॥

अन्वयः—विशाखाग्नेयभे, (तथा) सौम्यः [बुधः], मिश्र (तथा) साधारण स्मृतम्। तत्र अग्निकार्यं, मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥ ५ ॥

विशाखा, कृत्तिका, ये दो नक्षत्र और बुध दिन, इनकी मिश्र और साधारण संज्ञा है। इनमें अग्निहोत्र, साधारण कार्य, वृषोत्सर्ग और आदि शब्द से उग्र भी कार्य, ये सब सिद्ध होते हैं ॥ ५ ॥

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ ६ ॥

अन्वयः—हस्ताश्विपुष्याभिजितः तथा गुरुः, क्षिप्रं लघु (च संज्ञं ज्ञेयम्) तस्मिन् पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिक (शुभं भवति) ॥ ६ ॥

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, ये चार नक्षत्र और बृहस्पति दिन, इनकी क्षिप्र और लघु संज्ञा है। इनमें बाजार का कार्य, स्त्री-सम्भोग, शास्त्रादि का ज्ञान, आभूषणों का बनवाना और पहिनना, चित्रकारी, गाना-

बजाना इत्यादि कला और आदि पद से चरसंज्ञक नक्षत्रों का भी कार्य, वे सब सिद्ध होते हैं ।। ६ ।।

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदु मैत्रं भृगुस्तथा ।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम् ।। ७ ।।

अन्वयः—मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं तथा भृगुः, मृदु मैत्रं (च संज्ञं ज्ञेयम्) तत्र गीताम्बर-क्रीडामित्रकार्यं विभूषणं (सिद्धयति) ।। ७ ।।

मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, ये चार नक्षत्र और शुक्रवार इनकी मृदु और मैत्र संज्ञा है । इनमें गाना, वस्त्र पहिनना स्त्री के साथ क्रीड़ा, मित्र का कार्य, आभूषण पहिनना इत्यादि कार्य सिद्ध होते हैं ।। ७ ।।

मूलेन्द्राद्रीहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम् ।। ८ ।।

अन्वयः—मूलेन्द्राद्रीहिभं तथा सौरिः, तीक्ष्णं, दारुणसंज्ञकं (च ज्ञेयम्) । तत्र अभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकं (सिद्धयति) ।। ८ ।।

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, ये चार नक्षत्र और शनैश्चर दिन, इनकी तीक्ष्ण और दारुण संज्ञा है । इनमें अभिचार, मारण आदि भयानक कर्म, भेद और हाथी-घोड़े आदि का सिखाना, ये कार्य-सिद्ध होते हैं ।। ८ ।।

नक्षत्रों की अधोमुखादि संज्ञा

मूलाहिमिश्रोग्रमधोमुखं भवेदूर्ध्वास्यमार्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवम् ।
तिर्यङ्मुखं मैत्रकरानिलादितिज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषु सत् ।। ९ ।।

अन्वयः—मूलाहिमिश्रोग्रं अधोमुखं, आर्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवं ऊर्ध्वास्यं, मैत्रकरानि-लादितिज्येष्ठाश्विभानि तिर्यङ्मुखं भवेत्, एषु ईदृशकृत्यं सत् ।। ९ ।।

मूल, आश्लेषा, मिश्रसंज्ञक और उग्रसंज्ञक की अधोमुख संज्ञा है । आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, और ध्रुवसंज्ञक नक्षत्रों की ऊर्ध्वमुख संज्ञा है । मृदुसंज्ञक नक्षत्र, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी की तिर्यङ्-मुख संज्ञा है । इन्हीं संज्ञाओं के सदृश कार्य इनमें शुभ होते हैं, अर्थात् अधोमुख संज्ञक नक्षत्रों में कुँआ, बावली तालाब खोदवाना इत्यादि, ऊर्ध्व-मुख नक्षत्रों में राज्याभिषेक, पट्टबन्ध, दुमहला, तिमहला आदि मकान बनवाना और तिर्यङ्मुख नक्षत्रों में हाथी, घोड़े, बैल आदि के कृत्य और यात्रा इत्यादि शुभ हैं ।। ९ ।।

नवीन वस्त्र-आभूषण और चूड़ी आदि धारण करने का मुहूर्त्त

पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्यादित्ये प्रवालरदशंखसुवर्णवस्त्रम् ।
धार्यं विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि रक्तं भौमे ध्रुवादितियुगे सुभगा न दध्यात् ॥१०॥

अन्वयः—पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्यादित्ये, विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि, प्रवालरदशखसुवर्णवस्त्रं धार्यम् । भौमे रक्तं (वस्त्रं धार्यम्) ध्रुवादितियुगे सुभगा न दध्यात् ॥ १० ॥

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य, पुनर्वसु इन नक्षत्रों में और रिक्ता को छोड़ अन्य तिथियों में सोमवार, मंगल, शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में मूँगा, दाँत, शंख और सुवर्ण के आभूषण तथा वस्त्र धारण करना चाहिए। मंगल के दिन लालवस्त्र धारण करना चाहिए। तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुनर्वसु और पुष्य में सधवा स्त्री नवीन वस्त्र इत्यादि न धारण करे। (कोई आचार्य कहते हैं कि शतभिषा नक्षत्र में भी सधवा स्त्री नवीन वस्त्र-आभूषण इत्यादि का धारण और स्नान न करे। यदि ऐसा कार्य भूल से हो तो अपने पति की पूजा करे तो दोष शान्त होता है) ॥ १० ॥

नवीन वस्त्र के जलने आदि का शुभाशुभ फल

वस्त्राणां नवभागकेषु च चतुःकोणेऽमरा राक्षसा
मध्यत्र्यंशगता नरास्तु सदशे पाशे च मध्यांशयोः ।
दग्धे वा स्फुटितेऽम्बरे नवतरे पङ्कादिलिप्ते न स-
द्रक्षोंशे नृसुरांशयोः शुभमसत्सर्वांशके प्रान्ततः ॥ ११ ॥

अन्वयः—वस्त्राणां नवभागकेषु चतुष्कोणे अमरा, मध्यत्र्यंशगताः राक्षसाः तु [पुनः] मध्यांशयोः सदशे पाशे नराः (तत्र) रक्षोंऽशे नवतरे अम्बरे दग्धे स्फुटिते पङ्कादिलिप्ते वा न सत्, नृसुरांशयोः शुभं, प्रान्ततः सर्वांशके असत् ॥ ११ ॥

यदि कदाचित् पहिनने के दिन नवीन वस्त्र कहीं जल जाय, अथवा फट जाय, अथवा गोबर या कीचड़ लग जाय तो उस वस्त्र में नव भागों की कल्पना करके चारों कोणों के भागों में देवताओं की, मध्य के तीन भागों में राक्षसों की और दोनों छोरों के दोनों मध्य भागों में नरों की कल्पना करे। यदि राक्षसभागों में दाहादि हो तो वस्त्र शुभ नहीं होता अर्थात् मरणकारक होता है, और यदि देव-मनुष्यभागों में दाहादि हो तो शुभ होता है, भोग और

पुत्र प्राप्तिकारक होता है । यदि राक्षस, देवता, मनुष्य, इन तीनों के भागों में दाहादि हो तो वह वस्त्र शुभकारक नहीं होता । ऐसा ही विचार, शय्या, आसन, खड़ाऊँ इत्यादि में भी करना चाहिए ॥ ११ ॥

वस्त्रनवधाचक्र

देवता शुभ	राक्षस अशुभ	देवता शुभ
मनुष्य शुभ	राक्षस अशुभ	मनुष्य शुभ
देवता शुभ	राक्षस अशुभ	देवता शुभ

निन्द्यकाल में भी वस्त्रधारण

विप्राज्ञया तथोद्वाहे राज्ञा प्रीत्यार्पितं च यत् ।
निन्द्येऽपि धिष्ण्ये वारादौ धार्यं वस्त्रं जगुर्बुधाः ॥ १२ ॥

अन्वयः—विप्राज्ञया, तथा उद्वाहे, राज्ञा प्रीत्यार्पित च यत् वस्त्र (तत्) धिष्ण्ये वारादौ निन्द्येऽपि धार्यं (इति) बुधाः जगुः ॥ १२ ॥

ब्राह्मण की आज्ञा से, विवाह में और प्रीतिपूर्वक राजा के दिये हुए वस्त्र को निंद्य भी नक्षत्र और वारादि में धारण करना चाहिए, यह पण्डित लोग कहते हैं ॥ १२ ॥

राजदर्शन, मद्यारम्भ और गो-क्रय-विक्रय का मुहूर्त्त

राधामूलमृदुध्रुवर्क्षवरुणक्षिप्रैर्लतापादपा-
रोपोऽथो नृपदर्शनं ध्रुवमृदुक्षिप्रश्रवोवासवैः ।
तीक्ष्णोग्राम्बुपभेषु मद्यमुदितं क्षिप्रान्त्यवह्नीन्द्रभा-
दित्येन्द्राम्बुपवासवेषु हि गवां शस्तः क्रयो विक्रयः ॥ १३ ॥

अन्वयः—राधामूलमृदुध्रुवर्क्षवरुणक्षिप्रैः लतापादपारोपः, अथ ध्रुवमृदुक्षिप्रश्रवोवासवैः नृपदर्शनं, तीक्ष्णोग्रांबुपभेषु मद्यं उदितम्, क्षिप्रांत्यवह्नीन्दुभादित्येन्द्राम्बुपवासवेषु गवां क्रयो विक्रयः शस्तो हि ॥ १३ ॥

विशाखा, मूल, मृदुसंज्ञक अर्थात् चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, ध्रुवसंज्ञक अर्थात् तीनों उत्तरा, रोहिणी, शतभिषा और क्षिप्रसंज्ञक अर्थात् अश्विनी, पुष्य, हस्त इन चौदह नक्षत्रों में लता और वृक्ष लगाना चाहिए । ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक, श्रवण, धनिष्ठा इन तेरह नक्षत्रों में राजा का

दर्शन करना चाहिए। मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, मघा, भरणी, शतभिषा, इन नक्षत्रों में मद्यारम्भ शुभ कहा गया है। अश्विनी, पुष्य, हस्त, रेवती, विशाखा, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, शतभिषा, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में गो-बैल आदि का मोल लेना और बेचना शुभ है ॥ १३ ॥

पशुओं के पालने का मुहूर्त्त

लग्ने शुभे चाष्टमशुद्धिसंयुते रक्षा पशूनां निजयोनिभे चरे।
रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवोध्रुवत्वाष्ट्रेषु यानं स्थितिवेशनं न सत् ॥ १४ ॥

अन्वयः—अष्टमशुद्धिसंयुते शुभे लग्ने, च (तथा) निजयोनिभे, चरे, पशूनां रक्षा सत्। रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवोध्रुवत्वाष्ट्रेषु पशूनां यानं, स्थितिवेशनं न सत् ॥ १४ ॥

शुभ लग्न हो, लग्न से आठवें स्थान में कोई ग्रह न हो और अपनी योनि का नक्षत्र हो (योनि नक्षत्र विवाह प्रकरण श्लो० २५ में कहे गये हैं) तब पशुओं को पालना चाहिए अथवा चर अर्थात् स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, इन नक्षत्रों में पशुओं को पालना चाहिए। चौथि, नवमी, चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस, मंगल दिन, श्रवण, तीनों उत्तरा, रोहिणी और चित्रा नक्षत्र में पशुओं को घर से बाहर ले जाना, गोष्ठ में बाँधना और बाहर से घर में लाना शुभ नहीं है ॥ १४ ॥

औषध और सूचीकर्म का मुहूर्त्त

भैषज्यं सल्लघुमृदुचरे मूलभे द्वयङ्गलग्ने
शुक्रेन्द्विज्ये विदि च दिवसे चापि तेषां रवेश्च।
शुद्धे रिष्फद्युनमृतिगृहे सत्तिथौ नो जने
भेंसूचीकर्माप्यदितिवसुभत्वाष्ट्रामित्राश्विधिष्ण्ये ॥ १५ ॥

अन्वयः—लघुमृदुचरे मूलभे शुक्रेन्द्विज्ये विदि च द्वयङ्गलग्ने, तेषां रवेश्चापि दिवसे, रिष्फद्युनमृतिगृहे शुद्धे, सत्तिथौ, भैषज्यं सत्, जनेभें नो। अदितिवसुभत्वाष्ट्रमित्राश्विधिष्ण्ये सूचीकर्मापि सत् ॥ १५ ॥

अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, मृगशिरा, अनुराधा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, स्वाती, पुनर्वसु, मूल इन नक्षत्रों में; द्विस्वभाव लग्न में; शुक्र, चन्द्रमा, बृहस्पति और बुध लग्न में हों; शुक्र, चन्द्रमा, बृहस्पति, बुध, वा रविवार हो, लग्न से बारहवें, सातवें, आठवें स्थान में कोई ग्रह न हो; रिक्ता और अमावस को छोड़ अन्य शुभ तिथियाँ हों तो औषध का सेवन करना शुभ

है। परन्तु जन्मनक्षत्र न हो। पुनर्वसु, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी इन नक्षत्रों में सिलाई के काम शुभ हैं ॥ १५ ॥

क्रय-विक्रय मुहूर्तों का परस्पर निषेध और क्रयमुहूर्त्त

क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि न।
पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राः क्रये शुभाः ॥ १६ ॥

अन्वयः—क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टः, विक्रयर्क्षे क्रयः अपि न, पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राः क्रये शुभाः ॥ १६ ॥

मोल लेने के मुहूर्त्त में बेचना शुभ नहीं है और बेचने के मुहूर्त्त में मोल लेना शुभ नहीं है। यद्यपि मोल लेनेवाला बेचनेवाले के मुहूर्त्त में मोल नहीं लेगा तो बेचनेवाला किस के हाथ बेचेगा, और बेचनेवाला मोल लेनेवाले के मुहूर्त्त में बेचेगा नहीं तो मोल लेनेवाला क्या मोल लेगा। इस रीति से दोनों कार्य नहीं हो सकते तथापि आवश्यकता के कारण किसी एक के मुहूर्त्त का विचार न करने से दूसरे का कार्य हो सकता है, यही इसका तात्पर्य है। रेवती, शतभिष, अश्विनी, स्वाती, श्रवण, चित्रा ये नक्षत्र मोल लेने में शुभ होते हैं ॥ १६ ॥

विक्रय और विपणि का मुहूर्त्त

पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रद्विकोणे शुभैः
षट्त्र्यायेष्वशुभैर्विना घटतनुं सन्विक्रयः सत्तिथौ।
रिक्ताभौमघटान्विना च विपणिर्मित्रध्रुवक्षिप्रभै-
र्लग्ने चन्द्रसिते व्ययाष्टरहितैः पापैः शुभैर्द्व्यायखे ॥ १७ ॥

अन्वयः—पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे शुभैः केन्द्रत्रिकोणे, अशुभैः षट्त्र्यायेषु (स्तिथैः) घटतनुं विना, सत्तिथौ विक्रयः सत्, रिक्ताभौमघटान् विना, च मित्रध्रुवक्षिप्रभैः चन्द्रसिते लग्ने, पापैः व्ययाष्टरहितैः, शुभैः द्व्यायखे, विपणिः सत् ॥ १७ ॥

तीनों पूर्वा, विशाखा, कृत्तिका, आश्लेषा और भरणी नक्षत्र में लग्न से पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, दूसरे, पाँचवें और नवें स्थान में शुभग्रह हों, छठें, तीसरे, गेरहवें स्थान में अशुभ ग्रह हों ऐसे लग्न में, कुंभ को छोड़ अन्य लग्नों में और शुभ तिथियों में किसी वस्तु का बेचना शुभ होता है। चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, इन नक्षत्रों में, चौथि, नवमी, चतुर्दशी, मङ्गल दिन, कुम्भ लग्न को छोड़ अन्य

तिथि, दिन और लग्नों में, चन्द्रमा और शुक्र के लग्न में रहते, बारहवें आठवें स्थान में पापग्रहों के न रहते, दूसरे, गेरहवें, दशवें स्थान में शुभग्रहों के रहते बाजार का कार्य (बेचना, मोल लेना इत्यादि) शुभ है ॥ १७ ॥

घोड़ा और हाथी के कृत्य का मुहूर्त्त

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम् ।
स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकृत्यं कुर्यान्मृदुक्षिप्रचरेषुविद्वान् ॥ १८ ॥

अन्वयः—क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येषु, अरिक्तारदिने, वाजिकृत्यं प्रशस्तं स्यात् । अथ मृदुक्षिप्रचरेषु, विद्वान् हस्तिकार्यं कुर्यात् ॥ १८ ॥

अश्विनी, पुष्य, हस्त, रेवती, धनिष्ठा, मृगशिरा, स्वाती, शतभिष, पुनर्वसु, इन नक्षत्रों में; चौथि, नवमी, चतुर्दशी को छोड़ अन्य तिथियों में; मङ्गल को छोड़ अन्य दिनों में घोड़ों का कृत्य अर्थात् बेंचना, मोल लेना, चढ़ना इत्यादि शुभ है। चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, इन नक्षत्रों में हाथियों का कार्य अर्थात् बेंचना, मोल लेना, चढ़ना इत्यादि शुभ है ॥ १८ ॥

भूषाघटनादि का मुहूर्त्त

स्याद्भूषाघटनं त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे रत्नयुक्
तत्तीक्ष्णोग्रविहीनभे रविकुजे मेषालिसिंहे तनौ ।
तन्मुक्तासहितं चरध्रुवमृदुक्षिप्रे शुभे सत्तनौ
तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं शुभं घट्टितम् ॥ १९ ॥

अन्वयः—त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे, भूषाघटन सत् स्यात् । तीक्ष्णोग्रविहीनभे, रविकुजे (वारे) मेषालिसिंहे तनौ रत्नयुक् तत् (भूषाघटनं) सत् । चरध्रुवमृदुक्षिप्रे शुभे सत्तनौ, मुक्तासहितं तत् (भूषाघटनं) शुभम् । तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं घट्टितं शुभम् ॥ १६ ॥

त्रिपुष्कर योग (इसी प्रकरण में श्लोक ४९ देखो) में और श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में आभूषण बनवाना अथवा धारण करना चाहिए। यदि आभूषण रत्नों से युक्त हो तो मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा को छोड़कर अन्य नक्षत्रों में; रविवार और मङ्गलवार में; मेष, वृश्चिक, सिंह लग्न में बनवाना और धारण करना चाहिए। चरसंज्ञक,

ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रों में; सोमवार और शुक्रवार में; कर्क, बृष, तुला लग्न में, मोतीयुक्त और चाँदी के आभूषण बनवाना और धारण करना चाहिए। मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, अश्विनी, मृगशिरा, विशाखा, कृत्तिका इन नक्षत्रों में हथियार धारण करना और बनवाना शुभ होता है ॥ १९ ॥

मुद्रापातन और वस्त्रक्षालन मुहूर्त्त

मुद्राणां पातनं सद्ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैर्वीन्दुसौरे
घस्रे पूर्णाजयाख्ये न च गुरुभृगुजास्ते विलग्ने शुभैः स्यात् ।
वस्त्राणां क्षालनं सद्वसुहयदिनकृत्पञ्चकादित्यपुष्ये
नो रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरविजज्ञेषु कार्यं कदापि ॥ २० ॥

अन्वयः—ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैः, वीन्दुसौरे घस्रे, पूर्णाजयाख्ये (तिथ्ये), गुरुभृगुजास्ते न शुभैः विलग्ने मुद्राणां पातनं सत् । वसुहयदिनकृत्पञ्चकादित्यपुष्ये, वस्त्राणां क्षालनम् सत् स्यात् । रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरविजज्ञेषु, वस्त्राणां क्षालनं कदापि नो कार्यम् ॥ २० ॥

ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, चरसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रों में; सोमवार और शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में; पञ्चमी, दशमी, पूर्णमासी, तीज, अष्टमी, त्रयोदशी इन तिथियों में, बृहस्पति और शुक्र के अस्तकाल को छोड़कर, लग्न में शुभ ग्रहों के रहते मुद्रापातन अर्थात् राजचिह्नयुक्त मुद्रा ढलवाना और खज़ाने में जमा करना शुभ है और धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, पुनर्वसु और पुष्य नक्षत्र में; चौथि, नवमी, चतुर्दशी, पर्व अर्थात् कृष्णपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा, सूर्य की संक्रान्ति का दिन, छठि, पितृश्राद्ध का दिन, शनैश्चर और बुधवार को छोड़ अन्य तिथियों और दिनों में पहिले पहल कपड़ा धोने के लिए धोबी को देना शुभ है ॥ २० ॥

तलवार आदि के धारण और शय्या आदि के उपभोग का मुहूर्त्त

संधार्याः कुन्तवर्मेष्वसनशरकृपाणासिपुत्र्यो विरिक्ते
शुक्रेज्यार्केऽह्नि मैत्रध्रुवलघुसहितादित्यशाक्रद्विदैवे ।
स्युर्लग्ने हि स्थिराख्ये शशिनि च शुभदृष्टे शुभैः केन्द्रगैः
स्याद्भोगः शय्यासनादेर्ध्रुवमृदुलघुहर्यन्तकादित्य इष्टः ॥ २१ ॥

अन्वयः—विरिक्ते (तिथौ) शुक्रेज्यार्केह्नि, मैत्रध्रुवलघुसहितादित्यशाक्रद्विदैवे, स्थिराख्ये लग्नेऽपि, शशिनि शुभदृष्टे, शुभैः केन्द्रगैः, कुन्तवर्मेष्वसनशरक्षुपाणासिपुत्र्यः सन्धार्याः स्युः । ध्रुवमृदुलघुहर्यन्तकादित्ये शय्यासनादेः भोगः इष्टः स्यात् ॥ २१ ॥

रिक्ता तिथियों को छोड़ अन्य तिथियों में, शुक्र, बृहस्पति और रविवार में, मैत्रसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक, लघुसंज्ञकसहित पुनर्वसु, ज्येष्ठा और विशाखा नक्षत्र में; स्थिर अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक अथवा कुम्भ लग्न में चन्द्रमा के रहते और शुभ ग्रहों से देखते तथा केन्द्र में शुभ ग्रहों के रहते बरछी, कवच, धनुष-बाण, तलवार, छूरी आदि धारण करना चाहिए। ध्रुवसंज्ञक, मृदु-संज्ञक, लघुसंज्ञक, श्रवण, भरणी और पुनर्वसु में शय्या और आसन आदि का उपभोग हितकारक होता है ॥ २१ ॥

नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञा

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं
मन्दाक्षं रविविश्वमैत्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं भवेत् ।
मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहन भाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् ॥ २२ ॥

अन्वयः—वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं अन्धाक्षं भवेत्, रविविश्वमित्रजल-पाश्लेषाश्विचान्द्रं मन्दाक्षं भवेत् शिवपित्रजैकचरणत्वाष्टेन्द्र विध्यन्तकं मध्याक्षं भवेत्, स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् स्वक्षं भवेत् ॥ २२ ॥

धनिष्ठा, पुष्य, रोहिणी, पूर्वाषाढ़, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती इन नक्षत्रों की अन्धाक्ष संज्ञा है; हस्त, उत्तराषाढ़, अनुराधा, शतभिष, आश्लेषा, अश्विनी, मृगशिरा इन नक्षत्रों की मन्दाक्ष संज्ञा है, आर्द्रा, मघा, पूर्वाभाद्र-पद, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, भरणी, इन नक्षत्रों की मध्याक्ष संज्ञा है और स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपद, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, इनकी स्वक्ष अर्थात् सुलोचन संज्ञा है ॥ २२ ॥

अन्धाक्षादि चक्र

धनिष्ठा	पुष्प	रोहिण।	पू० षा०	विशाखा	उ०फा०	रेवता	अधाक्ष
हस्त	उ० षा०	अनुराधा	शतभिष	आश्ले०	अश्विनो	मृगशिरा	मन्दाक्ष
आर्द्रा	म०	पू भा०	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि०	भरणा	मध्याक्ष
स्वाती	पुनर्वसु	श्रवण	कृतिका	उ०भा०	मूल	पू०फा०	स्वक्ष

अन्धाक्षादि नक्षत्रों का फल

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः ।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥ २३ ॥

अन्वयः—अन्धे विनष्टार्थस्य शीघ्रं लाभः, मन्दे प्रयत्नः, मध्ये दूरे श्रवणं स्यात्, सुलोचने श्रुत्याप्ती न ॥ २३ ॥

यदि अन्धाक्षसंज्ञक नक्षत्रों में कोई वस्तु चोरी जाय तो शीघ्र मिले, मन्दाक्षसंज्ञक नक्षत्रों में बड़े उपाय से मिले, मध्याक्षसंज्ञक नक्षत्रों में दूर में सुन पड़े मिले नहीं, और सुलोचन संज्ञक में तो कुछ भी पता न लगे ॥ २३ ॥

धन के व्यवहार में निषिद्ध नक्षत्रादि

तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रैर्यद्द्रव्यं दत्तं निवेशितम् ।
प्रयुक्तं च विनष्टं च विष्टयां पाते च नाप्यते ॥ २४ ॥

अन्वयः—तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रैः, विष्टयां, पाते व यद्द्रव्यम् दत्तं, निवेशितम्, प्रयुक्तं विनष्टं च (तत्) न आप्यते ॥ २४ ॥

तीक्ष्णसंज्ञक, मिश्रसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक और उग्रसंज्ञक नक्षत्रों में और भद्रा वा व्यतीपात में जो द्रव्य किसी को दी जाय, अथवा धरोहर धरी जाय, अथवा ऋण दिया जाय, अथवा कहीं गिर पड़े या चोरी जाय वह फिर किसी तरह न मिले ॥ २४ ॥

जलाशय और नृत्यारम्भ का मुहूर्त्त

मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः
पापैर्हीनबलैस्तनौ सुरगुरौ ज्ञे वा भृगौ खे विधौ ।
आप्ये सर्वजलाशयस्य खननं व्यम्भोमघैः सेन्द्रभै-
स्तैर्नृत्यं हिबुके शुभैस्तनुगृहेज्ञेऽब्जे ज्ञराशौ शुभम् ॥ २५ ॥

अन्वयः—मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः, पापैः हीनबलैः, तनौ सुरगुरौ ज्ञे वा, खे भृगौ, आप्ये विधौ, सर्वजलाशयस्य खननं शुभम् । व्यम्भोमघैः सेन्द्रभैः तैः (पूर्वोक्तनक्षत्रैः), हिबुके शुभैः, तनुगृहे ज्ञे, ज्ञराशौ अब्जे नृत्य शुभम् ॥ २५ ॥

अनुराधा, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा, शतभिष, मघा, पूर्वाषाढ़, रेवती, पुष्य और मृगशिरा इन नक्षत्रों में, पापग्रहों के निर्बल रहते, लग्न में बृहस्पति वा बुध के रहते, लग्न से दशवें स्थान में शुक्र के

रहते, जल-राशियों में चन्द्रमा के रहते वापी, कूप, तड़ाग आदि जलाशयों का खनना शुभ है। पूर्वोक्त नक्षत्रों में पूर्वाषाढ़ और मघा को छोड़कर, ज्येष्ठा को मिलाकर अर्थात् अनुराधा, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा, शतभिष, रेवती, पुष्य, मृगशिरा और ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में, लग्न से चौथे स्थान में शुभग्रहों के रहते, शुभग्रहों से दृष्ट लग्न में बुध के रहते और मिथुन या कन्याराशि में चन्द्रमा के रहते नाचने का आरम्भ करना शुभदायक होता है ॥ २५ ॥

स्वामी की सेवा करने का मुहूर्त्त

क्षिप्रे मैत्रे वित्सितार्केज्यवारे सौम्ये लग्नेऽर्के कुजे वा खलाभे ।
योनेर्मैत्र्यां राशिपोश्चापि मैत्र्यां सेवा कार्या स्वामिनः सेवकेन ॥ २६ ॥

अन्वयः—क्षिप्रे, मैत्रे, वित्सितार्केज्यवारे, सौम्ये लग्ने, अर्के खलाभे, वा कुजे खलाभे, योनेर्मैत्र्यां च, राशिपोः अपि मैत्र्यां, (तदा) सेवकेन स्वामिनः सेवा कार्या ॥ २६ ॥

अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती, इन नक्षत्रों में; बुध, शुक्र, रविवार, बृहस्पति इन वारों में; लग्न में शुभग्रहों के रहते; दशवें और गेरहवें स्थान में सूर्य वा मंगल के रहते सेवक को स्वामी की सेवा करने का प्रारम्भ करना शुभदायक होता है। परन्तु वहाँ इतना और विचारना चाहिए कि स्वामी और सेवक के जन्मनक्षत्र की योनियों में परस्पर मित्रता और दोनों के जन्मराशीशों की परस्पर मित्रता हो ॥ २६ ॥

द्रव्यप्रयोग और ऋणग्रहण का मुहूर्त्त

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे
लग्ने धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते द्रव्यप्रयोगः शुभः ।
नारे ग्राह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽर्केऽह्नि यत्
तद्वंशेषु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥ २७ ॥

अन्वयः—स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे, कर्णत्रयाश्वे, धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते, चरे लग्ने, द्रव्यप्रयोगः शुभः। आरे तु संक्रमदिने वृद्धौ, करेऽर्केऽह्नि, ऋणं न ग्राह्यं, यत् (यस्मात्) तद्वंशेषु ऋणं भवेत्। बुधे कदाचिद्धनं न देयम् ॥ २७ ॥

स्वाती, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, विशाखा, पुंष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, और अश्विनी, इन नक्षत्रों में; चर लग्न में;

नवें और पाँचवें स्थान में शुभग्रहों के रहते और आठवें स्थान में किसी ग्रह के न रहते द्रव्य का प्रयोग अर्थात् ऋण आदि देना वा रोजगार में लगाना शुभ होता है। मङ्गल के दिन, संक्रान्ति के दिन, जिस दिन वृद्धि योग हो उस दिन, हस्त नक्षत्र में और रविवार को ऋण नहीं लेना चाहिए; क्योंकि इन दिनों में लिया हुआ ऋण लेनेवाले के वंशभर में होता है; पुत्र-पौत्रादिकों में से किसी का दिया नहीं चुकता। बुधवार को कोई किसी को भी अपना धन किसी तरह से भी न दे ॥ २७ ॥

हल चलाने का मुहूर्त्त

मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैर्विनार्कं शनिं
पापैर्हीनबलैर्विधौ जलगृहे शुक्रे विधौ मांसले।
लग्ने देवगुरौ हलप्रवहणं शस्तं न सिंहे घटे
कर्कार्जैणधटे तनौ क्षयकरं रिक्तासु षष्ठ्यां तथा ॥ २८ ॥

अन्वयः—मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैः, अर्कं, शनि विना, पापैः हीनबलैः, विधौ जललवे, शुक्रे विधौ मांसले, देवगुरौ लग्ने हलप्रवहणं शस्तम्। सिंहे घटे, कर्कार्जैणधटे तनौ तथा रिक्तासु षष्ठ्यां क्षयकरम् ॥ २८ ॥

मूल, विशाखा, मघा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य और हस्त इन नक्षत्रों में; शनिवार और रविवार छोड़ अन्य दिनों में; पापग्रहों के निर्बल रहते; और जलराशि में चन्द्रमा के रहते; शुक्र के उदय रहते; लग्न में पूर्ण चन्द्रमा वा बृहस्पति के रहते पहिले पहिल हल चलाना शुभदायक होता है। यदि सिंह, कुम्भ, कर्क, मेष, मकर और तुला लग्न; चौथि, नवमी, चतुर्दशी, छठि और अष्टमी तिथि हो तो क्षयकारक होता है ॥ २८ ॥

बीजोप्तिमुहूर्त्त

एतेषु श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि भौमं विना
बीजोप्तिर्गदिता शुभा त्वगुभतोऽष्टाग्नीन्दुरामेन्दवः।
रामेन्द्वग्नियुगान्यसच्छुभकराण्युप्तौ हलेऽर्कोज्झिता-
द्भूद्रामाष्टनवाष्टभानि मुनिभिः प्रोक्तान्यसत्सन्ति च ॥ २९ ॥

अन्वयः—श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि विना एतेषु [पूर्वोक्तनक्षत्रेषु], भौमं विना, बीजोप्तिः शुभा गदिता। तु [पुनः] अगुभतः अष्टाग्नीन्दुरामेन्दवः रामेन्द्वग्नियुगानि

[भानि] असत्, शुभकराणि, उप्तौ प्रोक्तानि । हले अर्कोज्झिताद्भात् रामाष्टनवाष्टभानि, असत्सन्ति, मुनिभिः प्रोक्तानि ॥ २६ ॥

श्रवण, शतभिष, पुनर्वसु और विशाखा नक्षत्र तथा मंगल दिन को छोड़ पूर्वोक्त हलप्रवाह-मुहूर्त्त में बीज बोना शुभदायक है। जिस नक्षत्र में राहु स्थित हो उस नक्षत्र से आठ नक्षत्र बीज बोने में अशुभ, फिर तीन शुभ, फिर एक अशुभ, फिर तीन शुभ, फिर एक अशुभ, फिर तीन शुभ, फिर एक अशुभ, फिर तीन शुभ, और उसके बाद चार अशुभ होते हैं ॥ २९ ॥

राहुभात् फणिचक्र

८	३	१	३	१	३	१	३	४
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ

पहिले-पहिल हल चलाने के लिए सूर्यभुक्त अर्थात् जिस नक्षत्र में सूर्य वर्त्तमान हो उस नक्षत्र के पूर्व नक्षत्र से लेकर तीन नक्षत्र पर्यन्त अशुभ, चौथे से लेकर गेरहवें तक शुभ, बारहवें से लेकर बीसवें तक अशुभ और इक्कीसवें से लेकर अट्ठाइसवें तक शुभ मुनियों ने कहा है ॥ २९ ॥

सूर्यभुक्तभात् हलचक्र

३	८	९	८
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ

शिरामोक्ष व विरेकादि व धर्मक्रिया के मुहुर्त्त

त्वाष्ट्रान्मित्रकभाद्द्वयेऽम्बुपलघुश्रोत्रे शिरामोक्षणं
भौमार्केज्यदिने विरेकवमनाद्यं स्याद्बुधार्कौ विना ।
मित्रक्षिप्रचरध्रुवे रविशुभाहे लग्नवर्गे विदो
जीवस्यापि तनौ गुरौ निगदिता धर्मक्रिया तद्बले ॥ ३० ॥

अन्वयः—त्वाष्ट्रान्मित्रकभाद्द्वयेऽम्बुपलघुश्रोत्रे, भौमार्केज्यदिने शिरामोक्षणम् (कार्यम्)। बुधार्कौ विना [पूर्वोक्तनक्षत्रेषु] विरेकवमनाद्यं (शुभ) स्यात्। मित्र-क्षिप्रचरध्रुवे, रविशुभाहे, विदः जीवस्य अपि लग्नवर्गे, गुरौ तनौ, तद्बले [गुरुबले] धर्मक्रिया (शुभा) निगदिता ॥ ३० ॥

चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, शतभिष, अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित् और श्रवण नक्षत्र में; मंगल, रविवार, बृहस्पति दिन में शिरामोक्षण अर्थात् फस्त खोलवाना शुभ होता है। बुध और शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में और इन्हीं पूर्वोक्त नक्षत्रों में विरेक-वमन आदि शुभकारक होता है। अनुराधा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्र में; रविवार, सोमवार, बुध, बृहस्पति, शुक्र दिन में; बुध और बृहस्पति के लग्न वा षड्वर्ग में; लग्न में बृहस्पति के रहते और कर्त्ता का बृहस्पति बली होने पर धर्म-क्रिया का आरम्भ करना शुभ होता है ॥ ३० ॥

धान्यच्छेदनमुहूर्त्त

तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दु-
स्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये ।
मन्दाररिक्तरहिते दिवसेऽतिशस्ता
धान्यच्छिदा निगदिता स्थिरभे विलग्ने ॥ ३१ ॥

अन्वयः– तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दुस्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये, मन्दार-रिक्तरहिते दिवसे, स्थिरभे विलग्ने धान्यच्छिदा अतिशस्ता निगदिता ॥ ३१ ॥

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वाभाद्रपद, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृगशिरा, स्वाती, मघा, तीनों उत्तरा, पूर्वाषाढ़, भरणी, चित्रा और पुष्य नक्षत्र में; शनैश्चर, मंगल दिन और रिक्ता तिथि को छोड़ अन्य दिन और तिथि में और स्थिर लग्न में अनाज का काटना शुभ होता है ॥ ३१ ॥

कणमर्दन और सस्यरोपण का मुहूर्त्त

भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूल-
मैत्रान्त्यभेषु कथितं कणमर्दनं सत् ।
द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमर्क्षे
सस्यस्य रोपणहिमार्किकुजौ विना सत् ॥ ३२ ॥

अन्वयः–भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूलमैत्रान्त्यभेषु, कणमर्दनं सत् कथितम् । द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमर्क्षे, आर्किकुजौ विना सस्यस्य रोपणं सत् ॥ ३२ ॥

पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, श्रवण, मघा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मूल, अनुराधा और रेवती नक्षत्र में कणमर्दन अर्थात् खरिहान में अनाज का

पीटना अथवा माड़ना शुभ है। विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, मूल, रोहिणी, शतभिष और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में; शनैश्चर और मंगल को छोड़ अन्य दिनों में; खेतों में धान का लगाना शुभ है ॥ ३२ ॥

धान्यस्थिति और धान्यवृद्धि का मुहूर्त्त

मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु
कर्कजतौलिरहिते च तनौ शुभाहे।
धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता ध्रुवेज्य-
द्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु च धान्यवृद्धिः ॥ १३ ॥

अन्वयः–मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु च (तथा) कर्कजतौलिरहिते तनौ, शुभाहे धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता। च [पुनः] ध्रुवेज्यद्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु धान्यवृद्धिः शुभकरी गदिता ॥ ३३ ॥

विशाखा, कृत्तिका, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा और ज्येष्ठा को छोड़ अन्य नक्षत्रों में; कर्क, मेष और तुला को छोड़ अन्य लग्नों में; सोम, बुध, शुक्र और बृहस्पति के दिन में धान्यस्थिति अर्थात् अन्न का रखना शुभ होता है। तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु और स्वाती नक्षत्र में धान्यवृद्धि अर्थात् डेढ़ी और सवाई पर अनाज देना शुभ है ॥ ३३ ॥

शान्तिक और पौष्टिक मुहूर्त्त

क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं च सह मङ्गलपौष्टिकाभ्याम्।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादिदुष्टसमये शुभदं निमित्ते ॥ ३४ ॥

अन्वयः–क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु अर्के खे, विधौ सुखगते, गुरौ तनुगे मङ्गल-पौष्टिकाभ्याम् सह शान्तिकं शस्तं स्यात्। मौढ्यादिदुष्टसमये नो शुभदं (तथा) निमित्ते [केत्वाद्युत्पातदर्शने सति] शुभदं (स्यात्) ॥ ३४ ॥

अश्विनी, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, अनुराधा और मघा नक्षत्र में; रिक्ता, अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस, सूर्य-संक्रान्ति, रविवार, मङ्गल, शनैश्चर को छोड़ अन्य तिथियों और दिवसों में; लग्न से दशवें स्थान में सूर्य, चौथे स्थान में

चन्द्रमा और लग्न में बृहस्पति के रहते मङ्गल अर्थात् गणेशादि की पूजा, पौष्टिक अर्थात् पुष्टिकामना से कोई पुरश्चरणादि और मूलशान्ति आदि करना शुभ है। बृहस्पति, शुक्रास्तादि और केतूदयादि उत्पात के समय को छोड़कर उक्त मुहूर्त्त मिले तो बहुत उत्तम है, अन्यथा कैसा ही समय हो, शान्त्यादि करने में कुछ दोष नहीं है ॥ ३४ ॥

होमाहुतिमुहूर्त्त

सूर्यभात्त्रित्रिभे चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले ॥ ३५ ॥

अन्वयः–सूर्यभात् त्रित्रिभे चान्द्रे [चान्द्रर्क्षे] सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः चन्द्रारेज्यागुशिखिनः (स्युः) खले होमाहुतिः नेष्टा (भवति) ॥ ३५ ॥

सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हो उससे तीन-तीन नक्षत्रों का एक त्रिक, ऐसे सत्ताइस नक्षत्रों के नव त्रिक होंगे। उनमें पहिला सूर्य का, दूसरा बुध का, तीसरा शुक्र का, चौथा शनैश्चर का, पाँचवाँ चन्द्रमा का, छठा मङ्गल का, सातवाँ बृहस्पति का, आठवाँ राहु का, नवाँ केतु का त्रिक होता है। होम के दिन का नक्षत्र जिसके त्रिक में पड़े उसी ग्रह के मुख में होमाहुति पड़ती है। खलग्रह के मुख में होमाहुति शुभ नहीं होती ॥ ३५ ॥

अग्निवास और उसका शुभाशुभत्व

सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च ॥ ३६ ॥

अन्वयः—तिथिः सैका वारयुता कृताप्ता गुणेऽभ्रे शेषे भुवि वह्निवासः (ज्ञेयः), होमे सौख्याय च (तथा) शशियुग्मशेषे (क्रमेण) दिवि भूतले वह्निवासो (ज्ञेयः) [तत्र होमे] प्राणार्थनाशौ (भवतः) ॥ ३६ ॥

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर इष्टतिथिपर्यन्त गिनने से जितनी संख्या हो उसमें एक और जोड़े, फिर रविवार से लेकर इष्टवारपर्यन्त गिनने से जितनी संख्या हो उसको भी उसी में जोड़े। उस अङ्क में चार का भाग दे। यदि तीन अथवा शून्य शेष रहे तो अग्नि का वास भूमि में जाने। वह सौख्यकारक होता है। यदि एक शेष हो तो अग्नि का वास आकाश में जाने। वह होम करनेवाले के प्राण का नाश करता है और यदि दो शेष रहें तो अग्नि का वास पाताल में जाने। वह धन की हानि करता है ॥ ३६ ॥

नवान्नभक्षणमुहूर्त्त

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दाविषघटीमधुपौषार्किभूमिजान् ॥ ३७ ॥

अन्वयः—चरक्षिप्रमृदुभे, सत्तनौ, नन्दाविषघटीमधुपौषार्किभूमिजान् विना नवान्नं (शुभं) स्यात् ॥ ३७ ॥

श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती नक्षत्र में शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट शुभग्रहों के लग्न में, परीवा, छठि, एकादशी तिथि, विषघटी, पूस और चैत्रमास, मङ्गल और शनैश्चर दिन को छोड़ अन्य तिथि, वार और मास में नवान्न-भक्षण शुभ है ॥ ३७ ॥

नौकाघट्टनमुहूर्त्त

याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे ।
भृग्वीज्यार्कदिने नौकाघट्टनं सत्तनौ शुभम् ॥ ३८ ॥

अन्वयः—याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे, भृग्वीज्यार्कदिने सत्तनौ नौकाघट्टनं शुभम् ॥ ३८ ॥

भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, आर्द्रा को छोड़ अन्य नक्षत्रों में; शुक्र, बृहस्पति और रविवार में तथा शुभग्रहयुक्त वा दृष्ट शुभ लग्न[1] में नाव का बनवाना शुभ होता है ॥ ३८ ॥

वीरसाधन व अभिचार का मुहूर्त्त

मूलार्द्राभरणीपित्र्यमृगे सौम्ये घटे तनौ ।
सुखे शुक्रेऽष्टमे शुद्धे सिद्धिर्वीराभिचारयोः ॥ ३९ ॥

अन्वयः—मूलार्द्राभरणीपित्र्यमृगे, घटे तनौ सौम्ये, शुक्रे सुखे, अष्टमे शुद्धे वीराभिचारयोः सिद्धिः (भवति) ॥ ३९ ॥

मूल, आर्द्रा, भरणी, मघा और मृगशिरा नक्षत्र में; बुधयुक्त कुम्भ लग्न में; लग्न से चौथे स्थान में शुक्र के रहते और आठवें स्थान में किसी ग्रह के न रहते वीरसाधन और अभिचार करना सिद्धिकारक होता है ॥ ३९ ॥

रोग शान्त होने के पश्चात् स्नान का मुहूर्त्त

व्यन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये
रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे ।

१—विवाहप्रकरण में कहेंगे ।

स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं
हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे ॥ ४० ॥

अन्वयः—व्यन्त्यादिति ध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये, रिक्ते तिथौ, चरतनौ, विकवीन्दु-वारे, विधौ हीने, खलखगैः भवकेन्द्रकोणे, (तदा) रुजा विरहितस्य [जनस्य] स्नानं शस्तम् ॥ ४० ॥

रेवती, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मघा, स्वाती और आश्लेषा को छोड़ अन्य नक्षत्रों में; रिक्तासंज्ञक तिथियों में; शुक्रवार और सोमवार को छोड़ अन्य दिनों में, मेष, कर्क, तुला और मकर लग्न में निषिद्ध स्थान में चन्द्रमा के रहते और गेरहवें, पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, पाँचवें, नवें स्थान में पापग्रहों के रहते रोग से छूटे हुए पुरुष का स्नान करना शुभदायक होता है ॥ ४० ॥

शिल्पविद्या के प्रारंभ का मुहूर्त्त

मृदुध्रुवक्षिप्रचरे ज्ञे गुरौ वा खलग्नगे ।
विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पविद्या प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

अन्वयः—मृदुध्रुवक्षिप्रचरे, ज्ञे खलग्नगे, वा गरौ खलग्नगे, विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पविद्या प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

मृदुसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक और चरसंज्ञक नक्षत्रों में; लग्न और दशवें स्थान में बुध या बृहस्पति के रहते; बुध और बृहस्पति के षड्वर्ग में चन्द्रमा के रहते शिल्पविद्या का प्रारम्भ करना शुभदायक होता है ॥ ४१ ॥

सन्धानमुहूर्त्त

सुरेज्यमित्रभाग्येषु चाष्टम्यां तैतिले हरौ ।
शुक्रदृष्टे तनौ सौम्यवारे सन्धानमिष्यते ॥ ४२ ॥

अन्वयः–सुरेज्यमित्रभाग्येषु, च (तथा) अष्टम्यां, हरौ, तैतिले, शुक्रदृष्टे तनौ, सौम्यवारे सन्धानं इष्यते ॥ ४२ ॥

पुष्य, अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी, अष्टमी, द्वादशी, सोमवार, बुध, बृहस्पति, शुक्रवार, शुक्र से दृष्ट वा युत लग्न और तैतिलनाम करण में सन्धि और मित्रता करना शुभ होता है ॥ ४२ ॥

परीक्षामुहूर्त्त

त्यक्त्वाष्टभूतशनिविष्टिकुजान् जनुर्भ-
मासौ मृतौ रविविधू अपि भानि नाड्यः ।

द्व्यङ्गे चरे तनुलवे शशिजीवतारा-
शुद्धौ करादितिहरीन्द्रकपे परीक्षा ॥ ४३ ॥

अन्वयः—अष्टभूतशनिविष्टिकुजान्, जनुर्भमासौ, मृतौ रविविधू, अपि नाड्याः भानि त्यक्त्वा, द्व्यङ्गे चरे तनुलवे, शशिजीवताराशुद्धौ, करादितिहरीन्द्रकपे, परीक्षा (कार्या) ॥ ४३ ॥

अष्टमी, चतुर्दशी, शनैश्चर, मंगल, भद्रा, जन्मनक्षत्र, जन्ममास, आठवाँ सूर्य, आठवाँ चन्द्रमा, जिस नाड़ी में जन्मनक्षत्र हो उस नाड़ी[1] के सब नक्षत्र, इन सबको छोड़कर हस्त, पुनर्वसु, श्रवण, ज्येष्ठा, शतभिष नक्षत्र में; मिथुन, कन्या, धन, मीन, मेष, कर्क, तुला, मकर लग्न में और इन्हीं राशियों के नवांश में; चन्द्रमा और बृहस्पति का गोचर शुद्ध तथा ताराशुद्धि रहते परीक्षा अर्थात् सत्यासत्य के निर्णय के लिये लोहे का गरम गोला आदि उठवाना शुभ होता है ॥ ४३ ॥

सब शुभ कार्यों में लग्नशुद्धि

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषट्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्धयति ॥ ४४ ॥

अन्वयः—व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते, त्रिषड्दशायस्थे चन्द्रे सर्वारम्भः प्रसिद्धयति ॥ ४४ ॥

लग्न से बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो, अर्थात् किसी शुभाशुभ ग्रह से युक्त न हो। कर्त्ता के जन्मराशि वा जन्मलग्न से तीसरी, छठी, गेरहवीं, दशवीं इनमें से कोई लग्न हो और शुभग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो। चन्द्रमा लग्न से तीसरे, छठे, दशवें, गेरहवें इनमें से किसी स्थान में हो तब सम्पूर्ण शुभ कर्मों का आरम्भ शुभदायक होता है ॥ ४४ ॥

जिन नक्षत्रों में ज्वर होने से मृत्यु होती है अथवा जितने दिनों तक ज्वर रहता है वह कहते हैं—

स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे मृतिर्ज्वरेन्त्यमैत्रे स्थिरता भवेद्रुजः ।
याम्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा घस्रा हि पक्षो द्व्यधिपार्कवासवे ॥ ४५ ॥
मूलाग्निदास्रे नव पित्र्यभे नखा बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः ।
मासोऽब्जवैश्वेऽथ यमाहि मूलभे मिश्रेशपित्र्ये फणिदंशने मृतिः ॥ ४६ ॥

१—विवाहप्रकरण में कहेंगे ।

अन्वयः–स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे ज्वरे मृतिः (स्यात्), अन्त्यमैत्रे रुजः स्थिरता भवेत्, याम्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा घस्राः द्वयधिपार्कवासवे पक्षः, हि मूलाग्निदास्रे नव, पित्र्यभे नखाः, बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः, अब्जवैश्वे मासः। अथ मिश्रेशपित्र्ये, फणिदंशने मृतिः (स्यात्) ॥ ४५-४६ ॥

स्वाती, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा, आर्द्रा और आश्लेषा में जिसे ज्वर हो उसकी मृत्यु होती है। रेवती और अनुराधा में हो तो रोग की स्थिरता होती है, अर्थात् रोग बहुत दिन तक रहता है। भरणी, श्रवण, शतभिष और चित्रा में हो तो गेरह दिन तक; विशाखा, हस्त और धनिष्ठा में हो तो पन्द्रह दिन तक; मूल, कृत्तिका और अश्विनी में हो तो नव दिन तक; मघा में हो तो बीस दिन तक; उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी में हो तो सात दिन तक; मृगशिरा और उत्तराषाढ़ में हो तो एक महीने तक ज्वर रहता है। यदि भरणी, आश्लेषा, मूल, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा वा मघा नक्षत्र में किसी को सर्प काटे तो उसकी मृत्यु होती है। चन्द्रमा बली हो तो शायद बच जाय ॥ ४५-४६ ॥

रोगी के शीघ्र ही मरने का योग

रौद्राहिशाक्राम्बुपयाम्यपूर्वाद्विदैववस्वग्निषु पापवारे।
रिक्ताहरिस्कन्ददिने च रोगे शीघ्रं भवेद्रोगिजनस्य मृत्युः ॥ ४७ ॥

अन्वयः—रौद्राहिशाक्राम्बुपयाम्यपूर्वाद्विदैववस्वग्निषु, पापवारे, रिक्ताहरिस्कन्ददिने च, रोगे रोगिजनस्य शीघ्रं मृत्युर्भवेत् ॥ ४७ ॥

आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, शतभिष, भरणी, तीनों पूर्वा, विशाखा, धनिष्ठा अथवा कृत्तिका नक्षत्र; रविवार, मंगल वा शनैश्चर दिन और चौथि, नवमी, चतुर्दशी, द्वादशी वा छठि तिथि; ऐसे योग में यदि रोग उत्पन्न हो तो रोगी की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥ ४७ ॥

प्रेतक्रिया का मुहूर्त्त

क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे प्रेतक्रिया स्याज्झषकुम्भगे विधौ।
प्रेतस्य दाहं यमदिग्गमं त्यजेच्छय्यावितानं गृहगोपनादिकम् ॥ ४८ ॥

अन्वयः—क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे, प्रेतक्रिया स्यात्, विधौ झषकुम्भगे प्रेतस्य दाह, यमदिग्गमं, शय्यावितानं, च गृहगोपनादिकम् त्यजेत् ॥ ४८ ॥

अश्विनी, पुष्य, हस्त, आश्लेषा, मूल, ज्येष्ठा, श्रवण, आर्द्रा और स्वाती

नक्षत्र में प्रेतक्रिया करना योग्य है, यदि मरणकाल में किसी कारणवश से न की गई हो। धनिष्ठा नक्षत्र का उत्तरार्द्ध, शतभिष, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती इन साढ़े चार नक्षत्रों में प्रेत का दाह, दक्षिण दिशा की यात्रा, खाट बिनाना और घर छवाना वर्जित है। आदि पद से तृण काष्ठ आदि का संग्रह भी न करे ॥ ४८ ॥

त्रिपुष्कर योग और उसका फल

भद्रातिथी रविजभूतनयार्कवारे
द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे।
त्रैपुष्करो भवति मृत्युविनाशवृद्धौ
त्रैगुण्यदो द्विगुणकृद्वसुतक्षचान्द्रे ॥ ४९ ॥

अन्वयः—भद्रातिथिः, रविजभूतनयार्कवारे, द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे, मृत्युविनाशवृद्धौ त्रैगुण्यदः त्रैपुष्करो भवति। (एवं) भद्रातिथिः, रविजभूतनयार्कवारे, वसुतक्षचान्द्रे, मृत्युविनाशवृद्धौ द्विगुणकृत् (द्विपुष्करो योगो) भवति ॥ ४६ ॥

शनैश्चर, मंगल या रविवार हो; दुइज, सप्तमी वा द्वादशी तिथि हो; विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, पुनर्वसु, कृत्तिका वा उत्तराषाढ़ नक्षत्र हो तो त्रिपुष्कर योग होता है। इस योग में यदि किसी के घर में कोई मरे तो तीन प्राणी मरें। और यदि कोई वस्तु नष्ट हो जाय तो तीन नष्ट हों यदि किसी वस्तु का लाभ हो तो तीन वस्तुओं का लाभ हो। यदि रविवार, मंगल, शनैश्चर इन्हीं दिनों में दुइज, सप्तमी वा द्वादशी यही तिथि हों और धनिष्ठा, चित्रा या मृगशिरा नक्षत्र हो तो द्विपुष्कर योग होता है। इसमें कोई मरे तो उस घर में दो मरें, कोई वस्तु नष्ट हो तो दो नष्ट हों और कुछ लाभ हो तो दो का लाभ हो ॥ ४९ ॥

शवप्रतिकृतिदाह का निषिद्धकाल

शुक्रारार्किषु दर्शभूतमदने नन्दासु तीक्ष्णोग्रभे
पौष्णे वारुणभे त्रिपुष्करदिने न्यूनाधिमासेऽयने।
याम्येऽब्दात्परतश्च पातपरिघे देवेज्यशुक्रास्तके
भद्रावैधृतयोः शवप्रतिकृतेर्दाहो न पक्षे सिते ॥ ५० ॥
जन्मप्रत्यरितारयोर्मृतिसुखान्त्येऽब्जे च कर्त्तुर्न स-
न्मध्योमैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्व्यङ्घ्रिभे ज्ञेऽपि च।

श्रेष्ठोऽर्केज्यविधोर्दिने श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये तथा
त्वाशौचात्परतो विचार्यमखिलं मध्ये यथासम्भवम् ॥ ५१ ॥

अन्वयः—शुक्रारार्किषु, दर्शभूतमदने नन्दासु, तीक्ष्णोग्रभे, पौष्णे, वारुणभे, त्रिपुष्कर-दिने, न्यूनाधिमासे, अब्दात्परतः याम्ये अयने, च पातपरिघे, देवेज्यशुक्रास्तके, भद्रावैधृतयोः, सिते पक्षे, शवप्रतिकृतेर्दाहः न (कार्यः) जन्मप्रत्यरितारयोः, अब्जे मृतिसुखान्त्ये, कर्तुः न सत्, मैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्वचङ्घ्रिभे, च ज्ञेऽपि कर्तुः मध्यः अर्केज्यविधोर्दिने, श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये, कर्तुः श्रेष्ठः (स्यात्) । (इदं) अखिलं अशौचात्परतः विचार्यम्, मध्ये तु यथासम्भवं (कार्यम्) ॥ ५०-५१ ॥

शुक्र, मंगल, शनैश्चर दिन में; अमावस, चतुर्दशी, त्रयोदशी, परीवा, छठि, एकादशी तिथि में; मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, रेवती, शतभिष नक्षत्र में; त्रिपुष्कर योग, क्षयमास, मलमास, जिसे मरे हुए एक वर्ष से अधिक हो गया हो उसका दक्षिणायन, व्यतीपात योग, परिघ योग, बृहस्पति और शुक्र का अस्त, वैधृति योग, भद्रा और शुक्लपक्ष में शवप्रतिकृतिदाह न करे । कोई आचार्य आषाढ़, पौष और हरिशयन में भी निषेध करते हैं ॥ ५० ॥ कर्त्ता की जन्मतारा अर्थात् जन्मनक्षत्र और जन्मनक्षत्र से दशवाँ वा उन्नीसवाँ नक्षत्र और प्रत्यरि तारा अर्थात् जन्मनक्षत्र से पाँचवाँ, चौदहवाँ और तेइसवाँ नक्षत्र. इनमें और कर्त्ता की जन्मराशि से आठवें, चौथे, बारहवें चन्द्रमा के रहते शवप्रतिकृतिदाह शुभ नहीं होता । अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, रोहिणी, विशाखा, मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में और बुधवार में शवप्रतिकृतिदाह मध्यम; रविवार, बृहस्पति और सोमवार में श्रवण, हस्त, स्वाती, अश्विनी, पुष्य नक्षत्र में शवप्रातेकृतिदाह श्रेष्ठ है । मरने के दिन से लेकर दश दिन बीत गये हों तो यह सम्पूर्ण विचार करना चाहिए और दश दिन के भीतर भी यदि श्रेष्ठ मुहूर्त्त मिल जाय तो उत्तम है । यदि सम्भव न हो तो कुछ भी न विचारना चाहिए ॥ ५०-५१ ॥

अभुक्तमूलघटी

अभुक्तमूलं हि घटीचतुष्टयं ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं हि नारदः ।
वशिष्ठ एकद्विघटीमितं जगौ बृहस्पतिस्त्वेकघटीप्रमाणकम् ॥ ५२ ॥
अथोचुरन्ये प्रथमाष्टघटयो मूलस्य शाक्रान्तिमपञ्चनाड्यः ।
जातं शिशुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पितास्याष्टसमा च पश्येत् ॥ ५३ ॥

अन्वयः—ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं घटिकाचतुष्टय, अभुक्तमूलं (इति) नारदः जगौ, ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं एकद्विघटीमितं अभुक्तमूलं (इति) वसिष्ठः जगौ, बृहस्पतिस्तु ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवम् एकघटीप्रमाणकम् अभुक्तमूलं स्यादिति जगौ, अथ मूलस्य प्रथमाष्टघट्यः, शाक्रान्तिमपञ्चनाड्यः (अभुक्तमूलं स्यादिति) अन्ये ऊचुः, तत्र जातं शिशुं परित्यजेत्, वा पिता अस्य अष्टसमा मुखं न पश्येत् ॥ ५२-५३ ॥

ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त की चार घड़ी और मूल नक्षत्र के आदि की चार घड़ी अभुक्त मूल हैं, यह नारदजी कहते हैं। ज्येष्ठा के अन्त की एक घड़ी और मूल के आदि की दो घड़ी अभुक्त मूल हैं, यह वसिष्ठजी ने कहा है। ज्येष्ठा के अन्त की आधी घड़ी और मूल के आदि की आधी घड़ी अभुक्त-मूल है, यह बृहस्पतिजी ने कहा है॥ ५२ ॥ मूल नक्षत्र के आदि की आठ घड़ी और ज्येष्ठा के अन्त की पाँच घड़ी अभुक्तमूल हैं, यह अन्याचार्यों ने कहा है। अभुक्तमूल में उत्पन्न सन्तान को त्याग दे अथवा आठ वर्ष तक पिता उसका मुख न देखे। अब इस विषय में कोई यह पूछे कि इन अनेक मतों में किसका मत प्रामाणिक है ? तो उसका उत्तर यह है कि बहुत से आचार्यों की सम्मति होने के कारण नारदजी का मत ठीक है ॥ ५२-५३ ॥

मूल और आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न सन्तान का शुभाशुभ फल

आद्ये पिता नाशमुपैति मूलपादे द्वितीये जननी तृतीये।
धनं चतुर्थोऽस्य शुभोऽथ शान्त्या सर्वत्र सत्स्यादहिभे विलोमम् ॥ ५४ ॥

अन्वयः—आद्ये मूलपादे पिता नाशं उपैति, द्वितीये जननी, तृतीये धनं (नाशं उपैति) चतुर्थः अस्य (शिशोः) शुभः (स्यात्) शान्त्या सर्वत्र सत्स्यात्। अहिभे विलोमं (भवति) ॥ ५४ ॥

मूल नक्षत्र के पहिले चरण में जन्म होने से पिता का नाश, दूसरे चरण में माता का और तीसरे चरण में धन का नाश होता है। चौथा चरण शुभ-दायक होता है और शान्ति करने से चारों चरणों में शुभ ही होता है। आश्लेषा में इससे विपरीत अर्थात् आश्लेषा के चौथे चरण में यदि किसी का जन्म हो तो उसके पिता का, तीसरे चरण में माता का और दूसरे चरण में धन का नाश होता है तथा पहिला चरण शुभदायक है ॥ ५४ ॥

मूल का निवास

स्वर्गे शुचिप्रोष्ठपदेषमाघे भूमौ नभः कार्त्तिकचैत्रपौषे।
मूलं ह्यधस्तात्तु तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेष्वशुभं च तत्र ॥ ५५ ॥

अन्वयः—शुचिप्रौष्ठपदेषमाघे मूलं स्वर्गे (तिष्ठति)। नभः कार्त्तिकचैत्रपौषे मूलं भूमौ (तिष्ठति)। तु (पुनः) तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेषु मूलं अधस्तात् (तिष्ठति)। मूलं (यत्र) तिष्ठति तत्र अशुभं (ज्ञेयम्) ॥ ५५ ॥

आषाढ़, भाद्रपद, आश्विन और माघ में स्वर्ग में; श्रावण, कार्त्तिक, चैत्र और पौष में भूमि में; और फाल्गुन, ज्येष्ठ, अगहन और वैशाख में पाताललोक में मूल का निवास होता है। जहाँ मूल का वास होता है वहाँ उसका अशुभ होता है ॥ ५५ ॥

गण्डान्तादि में जन्मे हुए का अरिष्ट और उसका परिहार

गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघव्याघातगण्डावमे
संक्रान्तिव्यतिपातवैधृतिसिनीबालीकुहूदर्शके।
वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोरमृतौ
विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शान्तितः ॥ ५६ ॥

अन्वयः—[अत्रान्वयः श्लोकक्रमेणैवान्ते] जनिः न शस्ता, शान्तितः शुभा (भवति) ॥ ५६ ॥

गण्डान्त, ज्येष्ठा, शूलयोग, पात अर्थात् गणित से सिद्ध होनेवाला व्यतीपात, परिघ, व्याघात, गण्डयोग, अवम अर्थात् तिथिक्षय, संक्रान्ति, व्यतीपात, वैधृतियोग, सिनीवाली अर्थात् चतुर्दशीयुक्त अमावास्या, कुहू अर्थात् परीवासंयुक्त अमावास्या, दर्श अर्थात् सूर्य और चन्द्रमा का समागम जिसमें हो वह तिथि, वज्रयोग, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, यमघंट, दग्धयोग, मृत्युयोग, भद्रा, भाई-बहिन का जन्म नक्षत्र, माता-पिता का जन्मनक्षत्र, तथा चन्द्रमा और सूर्य के ग्रहणकाल में यदि किसी का जन्म हो, तीन कन्याओं के बाद पुत्र का जन्म और तीन पुत्रों के बाद कन्या का जन्म हो तो अशुभ होता है। परन्तु उसकी शान्ति करने से शुभ होता है ॥ ५६ ॥

अश्विन्यादि नक्षत्रों के तारों की संख्या

त्रित्र्यङ्गपञ्चाग्निकुवेदवह्नयः शरेषुनेत्राश्विशरेन्दुभूकृताः।
वेदाग्निरुद्राश्वियमाग्निवह्नयोऽब्धयः शतंद्विद्विरदा भतारकाः ॥ ५७ ॥

अन्वयः—[श्लोकक्रमेण] (एताः) भतारकाः [क्रमेण ज्ञेया] ॥ ५७ ॥

अश्विनी का स्वरूप तीन ताराओं का, भरणी का तीन ताराओं का, कृत्तिका का छः ताराओं का, रोहिणी का पाँच ताराओं का, मृगशिरा का

पाँच ताराओं का, आर्द्रा का एक तारा का, पुनर्वसु का चार ताराओं का, पुष्य का तीन ताराओं का, आश्लेषा का पाँच ताराओं का, मघा का पाँच ताराओं का, पूर्वाफाल्गुनी का दो ताराओं का, उत्तराफाल्गुनी का दो ताराओं का, हस्त का पाँच ताराओं का, चित्रा का एक तारा का, स्वाती का एक तारा का, विशाखा का चार ताराओं का, अनुराधा का चार ताराओं का, ज्येष्ठा का तीन ताराओं का, मूल का गेरह ताराओं का, पूर्वाषाढ़ का दो ताराओं का, उत्तराषाढ़ का दो ताराओं का, अभिजित् का तीन ताराओं का, श्रवण का तीन ताराओं का, धनिष्ठा का चार ताराओं का, शतभिष का सौ ताराओं का, पूर्वाभाद्रपद का दो ताराओं का, उत्तराभाद्रपद का दो ताराओं का और रेवती का स्वरूप बत्तिस ताराओं का है ॥ ५७ ॥

अश्विन्यादि नक्षत्रों का रूप

अश्व्यादिरूपं तुरगास्ययोनिक्षुरोनएणास्यमणीगृहं च ।
पृषत्कचक्रे भवनं च मञ्चः शय्याकरो मौक्तिकविद्रुमं च ॥ ५८ ॥
तोरणं बलिनिभं च कुण्डलं सिंहपुच्छगजदन्तमञ्चकाः ।
त्र्यस्त्रि च त्रिचरणाभमर्दलो वृत्तमञ्चयमलाभमर्दलाः ॥ ५९ ॥

अन्वयः—तुरगास्ययोनिक्षुरः, अनः, एणास्यमणिः, गृहं च, पृषत्कचक्रे भवनं च, मञ्चः, शय्या, करः, मौक्तिकविद्रुमं च, तोरणं, बलिनिभं च, कुण्डलं, सिंहपुच्छगजदन्तमञ्चकाः, त्र्यस्त्रि च, त्रिचरणाभमर्दलः, वृत्तमञ्चयमलाभमर्दलाः [एतत्] अश्व्यादिरूपं (ज्ञेयम्) ॥ ५८-५९ ॥

घोड़े के मुख के सदृश अश्विनी, योनि के सदृश भरणी, छुरा के सदृश कृत्तिका, गाड़ी के सदृश रोहिणी, हरिण के मुख के सदृश मृगशिरा, मणि के सदृश आर्द्रा, घर के सदृश पुनर्वसु, बाण के सदृश पुष्य, चक्राकार आश्लेषा, घर के समान मघा, मचान के सदृश पूर्वाफाल्गुनी, खाट के सदृश उत्तराफाल्गुनी, हाथ के सदृश हस्त, मोती के सदृश चित्रा, मूँगा के सदृश स्वाती, तोरण के सदृश विशाखा, भात के ढेर के सदृश अनुराधा, कुण्डल के सदृश ज्येष्ठा, सिंह की पूँछ के सदृश मूल, हाथी-दाँत के सदृश पूर्वाषाढ़, मचान के सदृश उत्तराषाढ़, त्रिकोणाकार अभिजित्, वामन भगवान् के सदृश श्रवण, नगाड़ा के सदृश धनिष्ठा, मण्डलाकार शतभिष, मचान के सदृश पूर्वाभाद्रपद, जुड़े हुए दो नक्षत्र उत्तराभाद्रपद और नगाड़ा के सदृश रेवती है ॥ ५८-५९ ॥

जलाशय-वाटिका-देवप्रतिष्ठा के मुहूर्त्त

जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा सौम्यायने जीवशशाङ्कशुक्रे ।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्यात्पक्षे सिते स्वर्क्षतिथिक्षण वा ॥ ६० ॥
रिक्तारवर्ज्ये दिवसेऽतिशरता शशाङ्कपापैस्त्रिभवाङ्गसंस्थैः ।
व्यन्त्याष्टगैः सत्खचरैर्मृगेन्द्रे सूर्यो घटे को युवतौ च विष्णुः ॥ ६१ ॥
शिवो नृयुग्मे द्वितनौ च देव्यः क्षुद्राश्चरे सर्व इमे स्थिरर्क्षे ।
पुष्ये ग्रहा विघ्नपयक्षसर्पभूतादयोऽन्त्ये श्रवण जिनश्च ॥ ६२ ॥
इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ नक्षत्रप्रकरणं समाप्तम् ॥ २ ॥

अन्वयः—सौम्यायने, जीवशशाङ्कशुक्रे दृश्ये, मृदुक्षिप्रचरध्रुवे, सिते पक्षे, वा स्वर्क्षतिथिक्षणे, रिक्तारवर्ज्ये दिवसे, शशाङ्कपापैः त्रिभवाङ्गसंस्थैः सत्खचरैः व्यन्त्याष्टगैः (तदा) जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा अतिशस्ता स्यात् । मृगेन्द्रे सूर्यः, घटे कः, युवतौ विष्णुः, नृयुग्मे शिवः, च द्वितनौ देव्यः, चरे क्षुद्राः, इमे सर्वे स्थिरर्क्षे [स्थाप्याः] पुष्ये ग्रहाः, अन्त्ये विघ्नपयक्षसर्पभूतादयः (स्थाप्याः), श्रवणे जिनः (स्थाप्यः) ॥ ६०-६२ ॥

उत्तरायण में; बृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्र के उदय रहते; मृदुसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक, चरसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक नक्षत्रों में; शुक्लपक्ष में; जिस देवता की प्रतिष्ठा आदि करना हो उसी के नक्षत्र, तिथि और मुहूर्त्त में; रिक्ता तिथि और मंगल दिन को छोड़ अन्य तिथि और दिवस में तड़ागादि जलाशयों का उत्सर्ग, बगीचे आदि का उत्सर्ग और देवताओं की स्थापना शुभ होती है । लग्न से तीसरे, गेरहवें और छठे स्थान में चन्द्रमा वा पापग्रहों के रहते; आठवें और बारहवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में शुभग्रहों के रहते और स्थिर वा द्विस्वभाव लग्नों में सामान्यतः सब देवताओं की प्रतिष्ठा शुभ होती है । परन्तु विशेष यह है कि सिंह लग्न में सूर्य की, कुम्भ में ब्रह्मा की, कन्या में विष्णु की, मिथुन में शिव की, द्विस्वभाव लग्नों में देवी की, चर लग्नों में योगिनी आदि देवियों की, स्थिर लग्नों में उक्तानुक्त सब देवताओं की, पुष्य नक्षत्र में चन्द्रादि आठ ग्रहों की, हस्त नक्षत्र में सूर्य की, रेवती नक्षत्र में गणेश, यक्ष, सर्प, भूतादिकों की और श्रवण नक्षत्र में बुद्ध की स्थापना शुभ होती है ॥ ६०-६२ ॥

संक्रान्तिप्रकरण

———:o:———

दिन और नक्षत्र के भेद से संक्रान्तियों के नाम और फल

घोरार्कसंक्रमणमुग्ररवौ हि शूद्रान्
ध्वाङ्क्षी विशो लघुविधौ च चरर्क्षभौमे ।
चौरान् महोदरयुता नृपतीन् ज्ञमैत्रे
मन्दाकिनी स्थिरगुरौ सुखयेच्च मन्दा ॥ १ ॥
विप्रांश्च मिश्रभभृगौ तु पशूंश्च मिश्रा
तीक्ष्णार्कजेऽन्त्यजसुखा खलु राक्षसी च ।

अन्वयः—[यदि] उग्ररवौ अर्कसंक्रमणं (स्यात्) (तदा) घोरा (नाम्नीसंक्रान्तिः) (सा) शूद्रान् सुखयेत्, लघुविधौ ध्वाङ्क्षी [सा] विशः, च (पुनः) चरर्क्षभौमे महोदर-युता (संक्रान्तिः) (सा) चौरान्, ज्ञमैत्रे मन्दाकिनी (सा) नृपतीन्, स्थिरगुरौ मन्दा (सा) विप्रान्, तु (पुनः) मिश्रभभृगौ मिश्रा (सा) पशून् सुखयेत्, तीक्ष्णार्कजे राक्षसी (सा) अन्त्यजसुखा (स्यात्) ॥ १ ॥

तीनों पूर्वा, भरणी या मघा नक्षत्र में रविवार को जो सूर्य की संक्रान्ति होती है, उसका घोरा नाम होता है। वह शूद्रों को सुख देती है। हस्त, अश्विनी, पुष्य या अभिजित् नक्षत्र में सोमवार को जो संक्रान्ति होती है, उसका नाम ध्वांक्षी होता है। वह वैश्यों को सुख देती है। स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा वा शतभिष नक्षत्र में मंगलवार को जो संक्रान्ति होती है, उसका महोदरी नाम होता है। वह चोरों को सुख देती है। मृगशिरा, रेवती, चित्रा वा अनुराधा नक्षत्र में बुधवार को जो संक्रान्ति होती है, उसका मन्दाकिनी नाम होता है। वह क्षत्रियों को सुख देती है। तीनों उत्तरा वा रोहिणी नक्षत्र में बृहस्पति के दिन जो सक्रान्ति होती है, उसका मन्दा नाम होता है। वह ब्राह्मणों को सुख देती है ॥ १ ॥ विशाखा अथवा कृत्तिका नक्षत्र में शुक्रवार को जो संक्रान्ति होती है, उसका मिश्रा नाम होता है। वह पशुओं को सुख देती है। मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा या आश्लेषा नक्षत्र में शनैश्चर को जो संक्रान्ति होती है, उसका राक्षसी नाम होता है। वह चाण्डालादि को सुख देती है।

संक्रान्तिचक्र

घोरा	ध्वांक्षी	महोदरी	मन्दाकिनी	मन्दा	मिश्रा	राक्षसी
सूर्य	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
पू० ३ भरणी मघा	हस्त अश्विनी पुष्य अभिजित्	स्वाती पुनर्वसु श्रवण धनिष्ठा शतभिष	मृगशिरा रेवती चित्रा अनुराधा	उत्तरा ३ रोहिणी	विशाखा कृत्तिका	मूल ज्येष्ठा आर्द्रा आश्लेषा
शूद्र सुखदा	वैश्य सुखदा	चोर सुखदा	क्षत्रिय सुखदा	ब्राह्मण सुखदा	पशु सुखदा	चांडालादि सुखदा

दिन-रात्रि के विभाग से संक्रान्तियों का शुभाशुभ फल

त्र्यंशे दिनस्य नृपतीन्प्रथमे निहन्ति
मध्ये द्विजानपि विशोऽपरके च शूद्रान् ॥ २ ॥
अस्ते निशाप्रहरकेषु पिशाचका-
दीन्नक्तंचरानपि नटान् पशुपालकांश्च ।
सूर्योदये सकललिङ्गिजनं च सौम्य
याम्यायनं मकरकर्कटयोनिरुक्तम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—दिनस्य प्रथमे त्र्यंशे (अर्कसंक्रमणं) नृपतीन् निहन्ति, मध्ये (त्र्यंशे) द्विजान्, अपरके (त्र्यंशे) विशः, अस्ते शूद्रान् । निशाप्रहरकेषु (क्रमेण) पिशाचकादीन्, नक्तंचरान्, नटान् अपि, पशुपालकान् च निहन्ति, सूर्योदये (अर्कसंक्रान्तिः) सकललिङ्गिजनं निहन्ति । मकरकर्कटयोः (क्रमेण) सौम्ययाम्यायनम् निरुक्तम् ॥ २-३ ॥

दिनमान के तीन भाग करके यह विचार करना चाहिए कि प्रथमभाग में सूर्यसंक्रान्ति हो तो क्षत्रियों का, दूसरे भाग में हो तो ब्राह्मणों का, तीसरे भाग में हो तो वैश्यों का और सूर्यास्तकाल में हो तो शूद्रों का नाश करती है। रात्रि के पहले पहर में संक्रान्ति हो तो पिशाचों और भूतों का, दूसरे पहर में हो तो राक्षसों का, तीसरे पहर में हो तो नटों का चौथे पहर में पशुपालकों अर्थात् अहीरों का और सूर्योदय काल में पाखण्डियों का नाश

करती है। मकर की संक्रान्ति को उत्तरायण और कर्क की संक्रान्ति को दक्षिणायन कहते हैं ॥ २-३ ॥

शेष संक्रान्तियों के नाम

षडशीत्याननं चापनृयुक्कन्याझषे भवेत् ।
तुलाजौ विषुवं विष्णुपदं सिंहालिगोघटे ॥ ४ ॥

अन्वयः—चापनृयुककन्याझषे षडशीत्याननं, तुलाजौ विषुवं, सिंहालिगोघटे विष्णुपदं (नाम संक्रमणं) भवेत् ॥ ४ ॥

धनु, मिथुन, कन्या और मीन की संक्रान्ति का षडशीतिमुख नाम है; तुला और मेष की संक्रान्ति का विषुव नाम है तथा सिंह, वृश्चिक, वृष और कुम्भ की संक्रान्ति का विष्णुपद नाम है ॥ ४ ॥

संक्रान्ति का पुण्यकाल

संक्रान्तिकालादुभयत्र नाडिकाः पुण्या मताः षोडशषोडशोष्णगोः ।

अन्वयः—उष्णगोः (यः संक्रान्तिकालः तस्मात्) संक्रान्तिकालात् उभयत्र षोडश षोडष नाडिकाः पुण्या मताः ।

सूर्य की संक्रान्ति जिस समय हो उससे पहले और पश्चात् सोलह-सोलह दण्ड पुण्यकाल मानना चाहिए। गणित से पुण्यकाल जानने की यह रीति है कि सूर्य के बिम्ब की कलाओं को साठ से गुणा करके सूर्य की गति का भाग देने से जो लब्ध हो वही संक्रान्ति से पूर्व-पर पुण्यकाल होता है।

रात्रि में संक्रान्ति का विशेष पुण्यकाल

निशीथतोऽर्वागपरत्र संक्रमे पूर्वापराहान्तिमपूर्वभागयोः ॥ ५ ॥

अन्वयः—निशीथतः अर्वागपरत्र संक्रमे (सति) (क्रमेण) पूर्वापराहान्तिमपूर्वभागयोः (पुण्यघटिका भवन्ति) ॥ ५ ॥

यदि आधी रात्रि से पूर्व संक्रान्ति हो तो पूर्व दिन का उत्तरार्द्ध पुण्यकाल और यदि आधी रात्रि के उपरांत संक्रान्ति हो तो पर दिन का पूर्वार्द्ध पुण्यकाल होता है ॥ ५ ॥

आधी रात्रि में होनेवाली संक्रान्ति का पुण्यकाल

पूर्णे निशीथे यदि संक्रमः स्याद्दिनद्वयं पुण्यमथोदयास्तात् ।
पूर्वं परस्ताद्यदि याम्यसौम्यायने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये ॥ ६ ॥

अन्वयः—यदि पूर्णे निशीथे संक्रमः स्यात् (तदा) दिनद्वयं पुण्यं, अथ उदयास्तात् पूर्वं परस्तात् यदि याम्यसौम्यायने (संक्रान्ती भवतः) (तदा) तु परे पूर्वदिने पुण्ये (स्याताम्) ॥ ६ ॥

यदि ठीक आधी रात्रि में संक्रान्ति हो तो पूर्व और पर दोनों दिन पुण्यकाल होता है। यदि सूर्योदय से पूर्व कर्क संक्रान्ति हो तो पूर्व ही दिन सम्पूर्ण पुण्यकाल और सूर्यास्त के बाद मकर संक्रान्ति हो तो पर ही दिन सम्पूर्ण पुण्यकाल होता है ॥ ६ ॥

सन्ध्याकाल का प्रमाण

सन्ध्या त्रिनाडीप्रमितार्कबिम्बादर्धोदितास्तादध ऊर्ध्वमत्र।
चेद्याम्यसौम्ये अयने क्रमात्स्तः पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्रौ ॥ ७ ॥

अन्वयः—अर्द्धोदितास्तात् अर्कबिम्बात् अधः ऊर्ध्वं त्रिनाडीप्रमिता सन्ध्या (कथिता) अत्र चेद्याम्यसौम्ये अयने (संक्रमणे भवतः) तदानी परपूर्वघस्रौ पुण्यौ स्तः ॥ ७ ॥

सूर्य का आधा बिम्ब उदय होने से पूर्व तीन दण्ड प्रातः सन्ध्या और आधा बिम्ब अस्त होने के बाद तीन दण्ड सायं सन्ध्या जानना चाहिए। यदि प्रातःसन्ध्या में कर्क संक्रान्ति हो तो सूर्योदय के अनन्तर सम्पूर्ण दिन पुण्यकाल और यदि सायंसन्ध्या में मकर संक्राति हो तो सूर्यास्त से पूर्व सम्पूर्ण दिन पुण्यकाल होता है ॥ ७ ॥

संक्रान्तियों का विशेष पुण्यकाल

याम्यायने विष्णुपदे चाद्या मध्यास्तुलाजयोः।
षडशीत्यानने सौम्ये परा नाड्योऽतिपुण्यदाः ॥ ८ ॥

अन्वयः—याम्यायने विष्णुपदे च आद्याः नाड्यः, तुलाजयोः मध्याः नाड्यः, षडशीत्यानने (तथा) सौम्ये पराः नाड्यः अतिपुण्यदाः (भवन्ति) ॥ ८ ॥

कर्क, वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ संक्रान्ति जिस समय हो उससे पूर्व सोलह दण्ड पुण्यकाल होता है। तुला और मेष संक्रान्ति जिस समय हो उससे पूर्व सोलह दण्ड और पर सोलह दण्ड मिलकर बत्तिस दण्ड अथवा पूर्व आठ और पर आठ मिलकर सोलह दण्ड पुण्यकाल होता है। मिथुन, कन्या, धनु, मीन और मकर संक्रान्ति जिस समय हो उससे पर सोलह दण्ड पुण्यकाल होता है ॥ ८ ॥

सायन संक्रान्तियों का पुण्यकाल

तथायनांशाः खरसाहताश्च स्पष्टार्कगत्या विहृता दिनाद्यैः ।
मेषादितः प्राक् चलसंक्रमाः स्युर्दाने जपादौ बहुपुण्यदास्ते ॥ ९ ॥

अन्वयः—अयनांशाः खरसाहताः च स्पष्टार्कगत्या विहृताः (लब्धैः) दिनाद्यैः मेषादितः प्राक् चलसंक्रमाः स्युः, ते दाने तथा जपादौ बहुपुण्यदाः ॥ ९ ॥

साठ से गुणे हुए अयनांशों[1] में सूर्य की स्पष्ट गति से भाग देने पर जितने दिनादि लब्ध हों, मेषादि संक्रान्तिकाल से उतने ही दिनादि पूर्व चलसंक्रम अर्थात् अयन संक्रान्तियाँ होती हैं। वे अयन संक्रान्तियाँ दान, जप, होम और श्राद्धादि पुण्य कर्म करने के लिए बहुत पुण्यदायक हैं ॥ ९ ॥

नक्षत्रों की सम, बृहत्, जघन्य संज्ञा

समं मृदुक्षिप्रवसुश्रवोग्निमघात्रिपूर्वास्त्रपभं बृहत्स्यात् ।
ध्रुवद्विदैवादितिभं जघन्यं सार्पाम्बुपार्द्राऽनिलशाक्रयाम्यम् ॥ १० ॥

अन्वयः—मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽग्निमघात्रिपूर्वास्त्रपभ समं स्यात्, ध्रुवद्विदैवादितिभं बृहत् स्यात्, सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यं जघन्यं स्यात् ॥ १० ॥

मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, चित्रा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद और मूल नक्षत्र की सम संज्ञा, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, विशाखा और पुनर्वसु की बृहत्संज्ञा तथा आश्लेषा, शतभिष, आर्द्रा, स्वाती, ज्येष्ठा और भरणी की जघन्य संज्ञा है ॥ १० ॥

उक्त संज्ञाओं का प्रयोजन

जघन्यभे संक्रमणे मुहूर्त्ताः शरेन्दवो बाणकृता बृहत्सु ।
खरामसंख्या समभे महर्घं समर्घसाम्यं विधुदर्शनेऽपि ॥ ११ ॥

अन्वयः—जघन्यभे संक्रमणे शरेन्दवः मुहूर्त्ताः, बृहत्सु बाणकृताः मुहूर्त्ताः, समभे खरामसङ्ख्याः मुहूर्त्ताः, (तत्र) महर्घसमर्घसाम्यं (क्रमात्फलं ज्ञेयम्)। विधुदर्शनेऽपि (एवं फलं भवति) ॥ ११ ॥

१—वर्त्तमान शाके में चारसौ चवालीस घटाकर उसमें साठ का भाग देने से अयनांश स्पष्ट होता है। यथा शाके १८१४ में ४४४ घटाया, १३७० शेष रहे, इनमें साठ का भाग दिया तो २२। ५० हुए, यही लब्ध अयनांश हुआ।

जघन्यसंज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो तो पन्द्रह मुहूर्त्त, बृहत्संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो तो पैंतालिस मुहूर्त्त और समसंज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो तो तीस मुहूर्त्त होते हैं। जिस महीने की संक्रान्ति में पन्द्रह मुहूर्त्त होते हैं उस महीने में अन्न महँगा और जिस महीने की संक्रान्ति में पैंतालिस मुहूर्त्त होते हैं उस महीने में अन्न सस्ता और जिस महीने की संक्रान्ति में तीस मुहूर्त्त होते हैं उस महीने में अन्न न महँगा न सस्ता, किन्तु समभाव बिकता है। चन्द्रोदय में भी ऐसे ही अन्न का भाव जानना चाहिए अर्थात् जघन्यसंज्ञक नक्षत्रों में प्रथम चन्द्रमा का उदय हो तो उस महीने भर अन्न महँगा, बृहत्संज्ञक नक्षत्रों में चन्द्रमा का उदय हो तो उस महीने में अन्न सस्ता और समसंज्ञक नक्षत्रों में चन्द्रमा का उदय हो तो उस महीने में अन्न समभाव बिकता है ॥ ११ ॥

कर्क संक्रान्ति के रविवारादि में अब्दविंशोपक

अर्कादिवारे संक्रान्तौ कर्कस्याब्दविंशोपकाः।
दिशो नखा गजाः सूर्या धृत्योऽष्टादश सायकाः ॥ १२ ॥

अन्वयः—अर्कादिवारे कर्कस्य संक्रान्तौ (क्रमात्) दिशः, नखाः, गजाः, सूर्याः, धृत्यः अष्टादश, सायकाः, (एते) अब्दविंशोपकाः (ज्ञेयाः) ॥ १२ ॥

कर्क की संक्रान्ति यदि रविवार को हो तो दश, सोमवार को बीस, मंगल को आठ, बुधवार को बारह, बृहस्पति को अठारह, शुक्रवार को भी अठारह और शनैश्चर को पाँच अब्दविंशोपक होते हैं ॥ १२ ॥

कर्क संक्रान्ति में अब्दविंशोपकचक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	बृहस्पति	शुक्रवार	शनैश्चर
१०	२०	८	१२	१८	१८	५

स्यात्तैतिले नागचतुष्पदे रविः सुप्तो निविष्टस्तु गरादिपञ्चके।
किंस्तुघ्न ऊर्ध्वः शकुनौ सकौलवेऽनिष्टः समः श्रेष्ठ इहार्घवर्षणे ॥ १३ ॥

अन्वयः—तैतिले नागचतुष्पदे (करणे) रविः सुप्तः (सन् संक्रमितः स्यात्) तु (पुनः) गरादिपञ्चके निविष्टः (सन् संक्रमितः स्यात्) किंस्तुघ्ने (तथा) सकौलवे शकुनौ ऊर्ध्वं (सन् संक्रमितः स्यात्) इह अर्घवर्षणे (क्रमात्) नेष्टः, समः, श्रेष्ठः (स्यात्) ॥ १३ ॥

तैतिल, नाग और चतुष्पद करण में सोते हुए; गर, वणिज, भद्रा, बव और बालव में बैठे हुए; किंस्तुघ्न, शकुनि और कौलव में खड़े हुए सूर्य संक्रान्ति करते हैं। सोते हुए सूर्य अन्नादि की महँगी और अवर्षणकारक होते हैं, बैठे हुए सूर्य सम अर्थात् इष्टानिष्ट कुछ नहीं करते और खड़े हुए सूर्य श्रेष्ठ अर्थात् अन्नादि की सस्ती और वर्षा करते हैं ॥ १३ ॥

संक्रान्तियों के वाहन, वस्त्र, आयुध, भक्ष्य, लेपन, जाति और पुष्प

सिंहव्याघ्रवराहरासभगजा वाहद्विषद्घोटकाः
श्वाजौ गौश्चरणायुधश्च बवतो वाहा रवेः संक्रमे ।
वस्त्रं श्वेतसुपीतहारितकपाण्डुवारक्तकालासितं
चित्रं कम्बलदिग्घनाभमथ शस्त्रं स्याद्भुशुण्डी गदा ॥ १४ ॥
खड्गोदण्डशरासतोमरमथो कुन्तश्च पाशोऽङ्कुशो-
ऽस्त्रं बाणस्त्वथ भक्ष्यमन्नपरमान्नं भैक्षपक्वान्नकम् ।
दुग्धं दध्यपि चित्रितान्नगुडमध्वाज्यं तथा शर्करा-
ऽथो लेपो मृगनाभिकुङ्कुममथो पाटीरमृद्रोचनम् ॥ १५ ॥
यावश्चोतुमदो निशाञ्जनमथो कालागुरुश्चन्द्रको
जातिर्दैवतभूतसर्पविहगाः पश्वेणविप्रास्ततः ।
क्षत्रीवैश्यकशूद्रसंकरभवाः पुष्पं च पुन्नागकं
जातीबाकुलकेतकानि च तथा बिल्वार्कदूर्वाम्बुजम् ॥ १६ ॥
स्यान्मल्लिकापाटलिकाजपा च संक्रान्तिवस्त्राशनवाहनादेः ।
नाशश्च तद्वृत्त्युपजीविनां च स्थितोपविष्टस्वपतां च नाशः ॥ १७ ॥

अन्वयः—बवतः [बवमारभ्य] रवेः संक्रमे (सति) (क्रमात्) सिंहव्याघ्रवराहरासभगजाः द्विषद्घोटकाः श्वा अजः गौःचरणायुधः (एते) वाहाः (ज्ञेयाः), (तथा) श्वेतसुपीतहारितकपाण्डुरक्तकालासितं चित्रं कम्बलदिग्घनाभं [एतद्वस्त्रं ज्ञेयं], अथ भुशुण्डी गदा खड्गः दण्डशरासतोमरं अथो कुन्तः पाशः अंकुशः अस्त्रं बाणः (एतत्) शस्त्रं स्यात्, अथ अन्नपरमान्नंभैक्ष्यपक्वान्नकम् दुग्धं, दधि अपि (तथा) चित्रितान्नगुडमध्वाज्य तथा शर्करा (एतत्) भक्ष्यं (ज्ञेयम्), अथ मृगनाभिकुङ्कुमं अथो पाटीरमृद्रोचनम् यावः च (पुनः) ओतुमदः निशाञ्जनं अथ कालागुरुः चन्द्रकः (एषः) लेपः, (तथा) दैवतभूतसर्पविहगाः पश्वेणविप्राः ततः क्षत्रियवैश्यकशूद्रसंकरभवाः [एषा] जातिः (ज्ञेया), च (पुनः) पुन्नागकं जातीबाकुलकेतकानि च (तथा) विल्वार्कदूर्वाम्बुज मल्लिका पाटलिका च (पुनः) जपा (एतत्) पुष्पं स्यात्, च (पुनः) संक्रांतिवस्त्रासन-

वाहनादेः तद्वृत्त्युपजीविनां च नाशः (स्यात्), च (तथा) स्थितोपविष्टस्वपतां नाशः (स्यात्) ॥ १४-१७ ॥

बवादि सात चर और शकुनि आदि चार स्थिर मिलकर ग्यारह करणों में होनेवाली सूर्य संक्रान्तियों के क्रम से सिंहादि वाहन, श्वेतादि वस्त्र, भुशुण्डी आदि आयुध, अन्नादि भक्ष्य, कस्तूरी आदि लेपन, देवतादि जाति और पुन्नागादि पुष्प होते हैं। बव करण में होनेवाली संक्रान्ति सिंह पर सवार, श्वेतवस्त्र धारण किये, भुशुण्डी हाथ में लिये, अन्न का भक्षण करती हुई, कस्तूरी का लेप देह में लगाये, देवताजातिवाली, नागकेसर का फूल हाथ में लिये होती है। बालव करण में होनेवाली संक्रान्ति व्याघ्र पर सवार, पीले वस्त्र धारण किये, गदा हाथ में लिये, खीर भक्षण करती हुई, कुंकुम का लेप देह में लगाये, भूतजातिवाली, चमेली का फूल हाथ में लिये होती है। कौलव करण में होनेवाली संक्रान्ति वराह पर सवार, हरे वस्त्र धारण किये, तलवार हाथ में लिये, भीख माँगने से मिले हुए अन्नादि का भक्षण करती हुई, लाल चन्दन का लेप देह में लगाये सर्पजातिवाली, मौलसिरी का फूल हाथ में लिये होती है। तैतिल करण में होनेवाली संक्रान्ति गधे पर सवार, थोड़ा पीला वस्त्र धारण किये, दण्ड हाथ में लिये, पुआ आदि पक्वान्न का भक्षण करती हुई, मिट्टी का लेप देह में लगाये, पक्षीजातिवाली, केतकी का फूल हाथ में लिये होती है। गर करण में होनेवाली संक्रान्ति हाथी पर सवार, लाल वस्त्र धारण किये, धनुष हाथ में लिये, दूध का भक्षण करती हुई, गोरोचन का लेप देह में लगाये, पशुजातिवाली, बेल का फूल हाथ में लिये होती है। वणिज करण में होनेवाली संक्रान्ति भैंसे पर सवार, श्याम रंग वस्त्र धारण किये, तोमर हाथ में लिये, दही का भक्षण करती हुई, महावर का लेप देह में लगाये, मृगजातिवाली, मदार का फूल हाथ में लिये होती है। विष्टि करण में होनेवाली संक्रान्ति घोड़े पर सवार, काला वस्त्र धारण किये, बरछी हाथ में लिये, चित्रान्न अर्थात् एक में पके हुए चावल, मूँग, मसूर, हलदी का भक्षण करती हुई, बिलार के पसीने का लेप देह में लगाये, ब्राह्मणजातिवाली, दूब हाथ में लिये होती है। शकुनि करण में होनेवाली संक्रान्ति कुत्ते पर सवार, अनेक रंगवाला वस्त्र धारण किये, पाश हाथ में लिये, गुड़ का भक्षण करती हुई, हलदी का लेप देह में लगाये, क्षत्रिय जातिवाली, कमल का फूल हाथ में लिये होती है। चतुष्पद करण में

होनेवाली संक्रान्ति मेढ़े पर सवार, कम्बल धारण किये, अंकुश हाथ में लिये, मधु का भक्षण करती हुई, सुरमा का लेप देह में लगाये, वैश्य-जातिवाली, चमेली के फूल हाथ में लिये होती है। नाग करण होने-वाली संक्रान्ति बैल पर सवार, नंगी, अस्त्र हाथ में लिये, घी का भक्षण करती हुई, अगर का लेप देह में लगाये, शूद्रजातिवाली, पाढरि का फूल हाथ में लिये होती है। किंस्तुघ्न करण में होनेवाली संक्रान्ति चरणा-युध अर्थात् मुर्ग पर सवार, मेघ के समान वस्त्र धारण किये, बाण हाथ में लिये, शक्कर का भक्षण करती हुई, कपूर का लेप देह में लगाये, वर्णसंकर-जातिवाली, गुड़हर का फूल हाथ में लिये होती है। जिस महीने की संक्रान्ति के जो वाहन, वस्त्र, भक्षणादि कहे हैं, उस महीने में उन सबका नाश अथवा उन वस्तुओं से जीविका करनेवालों का नाश होता है। संक्रान्ति करते समय सूर्य की सुप्त, उपविष्ट और स्थित, ये तीन अवस्थाएँ कही हैं, उन अवस्थाओं में वर्तमान अर्थात् सोते हुए, बैठे हुए और खड़े हुए प्राणियों का भी नाश होता है ॥ १४-१७ ॥

संक्रान्तिवश से शुभाशुभ फल

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिभे स्वभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्गभे ।
सुखं त्रिभ पीडनमङ्गभेंशुकं त्रिभेऽर्थहानी रसभे धनागमः ॥ १८ ॥

अन्वयः—संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतः त्रिभे स्वभे गमनं निरुक्तम्, ततः अङ्गभे सुखम्, (ततः) त्रिभे पीडनम्, (ततः) अङ्गभे अंशुकम्, (ततः) त्रिभे अर्थहानिः, (ततः) रसभे धनागमः (स्यात्) ॥ १८ ॥

संक्रान्ति जिस नक्षत्र में हो उसके पूर्वनक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिने। यदि प्रथम तीन नक्षत्रों में से जन्मनक्षत्र हो तो कहीं जाना पड़े, चौथे से लेकर छः नक्षत्रों में हो तो सुख, दशवें से लेकर तीन नक्षत्रों में शरीरपीड़ा, तेरहवें से लेकर छः नक्षत्रों में वस्त्र की प्राप्ति, उन्नीसवें से लेकर तीन नक्षत्रों में द्रव्यादि की हानि और बाइसवें से लेकर छः नक्षत्रों में धन की प्राप्ति होती है ॥ १८ ॥

संक्रान्ति के नक्षत्र से जन्मनक्षत्र चक्र

३	६	३	६	३	६
गमन	सुख	व्यथा	वस्त्रप्राप्ति	हानि	धनप्राप्ति

सूर्यादि के बली रहते कार्य और संक्रान्ति करते हुए ग्रहों का बल

नृपेक्षणं सर्वकृतिश्च संगरः शास्त्रं विवाहो गमदीक्षणे रवेः ।
वीर्येऽथ ताराबलतः शुभोविधुर्विधोर्बलेऽर्कोऽर्कबले कुजादयः ॥ १९ ॥

अन्वयः—रवेः (सकाशात्) वीर्ये (क्रमेण) नृपेक्षणं, सर्वकृतिः, संगरः, शास्त्रं, विवाहः, गमदीक्षणे (शुभे भवतः), ताराबलतः (विधुः) (शुभः), विधोः बलात् रविः (शुभः), तद्बलतः कुजादयः शुभाः (भवन्ति) ॥ १९ ॥

सूर्य के बली रहते अथवा रविवार को राजा का दर्शन, चन्द्रमा के बली रहते अथवा सोमवार को सब कार्य, मङ्गल के बली रहते अथवा मङ्गल के दिन युद्ध, बुध के बली रहते अथवा बुधवार को शास्त्र पढ़ना, बृहस्पति के बली रहते अथवा बृहस्पति के दिन विवाह करना, शुक्र के बली रहते अथवा शुक्र के दिन यात्रा करना और शनैश्चर के बली रहते अथवा शनैश्चर के दिन यज्ञादि की दीक्षा लेना चाहिए। यदि चन्द्रमा की संक्रान्ति के काल में तारा बली हो तो अशुभ भी चन्द्रमा सवा दो दिन तक शुभदायक होता है। सूर्य की संक्रान्ति के समय यदि चन्द्रमा बली हो तो अशुभ भी सूर्य एक महीने तक शुभ होता है। मंगल की संक्रान्ति के काल में यदि सूर्य बली हो तो अशुभ भी मंगल डेढ़ महीने तक शुभ होता है। ऐसे ही बुधादि को भी जानना चाहिए ॥ १९ ॥

अधिकमास और क्षयमास का निर्णय

स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीन उक्तो मासोऽधिमासः क्षयमासकस्तु ।
द्विसंक्रमस्तत्र विभागयोः स्तस्तिथेर्हि मासौ प्रथमान्त्यसंज्ञौ ॥ २० ॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ संक्रान्तिप्रकरणं समाप्तम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीनः मासः अधिमासः उक्तः, तु (तथा) द्विसंक्रमः मासः क्षयमासकः (स्यात्) तत्र तिथेः विभागयोः प्रथमान्त्यसंज्ञौ मासौ स्तः ॥ २० ॥

शुक्लपक्ष की परीवा से लेकर अमावास्या पर्यन्त चान्द्रमास होता है। जिस चान्द्रमास में स्पष्ट सूर्यसंक्रान्ति न हो वह मास अधिमास अर्थात् मलमास कहा जाता है और जिस मास में स्पष्ट सूर्य की दो संक्रान्तियाँ हों वह क्षयमास कहा जाता है। क्षयमास में तिथि के पूर्वार्द्ध उत्तरार्द्ध भागों के सम्बन्ध से पहिला और दूसरा मास जानना चाहिए अर्थात् उस एक ही

क्षयमास में दो मास माने जाते हैं। शुक्लपक्ष को पहिला और कृष्णपक्ष को दूसरा मास। यदि तिथि के पूर्वार्द्ध में किसी का जन्म अथवा मरण हुआ हो तो उसका जन्मदिन अथवा क्षयाह श्राद्ध पहिले मास में और यदि तिथि के उत्तरार्द्ध में किसी का जन्म अथवा मरण हुआ हो तो उसका जन्मदिन अथवा क्षयाह श्राद्ध दूसरे मास में होता है ॥ २० ॥

गोचरप्रकरण

—:o:—

सूर्यो रसान्त्ये खयुगेऽग्निनन्दे शिवाक्षयोर्भौमशनी तमश्च।
रसाङ्कयोर्लाभशरे गुणान्त्ये चन्द्रोऽम्बराब्धौ गुणनन्दयोश्च ॥ १ ॥
लाभाष्टमे चाद्यशरे रसान्त्ये नगद्वये ज्ञो द्विशरेऽब्धिरामे।
रसाङ्कयोर्नागविधौ खनागे लाभव्यये देवगुरुः शराब्धौ ॥ २ ॥
द्व्यन्त्ये नवांशे द्विगुणे शिवाग्नौ शुक्रः कुनागे द्विनगेऽग्निरूपे।
वेदाम्बरे पञ्चनिधौ गजेषौ नन्देशयोर्भानुरसे शिवाग्नौ ॥ ३ ॥
क्रमाच्छुभो विद्ध इति ग्रहः स्यात्पितुः सुतस्यात्र न वेधमाहुः।

अन्वयः—स्वजन्मराशेः सूर्यः रसान्त्ये, खयुगे, अग्निनन्दे, शिवाक्षयोः। च (तथा) भौमशनी (तथा) तमः रसाङ्कयोः, लाभशरे, गुणान्त्ये। च (तथा) चन्द्रः अम्बराब्धौ, गुणनन्दयोः, लाभाष्टमे, आद्यशरे, रसान्त्ये, नगद्वये, (तथा) ज्ञः द्विशरे, अब्धिरामे, रसाङ्कयोः, नागविधौ, खनागे, लाभव्यये। (तथा) देवगुरुः शराब्धौ, द्व्यन्त्ये, नवांशे, द्विगुणे, शिवाग्नौ। (तथा) शुक्रः कुनागे, द्विनगे, अग्निरूपे, वेदाम्बरे, पञ्चनिधौ, गजेषौ, नन्देशयोः, भानुरसे, शिवाग्नौ, इति (एवं) क्रमात् ग्रहः शुभः स्यात् विद्धः स्यात्। अत्र पितुः सुतस्य वेधं न आहुः ॥ १-३ ॥

सूर्यादि ग्रह छठे बारहवें आदि स्थानों में क्रम से शुभ और विद्ध होते हैं अर्थात् जन्मराशि से छठी राशि में स्थित सूर्य शुभ और यदि जन्म राशि से बारहवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो सूर्य विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है। ऐसे ही दशवें स्थान में स्थित सूर्य शुभ और यदि चौथे स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो सूर्य विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है। ऐसे ही तीसरे स्थान में स्थित सूर्य शुभ और यदि नवें स्थान में शनैश्चर को छोड़

अन्य ग्रह स्थित हों तो सूर्य विद्ध हो जाता है। ऐसे ही गेरहवें स्थान में स्थित सूर्य शुभ और यदि पाँचवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। मंगल, शनैश्चर, राहु, केतु ये ग्रह जन्मराशि से छठे स्थान में शुभ और यदि नवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाते हैं। गेरहवें स्थान में शुभ और यदि पाँचवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाते हैं। तीसरे स्थान में शुभ और यदि बारहवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाते हैं। परन्तु शनैश्चर भी सूर्य से विद्ध नहीं होता; क्योंकि आगे कहा है कि गोचर में पिता पुत्र का वेध नहीं होता। जन्मराशि से दशवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ और यदि चौथे स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही तीसरे स्थान में शुभ और यदि नवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है ॥ १ ॥ ऐसे ही गेरहवें स्थान में चन्द्रमा शुभ और यदि आठवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही पहले स्थान में चन्द्रमा शुभ और यदि पाँचवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही छठे स्थान में चन्द्रमा शुभ और यदि बारहवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही सातवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ और यदि दूसरे स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। जन्मराशि से दूसरे स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि पाँचवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही चौथे स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि तीसरे स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही छठे स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि नवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही आठवें स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि पहले स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही दशवें स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि आठवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही गेरहवें स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि बारहवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। जन्म राशि से पाँचवें

स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि चौथे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है ।। २ ।। ऐसे ही दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि बारहवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही नवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि दशवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि तीसरे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही गेरहवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि तीसरे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । जन्मराशि से पहिले स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि आठवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही दूसरे स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि सातवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही तीसरे स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि पहिले स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही चौथे स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि दशवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही पाँचवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि नवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही आठवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि पाँचवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही नवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि गेरहवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही बारहवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि छठे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही गेरहवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि तीसरे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है ।। ३ ।।

वामवेध और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का बल

दुष्टोऽपि खेटो विपरीतवेधाच्छुभो द्विकोणे शुभदः सितेऽब्जः ।। ४ ।।

अन्वयः—(तथा) दुष्टः अति खेटः विपरीतवेधात् शुभः (स्यात्) । तथासिते [शुक्लपक्षे] अब्जः द्विकोणे शुभदः स्यात् ।। ४ ।।

अशुभ भी ग्रह विपरीत वेध से शुभ हो जाता है, अर्थात् जन्मराशि से बारहवें, चौथे, नवें, पाँचवें स्थान में स्थित सूर्य अशुभ होता है परन्तु यदि छठे, दशवें, तीसरे, गेरहवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो तो शुभ हो जाता है । ऐसे ही नवें, पाँचवें, बारहवें स्थान में स्थित मङ्गल, शनैश्चर, राहु, केतु ये ग्रह अशुभ होते हैं, परन्तु छठे, गेरहवें, तीसरे स्थान में स्थित किसी

ग्रह से यदि विद्ध हों तो शुभ हो जाते हैं। ऐसे ही चौथे, नवें, आठवें, पाँचवें, बारहवें और दूसरे स्थान में स्थित चंद्रमा अशुभ होता है परन्तु दशवें, तीसरे, गेरहवें, पहिले, छठे, सातवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही पाँचवें, तीसरे, नवें, पहिले, आठवें, बारहवें स्थान में स्थित बुध अशुभ होता है, परन्तु दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें, गेरहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही चौथे, बारहवें, दशवें, तीसरे स्थान में स्थित बृहस्पति अशुभ होता है परन्तु पाँचवें, दूसरे, नवें और गेरहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही आठवें, सातवें, पहिले, दशवें, नवें, पाँचवें, गेरहवें, छठे और तीसरे स्थान में स्थित शुक्र अशुभ होता है, परन्तु पहिले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, बारहवें, गेरहवें, स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। शुक्लपक्ष में छठे, आठवें, चौथे स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध न हो तो दूसरे, नवें, पाँचवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ होता है। इस वामवेध में भी पिता-पुत्र का वेध नहीं होता ॥ ४ ॥

क्रमवेध और विपरीतवेध में मतभेद

स्वजन्मराशेरिह वेधमाहुरन्ये ग्रहाधिष्ठितराशितः सः।
हिमाद्रिविन्ध्यान्तर एव वेधो न सर्वदेशेष्विति काश्यपोक्तिः ॥ ५ ॥

अन्वयः—इह अन्ये (आचार्याः) स्वजन्मराशेः वेधं आहुः स वेधः ग्रहाधिष्ठित-राशित एव तथा हिमाद्रिविन्ध्यान्तरे [देशे] एव ज्ञेयः, सर्वदेशेषु न इति काश्य-पोक्तिः ॥ ५ ॥

नारदादि आचार्यों ने जन्मराशि से उक्त दोनों वेध कहे हैं और कश्यपादि आचार्यों ने जिस राशि में ग्रह स्थित हो उस राशि से उक्त दोनों वेध कहे हैं। यथा जन्मराशि से छठे स्थान में स्थित सूर्य शुभ होता है, परन्तु जिस राशि में वह स्थित हो उससे बारहवीं राशि में शनि को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है। ऐसे ही जन्मराशि से बारहवें स्थान में स्थित सूर्य अशुभ होता है, परन्तु वह जिस राशि में स्थित हो उससे छठी राशि में शनि को छोड़ अन्य ग्रह यदि स्थित हों तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही चन्द्रादि के भी दोनों प्रकार के वेधों को जानना चाहिए। इन वेधों का दोष हिमालय और विन्ध्याचल के मध्यवर्ती देशों में

ही होता है, अन्य देशों में नहीं, ऐसा कश्यपजी का वचन है। परन्तु बृहस्पतिजी ने क्रमवेध जन्मराशि से और विपरीतवेध ग्रह-स्थान से कहा है। हमारी समझ में भी यही माननीय है ॥ ५ ॥

ग्रहण-नक्षत्र का फल

जन्मर्क्षे निधनं ग्रहे जनिभतो घातः क्षतिः श्रीर्व्यथा
चिन्तासौख्यकलत्रदौस्थ्यमृतयः स्युर्माननाशः सुखम् ।
लाभोऽपाय इति क्रमात्तदशुभध्वस्त्यै जपः स्वर्णगो-
दानं शान्तिरथो ग्रहं त्वशुभदं नो वीक्ष्यमाहुः परे ॥ ६ ॥

अन्वयः—जन्मर्क्षे ग्रहे निधनं, जनिभतः ग्रहणे घातः, क्षतिः, श्रीः, व्यथा, चिन्ता, सौख्य-कलत्रदौस्थ्यमृतयः, माननाशः, सुखं, लाभः, अपाय इति क्रमात् स्युः। तदशुभ-ध्वस्त्यै जपः, स्वर्णगोदानं, शान्तिः, अथो परे [आचार्याः] अशुभदं ग्रहं नो वीक्ष्यं आहुः ॥ ६ ॥

जिसके जन्मनक्षत्र में सूर्य या चन्द्रमा का ग्रहण हो उसका मरण होता है। जन्मराशि से लेकर बारह राशियों में ग्रहण हो तो इस क्रम से घातादि फल होता है, अर्थात् जन्मराशि में चन्द्रमा वा सूर्य का ग्रहण हो तो शरीर-पीड़ा, जन्मराशि से दूसरी राशि में हो तो हानि, तीसरी में लक्ष्मी, चौथी में व्यथा, पाँचवीं में पुत्रादि की चिंता, छठी में सौख्य, सातवीं में स्त्रीमरण, आठवीं राशि में अपना मरण, नवीं राशि में माननाश, दशवीं राशि में सुख, गेरहवीं राशि में लाभ और बारहवीं राशि में मरण होता है।

चन्द्र-सूर्य-ग्रहण दोष के नाश के लिए त्र्यम्बकादि मन्त्रों का जप, सोने वा गौ का दान यही शान्ति है। अशुभ फल देनेवाले ग्रहण को नहीं देखना चाहिए, ऐसा कोई आचार्य कहते हैं ॥ ६ ॥

चन्द्रमा का विशेष शुभाशुभत्व

पापान्तः पापयुग्द्यूने पापाच्चन्द्रः शुभोऽप्यसत् ।
शुभांशे चाधिमित्रांशे गुरुदृष्टोऽशुभोऽपि सत् ॥ ७ ॥

अन्वयः—चन्द्रः पापान्तः पापयुक्, पापात् द्यूने, शुभोऽपि असत् [अशुभः], वा शुभांशे, अधिमित्रांशे, वा गुरुदृष्टः, अशुभोऽपि सत् [शुभः] (स्यात्) ॥ ७ ॥

दो पापग्रहों के मध्य में स्थित, अथवा पापग्रहसंयुक्त, अथवा पापग्रह के स्थान से सातवें स्थान में स्थित शुभ भी चन्द्रमा अशुभ फल देता है।

और यदि शुभग्रहों के नवांश में अथवा अपने अधिमित्र के नवांश में स्थित हो और बृहस्पति देखता हो तो अशुभ भी चन्द्रमा शुभ फल देता है ॥ ७ ॥

प्रकारान्तर से चन्द्रमा का शुभाशुभफल

सितासितादौ सद्दुष्टे चन्द्रे पक्षौ शुभावुभौ ।
व्यत्यासे चाशुभौ प्रोक्तौ संकटेऽब्जबलं त्विदम् ॥ ८ ॥

अन्वयः—सितासितादौ सद्दृष्टे चन्द्रे उभौ पक्षौ शुभौ प्रोक्तौ । व्यत्यासे च अशुभौ प्रोक्तौ, इदं अब्जबलं संकटे विचार्यम् ॥ ८ ॥

शुक्लपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा शुभ होता है उसका पक्षभर शुभ ही रहता है और कृष्णपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा अशुभ होता है उसका भी पक्षभर शुभ ही रहता है और इससे विपरीत अर्थात् शुक्लपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा अशुभ होता है उसका सम्पूर्ण पक्ष अशुभ रहता है और कृष्णपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा शुभ होता है उसका सम्पूर्ण पक्ष अशुभ रहता है। यह चन्द्रमा का बल किसी संकट के समय अर्थात् अत्यन्त आवश्यक विवाह वा यात्रादि करने में यदि तात्कालिक चन्द्रशुद्धि न हो तो विचारना चाहिए, अन्यथा नहीं ॥ ८ ॥

ग्रहों की शान्ति के लिए नवरत्न धारण

वज्रं शुक्रेऽब्जे सुमुक्ता प्रवालं भौमेऽगौ गोमेदमार्कौ सुनीलम् ।
केतौ वैडूर्यं गुरौ पुष्पकं ज्ञे पाचिः प्राङ्माणिक्यमर्के तु मध्ये ॥ ९ ॥

अन्वयः—शुक्रे वज्रं, अब्जे सुमुक्ता, भौमे प्रवालं, अगौ गोमेदं, आर्कौ सुनीलं, केतौ वैडूर्यं, गुरौ पुष्पकं, ज्ञे पाचिः (इति) प्राक् (क्रमेण रत्नानि धार्याणि) अर्के मध्ये माणिक्यं (धार्यम्) ॥ ९ ॥

नव कोष्ठोंवाला एक सोने का यन्त्र बनवाकर उसके पूर्व कोष्ठ में शुक्र की प्रसन्नता के लिए हीरा, आग्नेय कोष्ठ में चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए मोती, दक्षिण कोष्ठ में मंगल की प्रसन्नता के लिए मूँगा, नैर्ऋत्य कोष्ठ में राहु की प्रसन्नता के लिए गोमेद, पश्चिम कोष्ठ में शनैश्चर की प्रसन्नता के लिए नीलम, वायव्य कोष्ठ में केतु की प्रसन्नता के लिए वैडूर्य, उत्तर कोष्ठ में बृहस्पति की प्रसन्नता के लिए पुखराज, ईशान कोष्ठ में बुध की प्रसन्नता के लिए मरकत मणि और मध्य कोष्ठ में सूर्य की प्रसन्नता के लिए माणिक्य जड़ाकर धारण करे ॥ ९ ॥

प्रत्येक ग्रह की प्रसन्नता के लिए माणिक्यादि का धारण

माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पकवज्रनीलम् ।
गोमेदवैडूर्यकमर्कतः स्यूरत्नान्यथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् ।। १० ।।
धार्यं लाजावर्त्तकं राहुकेत्वो रौप्यं शुक्रेन्द्वोश्च मुक्ता गुरोस्तु ।
लोहं मन्दस्यारभान्वोः प्रवालं तारा जन्मर्क्षात्त्रिरावृत्तितः स्यात् ।। ११ ।।

अन्वयः—माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि, गारुत्मकं, पुष्पकवज्रनीलं, गोमेदवैडूर्यकम् (क्रमण) अर्कतः सकाशात् रत्नानि (धार्याणि) अथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् (धार्यम्) । राहुकेत्वोः (मुदे) लाजवर्तकं धार्यम्, शुक्रेन्द्वोः रौप्यं, गुरोश्च मुक्ता, तु (तथा) मन्दस्य लोह, आरभान्वोः प्रवालं (धार्यम्) तथा जन्मर्क्षात् त्रिरावृत्तितः तारा स्यात् ।। १०-११ ।।

माणिक्य, मोती, मूँगा, मरकत, पुखराज, हीरा, नीलम, गोमेद, वैडूर्य ये प्रत्येक रत्न, सूर्यादि प्रत्येक ग्रहों की प्रसन्नता के लिए धारण करना चाहिए । बहुमूल्य रत्न न मिलें तो अल्पमूल्य वस्तुएँ धारण करने को कहते हैं । बुध की प्रसन्नता के लिए सुवर्ण, राहु और केतु की प्रसन्नता के लिए लाजावर्त मणि, शुक्र और चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए चाँदी, बृहस्पति की प्रसन्नता के लिए मोती, शनैश्चर की प्रसन्नता के लिए लोहा, मंगल और सूर्य की प्रसन्नता के लिए मूँगा धारण करना चाहिए । अब तारा कहते हैं । जन्मनक्षत्र से दिननक्षत्र तक तीन आवृत्ति करने से तारा सिद्ध होती है, अर्थात् जिस दिन जिसकी तारा विचारना हो, उसके जन्मनक्षत्र से उस दिन के नक्षत्र तक गिने, जितनी संख्या हो उसमें नव का भाग देने पर जितने शेष रहें वही तारा होगी ।। १०-११ ।।

ताराओं के नाम और फल

जन्माख्यसंपद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः ।
वधमैत्रातिमैत्राः स्युस्तारानामसदृक्फलाः ।। १२ ।।

अन्वयः—जन्माख्यसंपद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः वधमैत्रातिमैत्राः (एता) नामसदृक्फलाः तारा स्युः ।। १२ ।।

एक शेष हो तो तारा का नाम जन्मर्क्ष, दो शेष हों तो संपत्, तीन शेष हों तो विपत्, चार शेष हों तो क्षेम, पाँच शेष हों तो प्रत्यरि, छः शेष हों तो साधक, सात शेष हों तो वध, आठ शेष हों तो मैत्र, नव शेष हों तो अतिमैत्र होता है । ये सब तारा नाम के समान फल देनेवाली होती हैं ।। १२ ।।

दुष्ट तारा का परिहार

मृत्यौ स्वर्णतिलान्विपद्यपि गुडं शाकं त्रिजन्मस्वथो
दद्यात्प्रत्यरितारकासु लवणं सर्वं विपत्प्रत्यरिः ।
मृत्युश्चादिमपर्यये न शुभदोऽथैषां द्वियेंऽशका-
नादिप्रान्त्यतृतीयका अथ शुभाःसर्वे तृतीये स्मृताः ॥ १३ ॥

अन्वयः—मृत्यौ (वधतारायां) स्वर्णतिलान् दद्यात्, विपदि (तारायां) गुडं, त्रिजन्मसु शाकं, प्रत्यरितारकासु लवणं दद्यात् । (अथ) आदिमपर्यये विपत्, प्रत्यरिः, मृत्युश्च, सर्वः न शुभदः । अथ एषां [विपत्प्रत्यरिमृत्यूनां] द्वितीये [द्वितीयावृत्तौ] आदिप्रान्त्यतृतीयकाः अंशकाः (क्रमेण) न (शुभदाः) अथ तृतीये [पर्यये] सर्वे शुभाः स्मृताः ॥ १३ ॥

मृत्युनामक सातवीं तारा हो तो सुवर्णयुक्त तिलों का, विपत्नामक तीसरी तारा हो तो गुड़ का, जन्मसंज्ञक तारा में शाक का और प्रत्यरिनामक पाँचवीं तारा हो तो नमक का दान करने से तारादोष शान्त होता है । अब तारादोष का दूसरा परिहार कहते हैं । जन्मनक्षत्र से सत्ताइसवें नक्षत्र तक तीन आवृत्ति होती हैं, अठारहवें तक दो आवृत्ति और नवें नक्षत्र तक एक आवृत्ति होती है । पहिली आवृत्ति में विपत्, प्रत्यरि, मृत्यु अर्थात् तीसरी, पाँचवीं, सातवीं तारा सम्पूर्ण अशुभ है । दूसरी आवृत्ति में इन्हीं तीनों ताराओं का पहिला, दूसरा, तीसरा अंश शुभ नहीं होता अर्थात्, तीसरी तारा के पहिले बीस अंश अशुभ और चालीस अंश शुभ होते हैं । पाँचवीं तारा में मध्य के बीस अंश अशुभ और आदि के बीस अंश तथा अंत के बीस अंश शुभ होते हैं । सातवीं तारा में अन्त के बीस अंश अशुभ और आदि के चालीस अंश शुभ होते हैं । तीसरी आवृत्ति में तीसरी, पाँचवीं, सातवीं तारा सम्पूर्ण शुभ होती हैं ॥ १३ ॥

चन्द्रमा की अवस्था

षष्टि ६० घ्नं गतभं मुक्तघटीयुक्तं युगा ४ हतम् ।
शराब्धि ४५ ह्रल्लब्धतोऽर्कशेषेऽवस्थाः क्रमाद्विधोः ॥ १४ ॥

अन्वयः—गतमं षष्टिघ्नं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतं, शराब्धिहृल्लब्धतः अर्कशेषे क्रमात् (मेषात् क्रमेण) विधोः अवस्थाः स्युः ॥ १४ ॥

अश्विन्यादि व्यतीत नक्षत्रों की संख्या को साठ से गुणा करके वर्त्तमान

नक्षत्र की भुक्त घटी जोड़े । फिर उसे चार से गुणा करे और पैंतालिस का भाग दे । जो लब्ध हों वे मेषादि राशियों में स्थित चन्द्रमा की भुक्त अवस्था होगी और शेष वर्त्तमान अवस्था होगी और यदि लब्ध बारह से अधिक हों तो उनमें बारह का भाग देकर जो शेष रहें वह भुक्त अवस्था होगी ॥ १४ ॥

अवस्थाओं के नाम और फल

प्रवासनाशौ मरणं जयश्च हास्यारतिक्रीडितसुप्तभुक्ताः ।
ज्वराख्यकम्पस्थिरता अवस्था मेषात्क्रमान्नामसदृक्फलाःस्युः ॥ १५ ॥

अन्वयः—प्रवासनाशौ मरणं जयः हास्यारतिक्रीडितसुप्तभुक्ताः ज्वराख्यकम्पस्थिरताः (एताः) मेषात् क्रमात् नामसदृक्फला अवस्थाः स्युः ॥ १५ ॥

प्रवास, नाश, मरण, जय, हास्या, रति, क्रीड़ा, सुप्त, भुक्त, ज्वर, कम्प स्थिरता ये उक्त अवस्थाओं के नाम हैं । ये मेषादि क्रम से अर्थात् चन्द्रमा मेष में हो तो प्रवासादि क्रम से, वृष में हो तो नाशादि क्रम से, मिथुन में हो तो मरणादि क्रम से, कर्क में हो तो जयादि क्रम से, सिंह में हो तो हास्यादि क्रम से, कन्या में हो तो रत्यादि क्रम से, तुला में हो तो क्रीड़ादि क्रम से, वृश्चिक में हो तो सुप्तादि क्रम से, धन में हो तो भुक्तादि क्रम से, मकर में हो तो ज्वरादि क्रम से, कुम्भ में हो तो कम्पादि क्रम से और मीन में हो तो स्थिरतादि क्रम से होती हैं । इनका फल इन्हीं नामों के समान होता है ॥ १५ ॥

ग्रह-दोष-शान्ति के लिए औषधयुक्त जल से स्नान

लाजाकुष्ठबलाप्रियंगुघनसिद्धार्थैर्निशादारुभिः
पुङ्खालोध्रयुतैर्जलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थघहृत् ।
धेनुःकम्बवरुणो वृषश्च कनकं पीताम्बरं घोटकः
श्वेतो गौरसिता महासिरज इत्येता रवेर्दक्षिणाः ॥ १६ ॥

अन्वयः—लाजाकुष्ठबलाप्रियंगुघनसिद्धार्थैः निशादारुभिः पुङ्खालोध्रयुतैः जलैः ग्रहोत्थाघहृत् स्नानं निगदितम्, धेनुः, कम्बु, अरुणो वृषः च कनकं, पीताम्बरं, श्वेतः घोटकः, असिता गौः, महासिः, अजः इति एताः रवेः (क्रमेण) दक्षिणाः (ज्ञेयाः) ॥ १६ ॥

लज्जावती, कूट, बरियारा, काकुनि, मुस्ता, सरसो, हल्दी, देवदारु, शरपुंखा, लोध इन ओषधियों से युक्त जल से स्नान करना ग्रहों के दोष का हरण करनेवाला कहा गया है । अब सूर्यादि ग्रहों की दक्षिणा कहते हैं । सूर्य

की प्रसन्नता के लिए धेनु, चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए शंख, मंगल की प्रसन्नता के लिए लाल बैल, बुध की प्रसन्नता के लिए सुवर्ण, बृहस्पति की प्रसन्नता के लिए पीताम्बर, शुक्र की प्रसन्नता के लिए श्वेत घोड़ा, शनैश्चर की प्रसन्नता के लिए काली गौ, राहु की प्रसन्नता के लिए तलवार और केतु की प्रसन्नता के लिए बकरा ब्राह्मण को देना चाहिए ॥ १६ ॥

ग्रह गन्तव्य राशि का फल कितने दिन पहले देने लगते हैं

सूर्यारसौम्यास्फुजितोऽक्षनागसप्ताद्रिघस्रान्विधुरग्निनाडी ।
तमोयमेज्यास्त्रिरसाश्विमासान् गन्तव्यराशेः फलदाः पुरस्तात् ॥ १७ ॥

अन्वयः—सूर्यारसौम्यास्फुजितः गन्तव्यराशेः पुरस्तात् (क्रमेण) अक्षनागसप्ताद्रि-घस्रान् फलदाः, विधुः अग्निनाडीः (फलदः) तमोयमेज्याः (क्रमेण) त्रिरसाश्विमासान् फलदाः ॥ १७ ॥

सूर्य अगली राशि में जाने से पाँच दिन पहले, मंगल आठ दिन, बुध सात दिन, शुक्र सात दिन, चन्द्रमा तीन दण्ड, राहु तीन मास, शनैश्चर छः मास और बृहस्पति दो मास पहले उस राशि का फल देने लगते हैं ॥ १७ ॥

दुष्ट योगादि की शान्ति के लिए दान

दुष्टे योगे हेम चन्द्रे च शङ्खं धान्यं तिथ्यर्द्धे तिथौ तण्डुलांश्च ।
वारे रत्नं भे चगांहेम नाड्यां दद्यात्सिन्धूत्थंचतारासु राजा ॥ १८ ॥

अन्वयः—योगे दुष्टे हेम, चन्द्रे दुष्टे शङ्खं, तिथ्यर्धे धान्यं, तिथौ तण्डुलान्, वारे रत्नं, भे गां, नाड्यां हेम, तारासु [दुष्टासु] राजा सिन्धूत्थं दद्यात् ॥ १८ ॥

यदि किसी आवश्यक यात्रादि काल में दुष्ट योग हो तो सुवर्ण, चन्द्रमा अशुभ हो तो शंख, करण दुष्ट हो तो धान्य, तिथि दुष्ट हो तो चावल, वार दुष्ट हो तो रत्न, राशि दुष्ट हो तो गौ, नाड़ी अर्थात् मुहूर्त्त दुष्ट हो तो सुवर्ण और तारा दुष्ट हो तो सेंधानमक देकर राजा यात्रादि करे ॥ १८ ॥

राश्यन्तर में गए हुए ग्रहों के फल देने का काल

राश्यादिगौ रविकुजौ फलदौ
सितेज्यौ मध्ये सदा शशिसुतश्चरमेऽब्जमन्दौ ।
अध्वान्नवह्निभयसन्मतिवस्त्रसौख्य-
दुःखानि मासि जनिभे रविवासरादौ ॥ १९ ॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ गोचरप्रकरणं समाप्तम् ॥ ४ ॥

अन्वयः—रविकुजौ राश्यादिगौ फलदौ, सितेज्यौ मध्य फलदौ, शशिसुतः सदा फलदः, अब्जमन्दौ चरमे फलदौ, (तथा) रविवासरादौ जनिभे (सति) मासि [तस्मिन् मासे] (क्रमेण) अध्वान्नवह्निभयसन्मतिवस्त्रसौख्यदुःखानि भवन्ति ।। १८ ।।

सूर्य और मंगल राशि के पहले दशांश में फलदायक होते हैं। बृहस्पति और शुक्र राशि के मध्य दशांश में और बुध सदा अर्थात् जब तक राशि में रहे तब तक फलदायक होता है। चन्द्रमा और शनैश्चर राशि के अंतिम दशांश में फल देते हैं।

अब चान्द्रमास में जिस वासर में जन्मनक्षत्र का प्रवेश हो उस वासर का फल कहते हैं। शुक्लपक्ष की परीवा से लेकर अमावास्या तक जन्मनक्षत्र का प्रवेश यदि रविवार में हो तो रास्ता चलना पड़े, सोमवार में हो तो उत्तम अन्न मिले, मङ्गल में हो तो अग्निभय, बुधवार में हो तो उत्तम मति, बृहस्पति में हो तो वस्त्रप्राप्ति, शुक्रवार में हो तो सौख्य और शनैश्चर में हो तो दुःख मिले ।। १९ ।।

संस्कारप्रकरण

—:०:—

आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेषफाल्गुने ।
ज्येष्ठ श्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ।। १ ।।

अन्वयः—माघमार्गराधेषफाल्गुने ज्येष्ठश्रावणयोः, शुक्ले, सद्वारे, सत्तनौ, दिवा (दिवसे) आद्यं रजः शुभम् ।। १ ।।

माघ, अगहन, वैशाख, आश्विन, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण इन महीनों में शुक्लपक्ष में, शुभग्रहों के वासर में, शुभग्रह से दृष्ट, युत वा शुभग्रह की लग्न में और दिन में पहिले पहिल रजोदर्शन हो तो शुभ होता है ।। १ ।।

प्रथम रजोदर्शन में उत्तम, मध्यम, निकृष्ट नक्षत्र

श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे ।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ।। २ ।।

अन्वयः—श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे (आद्यं रजः शुभं स्यात्) मूलादितिभे पितृमिश्रे मध्यं (स्यात्) परेषु (नक्षत्रेषु) असत् (स्यात्) ।। २ ।।

श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी पुष्य, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा, स्वाती इन नक्षत्रों में प्रथम रजोदर्शन हो तो शुभ; मूल, पुनर्वसु, मघा, विशाखा, कृत्तिका इन नक्षत्रों में मध्यम और भरणी, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, इन नक्षत्रों में अशुभ होता है। श्वेत वस्त्र पहिने हुई स्त्री के प्रथम रजोदर्शन हो तो शुभदायक होता है ॥ २ ॥

निन्दित प्रथम रजोदर्शन

भद्रानिद्रासंक्रमे दर्शरिक्तासंध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु।
रोगेऽष्टम्यां चन्द्रसूर्योपरागे पाते चाद्यं नो रजोदर्शनं सत् ॥ ३ ॥

अन्वयः—भद्रानिद्रासंक्रमे दर्शरिक्तासन्ध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु, रोगे, अष्टम्यां, चन्द्रसूर्योपरागे, पाते च आद्यं रजोदर्शनं नो सत् ॥ ३ ॥

भद्रा में, सोते समय, संक्रान्तिकाल में, अमावास्या में, चौथि, नवमी, चतुर्दशी तिथि में, संध्याकाल में, छठि अथवा द्वादशी तिथि में, वैधृतियोग में, अष्टमी में, चन्द्रमा और सूर्य के ग्रहणकाल में तथा व्यतीपात में स्त्रियों का प्रथम रजोदर्शन शुभ नहीं होता ॥ ३ ॥

प्रथम रजस्वला के स्नान का मुहूर्त्त

हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः
शक्रान्वितैः शुभतिथौ शुभवासरे च।
स्नायादथार्तववती मृगपौष्णवायु-
हस्ताश्विधातृभिररं लभते च गर्भम् ॥ ४ ॥

अन्वयः—हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः शक्रान्वितैः शुभतिथौ च शुभवासरे आर्त्तवती स्नायात् (तथा) मृगपौष्णवायुहस्ताश्विधातृभिः (स्नातार्त्तववती) अरं गर्भं लभते ॥ ४ ॥

हस्त, स्वाती, अश्विनी, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, रोहिणी, तीनों उत्तरा और ज्येष्ठा नक्षत्र में; शुभ तिथियों में अर्थात् अमावास्या, चतुर्दशी, द्वादशी, नवमी, अष्टमी, छठि, चौथि—इन तिथियों को छोड़ अन्य तिथियों में; चन्द्र, बुध, बृहस्पति और शुक्रवार में पहिले पहिल रजस्वला हुई स्त्री स्नान करे। यदि मृगशिरा, रेवती, स्वाती, हस्त, अश्विनी वा रोहिणी नक्षत्र में स्नान करे तो शीघ्र ही गर्भवती हो ॥ ४ ॥

गर्भाधानमुहूर्त्त

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम् ।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यार्द्धं स्वपत्नीगमे ।
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥ ५ ॥
भद्राषष्ठी पर्वरिक्ताश्च संध्या भौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥ ६ ॥

अन्वयः—त्रिविधं गण्डान्तं, निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं दास्रं पौष्णं अथ उपरागदिवसान् पातं तथा वैधृतिं, पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं उत्पातहतानि भानि जन्मर्क्षतः मृत्युभवनम् (तथा) पापभं (एतानि) स्वपत्नीगमे त्यजेत् । भद्राषष्ठीपर्वरिक्ताः, च सन्ध्याभौमार्कार्कीन्, चतस्रः आद्यरात्रीः (स्वपत्नीगमे त्यजेत्), त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे गर्भाधानं सत् ॥ ६ ॥

रजोदर्शन से चार दिन बाद अपनी स्त्री के गमन में नक्षत्र गण्डान्त, तिथि गण्डान्त, लग्न गण्डान्त, जन्मनक्षत्र से सातवाँ नक्षत्र, जन्मनक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, ग्रहण का दिन, व्यतीपात और वैधृतियोग, माता-पिता का श्राद्धदिन, परिघयोग का पूर्वार्द्ध, उत्पात से दूषित नक्षत्र, जन्मराशि-जन्मलग्न से आठवीं लग्न, पापग्रहयुक्त नक्षत्र अथवा लग्न, इन सबका त्याग करे ॥ ५ ॥ भद्रा, छठि, पर्व अर्थात् कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा, सूर्यसंक्रान्ति और रिक्ता अर्थात् चौथि, नवमी, चतुर्दशी, संध्याकाल, मंगल, रविवार, शनैश्चर दिन इन सबको छोड़ शुभ तिथि, वासर, लग्न, योगादि में, रात्रि में, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष इन नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ होता है ॥ ६ ॥

गर्भाधान में लग्नबल

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्च पापैस्त्र्यायारिगैः पुंग्रहदृष्टलग्ने ।
ओजांशगेऽब्जेऽपि च युग्मरात्रौ चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥ ७ ॥

अन्वयः—शुभैः केन्द्रत्रिकोणेषु (स्थितैः) पापैः त्र्यायारिगैः पुङ् ग्रहदृष्टलग्ने अब्जे ओजांशगे च युग्मरात्रौ (गर्भाधानं शुभम्), च (पुनः) चित्रादितीज्याश्विषु (नक्षत्रेषु) मध्यमं स्यात् ॥ ७ ॥

पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, नवें और पाँचवें स्थान में शुभग्रह स्थित हों; तीसरे, छठे, गेरहवें स्थान में पापग्रह हों; सूर्य, मंगल वा बृहस्पति लग्न को देखते हों; विषम राशि वा विषम नवांश में चन्द्रमा स्थित हो, ऐसे लग्न में और रजोदर्शन के बाद चौथी, छठी, आठवीं, दशवीं, बारहवीं, चौदहवीं, सोलहवीं रात्रि में गर्भाधान शुभ होता है। चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य और अश्विनी नक्षत्र में गर्भाधान मध्यम फलदायक होता है ॥ ७ ॥

सीमन्तोन्नयनमुहूर्त्त

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैं
रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्मासाधिपे पीवरे।
सीमन्तोऽष्टमषष्ठमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलै-
र्लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदहे लग्ने च पुंभांशके ॥ ८ ॥

अन्वयः—जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैः, रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभि मासाधिपे पीवरे, अष्टमषष्ठमासि, शुभदैः (शुभग्रहैः) केन्द्रत्रिकोणे, खलैः (पापग्रहैः) लाभारित्रिषु (स्थितैः) वा ध्रुवान्त्यसदहें, पुंभांशके लग्ने सीमन्तः शुभः ॥ ८ ॥

बृहस्पति, रविवार और मंगलवार में; मृगशिरा, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु और हस्त नक्षत्रों में; चौथि, नवमी, चतुर्दशी, अमावास्या, द्वादशी, छठि और अष्टमी को छोड़ अन्य तिथियों में; मासेश्वर[1] के बली रहते, गर्भाधान से आठवें या छठे मास में; केन्द्रत्रिकोण अर्थात् लग्न, चौथा, सातवाँ, दशवाँ, नवाँ, पाँचवाँ इन स्थानों में शुभग्रहों के रहते; गेरहवें, छठे, तीसरे स्थान में क्रूरग्रहों के रहते और पुरुषसंज्ञक ग्रहों के लग्न वा नवांश के सीमन्तोन्नयन कर्म श्रेष्ठ है। अथवा तीनों उत्तरा, रोहिणी और रेवती इन नक्षत्रों में और चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र, इन ग्रहों के वासर में और दोपहर से पूर्व शुक्लपक्ष में सीमन्तोन्नयन कर्म करना श्रेष्ठ है। छठे, आठवें मास होने के कारण इनमें गुरुशुक्रास्तादि का विचार कम किया जाता है ॥ ८ ॥

गर्भाधान से प्रसवपर्यंत महीनों के स्वामी

मासेश्वराः सितकुजेज्यरवीन्दु-
सौरिचन्द्रात्मजास्तनुपचन्द्रदिवाकराः स्युः।

१—आगे कहेंगे।

स्त्रीणां विधोर्बलमुशन्ति
विवाहगर्भसंस्कारयोरितरकर्मसु भर्त्तुरेव ॥ ९ ॥

अन्वयः—सितकुजेज्यरवीन्दुसौरिचन्द्रात्मजज्ञाः तनुपचन्द्रदिवाकराः (क्रमेण) मासेश्वराः स्युः । विवाहगर्भसंस्कारयोः स्त्रीणां विधोः बलं उशन्ति । इतरकर्मसु भर्तुः एव विधोः बलम् (ग्राह्यम्) ॥ ६ ॥

पहिले मास का शुक्र, दूसरे मास का मंगल, तीसरे मास का बृहस्पति, चौथे मास का सूर्य, पाँचवें मास का चन्द्रमा, छठे मास का शनैश्चर, सातवें मास का बुध, आठवें मास का गर्भाधानलग्नेश, नवें मास का चन्द्रमा और दशवें मास का सूर्य स्वामी होता है। प्रयोजन यह है कि यदि मासेश्वर अस्त, निर्बल वा किसी अन्य ग्रह से पीड़ित हो तो गर्भपात हो जाता है। इसलिए पहिले ही उसका उपाय करे। अब स्त्रियों का चन्द्रबल कहते हैं। विवाह और गर्भसम्बन्धी संस्कारों में स्त्री की जन्मराशि से अन्य यात्रादि कार्यों में स्वामी की जन्मराशि से और यदि पति मर गया हो तो यात्रादि कार्यों में भी स्त्री की ही जन्मराशि से चन्द्रबल विचारना चाहिए ॥ ९ ॥

पुंसवनमुहूर्त्त

पूर्वोदितैः पुंसवनं विधेयं मासे तृतीये त्वथ विष्णुपूजा ।
मासेऽष्टमे विष्णुविधातृजीवैर्लग्ने शुभे मृत्युगृहे च शुद्धे ॥ १० ॥

अन्वयः—पूर्वोदितैः (सीमन्तोक्तैः तिथ्यादिभिः) तृतीये मासे पुंसवन विधेयम्, अथ अष्टमे मासे विष्णुविधातृजीवैः (नक्षत्रै) शुभे लग्ने मृत्युगृहे शुद्धे [सति] विष्णुपूजा (कार्या) ॥ १० ॥

सीमन्तोन्नयन मुहूर्त्त में कहे हुए तिथि, वार, नक्षत्र और लग्न में तथा गर्भाधान से तीसरे मास में पुंसवन कर्म करना चाहिए। अब गर्भ की रक्षा के लिए विष्णुपूजा का मुहूर्त्त कहते हैं। श्रवण, रोहिणी और पुष्य नक्षत्र में; शुभ ग्रहों के दिन में; गर्भाधान से आठवें मास में; शुभग्रह से दृष्ट, युत वा शुभग्रह-सम्बन्धी लग्न में और लग्न से आठवें स्थान में किसी ग्रह के न रहते, दोपहर के पूर्व विष्णु की पूजा करनी चाहिए ॥ १० ॥

जातकर्म और नामकर्म का मुहूर्त्त

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि ।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात् ॥ ११ ॥

अन्वयः—पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ, शुभेह्नि, एकादशे अपि द्वादशके घस्रे, मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु शिशोः तत् जातकर्मादि विधेयं स्यात् ॥ ११ ॥

पर्व अर्थात् कृष्णपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पौर्णमासी, सूर्यसंक्रान्ति तथा चौथि, नवमी और चतुर्दशी को छोड़ अन्य तिथियों में, व्यतीपातादि दोषरहित शुभग्रहों के दिन में; जन्मकाल से गेरहवें वा बारहवें दिन में; मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र में जातकर्म करे यदि जन्मकाल में किसी कारणवश न किया गया हो। आदि पद से नामकर्म का भी ग्रहण है, अर्थात् इसी मुहूर्त्त में नामकर्म भी करना चाहिए ॥ ११ ॥

प्रसूता स्त्री के स्नान का मुहूर्त्त

पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूती-
स्नानं समित्रभरवीज्य कुजेषु शस्तम् ।
नार्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूल-
त्वाष्ट्रे ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ततिथ्याम् ॥ १२ ॥

अन्वयः—समित्रभरवीज्यकुजेषु, पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु, सूतीस्नानं शस्तम्; आर्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूलत्वाष्ट्रे ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ततिथ्यां सूतीस्नान न शस्तम् ॥ १२ ॥

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, स्वाती, अश्विनी और अनुराधा नक्षत्र में, रविवार, मङ्गल वा बृहस्पतिवार में प्रसूता स्त्री का स्नान करना शुभ है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा नक्षत्र में; बुध और शनिवार में; अष्टमी, छठि, द्वादशी, चौथि, नवमी और चतुर्दशी तिथि में प्रसूता स्त्री स्नान न करे, इनमें स्नान करने से फिर सन्तान नहीं होती ॥ १२ ॥

प्रथम आदि महीनों में बालक के दाँत निकलने का फल

मासे चेत्प्रथमे भवेत्सदशनो बालो विनश्येत्स्वयं
हन्यात्संक्रमतोऽनुजातभगिनीं मात्रग्रजान् द्व्यादिके ।
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात्सुखं पुष्टतां
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनौ सदशनो वोर्ध्वं स्वपित्रादिहा ॥ १३ ॥

अन्वयः—चेत् [यदि] प्रथमे मासे बालः सदशनः भवेत् (तदा सः स्वयं नश्येत् । द्वयादिके मासे (चेत् सदशनः) तदा क्रमतः अनुजातभगिनीमातृग्रजान् हन्यात् । षष्ठादौ (क्रमेण) अतुलं भोगं, तातात् सुखं, पुष्टतां, लक्ष्मीं, सौख्य लभते । अथो जनौ (जन्मसमये) सदशनः (बालः) स्वपित्रादिहा (भवति) वा ऊर्ध्वं (ऊर्ध्वपंक्तौ) सदशनः बालः स्वपित्रादिहा (भवति) ॥ १३ ॥

पहिले मास में यदि बालक के दाँत निकलें तो वह बालक मर जाता है। यदि दूसरे मास में निकलें तो छोटे भाई को, तीसरे मास में निकलें तो बहिन को, चौथे मास में जामें तो माता को और पाँचवें मास में जामें तो जेठे भाई को मारता है। यदि छठे मास में दाँत जामें तो वह बालक उत्तम भोग, सातवें मास में जामें तो पिता से सुख, आठवें मास में जामें तो देह की पुष्टता, नवें मास में जामें तो लक्ष्मी, दशवें मास में जामें तो सौख्य, गेरहवें मास में जामें तो अतिसौख्य और बारहवें मास में धन-सम्पत्ति को प्राप्त होता है। यदि गर्भ ही में जामे हुए दातों के सहित उत्पन्न हो, अथवा ऊपर की पंक्ति में पहिले दाँत जामे तो वह बालक अपने माता-पिता, भाई इत्यादिकों का विनाश करता है ॥ १३ ॥

दोलारोहणमुहूर्त्त

दोलारोहेऽर्कभात्पञ्चशरपञ्चेषुसप्तभैः ।
नैरुज्यं मरणं कार्श्यं व्याधिः सौख्यं क्रमाच्छिशोः ॥ १४ ॥

अन्वयः—अर्कभात् पञ्चशरपञ्चेषुसप्तभैः [नक्षत्रैः] दोलारोहे [सति] क्रमात् शिशोः नैरुज्यं, मरणं, कार्श्यं, व्याधिः, सौख्यं स्यात् ॥ १४ ॥

सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हों उस नक्षत्र से पाँच नक्षत्र पर्यन्त बालक को झुलुआ पर चढ़ाकर झुलावे तो वह नीरोग हो, फिर पाँच नक्षत्रों में उस बालक का मरण हो, फिर पाँच नक्षत्रों में वह बालक दुबला हो, फिर पाँच नक्षत्रों में उस बालक के व्याधि हो और फिर सात नक्षत्रों में उस बालक को सौख्य हो ॥ १४ ॥

दन्तार्कभूपधृतिदिङ्मतवासरे स्या-
द्वारे शुभे मृदुलघुध्रुवभैः शिशूनाम् ।
दोलाधिरूढिरथनिष्क्रमणं चतुर्थ-
मासे गमोक्तसमयेऽर्कमितेऽह्नि वा स्यात् ॥ १५ ॥

अन्वयः—दन्तार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे, शुभे वारे, मृदुलघुध्रुवभैः (भैःनक्षत्रैः) शिशोः दोलाधिरूढिः स्यात्। अथ चतुर्थमासे वा अर्कमिते अह्नि गमोक्तसमये शिशोः निष्क्रमणं (शुभं) स्यात् ॥ १५ ॥

जन्मदिन से बत्तीसवें, बारहवें, सोलहवें, अठारहवें वा दशवें दिन; चन्द्र, बुध, बृहस्पति वा शुक्रवार और मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, तीनों उत्तरा वा रोहिणी नक्षत्र में पहिले पहिल बालकों को झुलुआ पर चढ़ाना शुभ होता है। अब शिशुनिष्क्रमण-मुहूर्त्त कहते हैं। जन्म से चौथे मास में और यात्रा में कहे हुए तिथि, वार, नक्षत्र और लग्न में पहिले पहिल बालक को घर से बाहर निकालना शुभ होता है, अथवा जन्मदिन से बारहवें दिन यात्रोक्त समय में शुभ होता है ॥ १५ ॥

जलपूजामुहूर्त्त

कवीज्यास्तचैत्राधिमासे न पौषे जलं पूजयेत्सूतिका मासपूर्तौ।
बुधन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ हि श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रैः ॥ १६ ॥

अन्वयः—कवीज्यास्तचैत्राधिमासे, पौषे मासे, मासपूर्तौ (अपि) सूतिका जलं न पूजयेत्। बुधेन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रैः जलं पूजयेत् ॥ १६ ॥

बृहस्पति वा शुक्र के अस्त में तथा चैत्र, पौष, वा मलमास में सूतिका जल की पूजा न करे और बुधवार, सोमवार, बृहस्पतिवार में; चौथि, नवमी, चतुर्दशी तिथि को छोड़ अन्य तिथियों में; श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिरा, हस्त, मूल, अनुराधा नक्षत्र में और पहिले महीने की समाप्ति में सूतिका जल की पूजा करे ॥ १६ ॥

अन्नप्राशन मुहूर्त्त

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारां-
ल्लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च।
हित्वा षष्ठात्समे मास्यथ हि मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरैर्बालकान्नाशनं सत् ॥ १७ ॥

अन्वयः—रिक्तानन्दाष्टदर्शं, हरिदिवसं, सौरिभौमार्कवारान्, जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृह-लवगं लग्नं, मीनमेषालिकं लग्नं (एतत् सर्वं) हित्वा, षष्ठात् समे मासि अथ हि मृगदृशां

(कन्यानां) पञ्चमात् ओजमासे समृदुलघुचरैः स्थिराख्यैः नक्षत्रैः बालकान्नाशनं सत् ॥ १७ ॥

चौथि, नवमी, चतुर्दशी, परीवा, छठि, एकादशी, अष्टमी, अमावास्या और द्वादशी तिथि को छोड़ अन्य तिथियों में; शनैश्चर, मंगल, रविवार को छोड़ अन्य दिनों में; जन्मराशि वा जन्मलग्न से आठवीं राशि, आठवाँ नवांश; मीन, मेष और वृश्चिक को छोड़ अन्य लग्न में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र में; छठे मास से लेकर सम मासों में अर्थात् छठे, आठवें, दशवें इत्यादि मासों में बालकों का और पाँचवें मास से लेकर विषम मासों में अर्थात् पाँचवें, सातवें, नवें, इत्यादि मासों में कन्याओं का अन्नप्राशन शुभ होता है सो भी शुक्लपक्ष में और दोपहर से पूर्व होना चाहिए ॥ १७ ॥

अन्नप्राशन के लिये लग्नशुद्धि

केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः खशुद्धे
लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः ।
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं
मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच्च केचित् ॥ १८ ॥

अन्वयः—शुभैः केन्द्रत्रिकोणसहजेषु (स्थितैः) खशुद्धे लग्ने त्रिलाभरिपुगैः पापैः, लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं (अन्नाशने) प्रशस्तं वदन्ति । केचित् मैत्राम्बुपानिलजनुर्भं असत् वदन्ति ॥ १८ ॥

लग्न से पहिले, चौथे, सातवें और तीसरे स्थान में शुभ ग्रह हों; दशवें स्थान में कोई ग्रह न हो; तीसरे, छठे, गेरहवें स्थान में पापग्रह हों और लग्न, आठवें और छठे स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में चन्द्रमा स्थित हो, ऐसे लग्न में अन्नप्राशन शुभ होता है। कोई आचार्य अनुराधा, शतभिष और जन्मनक्षत्र को अन्नप्राशन में अशुभ कहते हैं ॥ १८ ॥

अन्नप्राशन मुहूर्त्त में ग्रहों का फल

क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्किभार्गवैः ।
त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैरुक्तं फलं ग्रहैः ॥ १९ ॥
भिक्षाशी यज्ञकृद्दीर्घजीवी ज्ञानी च पित्तरुक् ।
कुष्ठी चान्नक्लेशवातव्याधिमान्भोगभागिति ॥ २० ॥

अन्वयः—क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्किभार्गवैः ग्रहैः त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैः (क्रमेण) भिक्षाशी, यज्ञकृत्, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरुक्, कुष्ठी च अन्नक्लेशवातव्याधिमान्, भोगभाग्, इति उक्तं फलं ज्ञेयम् ॥ १६-२० ॥

जिस लग्न में अन्नप्राशन इष्ट हो उससे नवें, पाँचवें, बारहवें, पहिले, चौथे, सातवें वा आठवें स्थान में यदि क्षीण चन्द्रमा स्थित हो तो वह बालक भीख माँग कर जीविका करता है; पूर्णचन्द्रमा स्थित हो तो यज्ञ करता है; बृहस्पति स्थित हो तो दीर्घायु होता है; बुध स्थित हो तो ज्ञानी; मंगल स्थित हो तो पित्तरोगी; सूर्य स्थित हो तो कुष्ठरोगी; शनैश्चर, राहु वा केतु स्थित हों तो अन्न का क्लेश और वातरोगी; और शुक्र स्थित हो तो वह बालक भोगी होता है ॥ १९-२० ॥

बालकों को भूमि में बैठाने का मुहूर्त्त

पृथ्वीं वराहमभिपूज्य कुजे विशुद्धे
ऽरिक्ते तिथौ व्रजति पञ्चममासि बालम् ।
बद्ध्वा शुभेऽह्नि कटिसूत्रमथ ध्रुवेन्दु-
ज्येष्ठर्क्षमैत्रलघुभैरुपवेशयेत्कौ ॥ २१ ॥

अन्वयः—पृथ्वी वराहं अभिपूज्य, कुजे विशुद्धे, अरिक्ते तिथौ, पञ्चममासि व्रजति, शुभेऽह्नि, ज्येष्ठर्क्षमैत्रलघुभैः, कटिसूत्रं बद्ध्वा बालं कौ [पृथिव्यां] उपवेशयेत् ॥ २१ ॥

मङ्गल के बली रहते; जन्म से पाँचवें महीने में और चौथि, नवमी, चतुर्दशी को छोड़ अन्य तिथियों में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी वा पुष्य नक्षत्र में; पृथ्वी और वराह की पूजा करके कटिसूत्र बाँधकर बालक को भूमि में बैठावे ॥ २१ ॥

बालक की जीविका-परीक्षा

तस्मिन्काले स्थापयेत्तत्पुरस्ताद्वस्त्रं शस्त्रं पुस्तकं लेखनीं च ।
स्वर्णं रौप्यं यच्च गृह्णाति बालस्तैराजीवैस्तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥ २२ ॥

अन्वयः—तस्मिन् काले तत्पुरस्तात् वस्त्रं शस्त्रं पुस्तकं लेखनीं स्वर्णं रौप्यं च स्थापयेत् । बालः यत् गृह्णाति तैः आजीवैः तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥ २२ ॥

बालक को भूमि में बैठाकर उसके आगे वस्त्र, शस्त्र, पुस्तक, लेखनी, सुवर्ण और चाँदी धरे । वह बालक पहिले जिस वस्तु को उठावे उसी वस्तु के द्वारा उसकी जीविका पण्डितों ने कही है ॥ २२ ॥

ताम्बूल-भक्षण-मुहूर्त्त

वारे भौमार्किहीने ध्रुवमृदुलघुभैर्विष्णुमूलादितीन्द्र-
स्वातीवस्वश्युपेतैर्मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने ।
सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैरशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थै-
स्ताम्बूलं सार्द्धमासद्वयमितसमये प्रोक्तमन्नाशने वा ॥ २३ ॥

अन्वयः—भौमार्किहीने वारे ध्रुवमृदुलघुभैः विष्णुमूलादितीन्द्रस्वातीवस्वश्युपेतैः, मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने, सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैः, अशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थैः, सार्द्धमासद्वयमितसमये वा अन्नाशने ताम्बूलं प्रोक्तम् ॥ २३ ॥

मंगल और शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, मूल, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, स्वाती वा धनिष्ठा नक्षत्र में; मिथुन, मकर, कन्या, कुम्भ, वृष, मीन लग्न में; चौथे, सातवें, दशवें, पाँचवें, नवें स्थान में और लग्न में शुभ ग्रहों के रहते; छठे, गेरहवें और तीसरे स्थान में पापग्रहों के रहते; जन्म से अढ़ाई महीने पर अथवा अन्नप्राशनमुहूर्त्त में बालक का ताम्बूलभक्षण शुभ होता है ॥ २३ ॥

कर्णवेध-मुहूर्त्त

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिः संमिते मास्यथो वा ।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥ २४ ॥

अन्वयः—चैत्रपौषावमहरिशयनं, जन्ममासं, रिक्तां च युग्माब्दं, जन्मतारां, एतान् हित्वा, ऋतुमुनिवसुभिः सम्मिते मासि अथो वा जन्माहात् सूर्यभूपैः परिमितदिवसे, ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे, अथ ओजाब्दे, विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः, कर्णवेधः प्रशस्तः ॥ २४ ॥

चैत्र, पौष, तिथिक्षय, हरिशयन अर्थात् आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्त्तिक शुक्ल एकादशी तक; जन्ममास अर्थात् जन्मदिन से तीस दिन पर्यन्त, रिक्ता तिथि, सम वर्ष और जन्मतारा को छोड़कर जन्म से छठे, सातवें, आठवें महीने में, अथवा बारहवें या सोलहवें दिन, बुधवार, बृहस्पति, शुक्र, सोमवार में; और विषम वर्ष में; और श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में बालक का कर्ण-वेध शुभ होता है ॥ २४ ॥

कर्णवेध में लग्नशुद्धि

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोणकेन्द्र-
त्र्यायस्थैः शुभखचरैः कवीज्यलग्ने ।
पापाख्यैररिसहजायगेहसंस्थै-
र्लग्नस्थे त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात् ॥ २५ ॥

अन्वयः—मृतिभवने संशुद्धे, शुभखचरैः त्रिकोणकेन्द्रत्र्यायस्थैः, कवीज्यलग्ने, पापाख्यैः अरिसहजायगेहसंस्थैः, त्रिदशगुरौ लग्नस्थे,(कर्णवेधः) शुभावहः स्यात् ॥ २५ ॥

लग्न से आठवें स्थान में कोई ग्रह न हो, नवें, पाँचवें, पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, तीसरे, और गेरहवें स्थान में शुभग्रह हों; तीसरे, छठे, गेरहवें स्थान में पापग्रह और लग्न में बृहस्पति हों; वृष, तुला, धनु वा मीन लग्न हो तो बालक का कर्णवेध शुभ होता है ॥ २५ ॥

मुंडन आदि में निषिद्ध काल

गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठापरिणयदहनाधानगेहप्रवेशा-
श्चौलं राजाभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात् ।
नो वा बाल्यास्तवार्ध्ये सुरगुरुसितयोर्नैव केतूदये स्या-
त्पक्षं वार्द्धं च केचिज्जहति तमपरे यावदीक्षां तदुग्रे ॥ २६ ॥

अन्वयः—याम्यायने गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठापरिणयदहनाधानगेहप्रवेशाः चौलं, राजाभिषेकः व्रतं अपि नैव शुभदं स्यात् । वा सुरगुरुसितयोः बाल्यास्तवार्ध्ये अपि नैव शुभदं, वा केतूदये (अपि) नैव शुभद स्यात् । त [केतूदयं] केचित् पक्षं वा अर्धं [पक्षार्धं] जहति, अपरे तदुग्रे [ब्रह्मपुत्राख्ये केतौ] ईक्षां [दर्शनं] यावत् जहति ॥ २६ ॥

देवप्रतिष्ठा, जलाशयप्रतिष्ठा, विवाह, अग्न्याधान, चूडाकर्म, यज्ञोपवीत, राजाभिषेक, गृहप्रवेश और भी जिनका कोई नियत काल नहीं है वे सब शुभ कर्म याम्यायन अर्थात् कर्क संक्रान्ति से मकर संक्रान्ति तक शुभ नहीं होते । बृहस्पति और शुक्र की बाल्यावस्था, अस्त और वृद्धावस्था में और केतु के उदय में भी उक्त कर्म शुभ नहीं होते । कोई आचार्य केतु के उदय में पक्ष भर और कोई आधा पक्ष उक्त कर्म करने में त्याग करते हैं । कोई कहते हैं कि जब तक केतु दीख पड़े तब तक ये उक्त कर्म नहीं करना चाहिए, यह उनका कहना उग्र अर्थात् ब्रह्मपुत्र नामक अति दुष्ट फल देनेवाले केतु के उदय में समझना चाहिए । ब्रह्मपुत्र नामक केतु का लक्षण

वशिष्ठजी से कहा है कि तीन शिखा और तीन वर्णों से संयुक्त, ब्रह्मदण्ड के सदृश. किसी भी दिशा में उदय होनेवाला ब्रह्मपुत्र नामक केतु होता है। यह उदय होकर ब्रह्मा का भी नाश करता है, फिर दूसरों के लिए क्या कहना है। वराहजी ने भी इसका ऐसा ही लक्षण कहा है। अन्य केतुओं के लक्षण गर्गजी ने कहे हैं। तीन शिखा, लाल वर्ण, लाल किरण, सदा उत्तर ही दिशा में उदय, लोहितांगात्मज और कौंकुम नाम के साठ प्रकार के केतु होते हैं। उनके उदय होने से राजाओं में परस्पर संग्राम होता है। कृष्णवर्ण मिली हुई काली किरणोंवाले कीलक नाम के तेंतिस प्रकार के केतु होते हैं, वे उदय होने पर अतिदारुण होते हैं ॥ २६ ॥

शुक्र और बृहस्पति की बाल्य और वृद्ध अवस्था

पुरः पश्चाद्भृगोर्बाल्यं त्रिदशाहं च वार्धकम् ।
पक्षं पंचदिनं ते द्वे गुरोः पक्षमुदाहृते ॥ २७ ॥

अन्वयः—भृगोः पुरः पश्चात् (क्रमेण) त्रिदशाहं बाल्यं, पक्षं पञ्चदिनं च वार्धक (प्रोक्तम्) । गुरोः ते द्वे [बाल्यवार्धके] पक्षं उदाहृते ॥ २७ ॥

यदि शुक्र का उदय पूर्व दिशा में हो तो तीन दिन बाल और पन्द्रह दिन वृद्ध तथा पश्चिम में हो तो दश दिन बाल और पाँच दिन वृद्ध रहता है। बृहस्पति दोनों दिशाओं में उदय से पन्द्रह दिन तक बाल और अस्त से पूर्व पन्द्रह दिन वृद्ध रहता है ॥ २७ ॥

मतान्तर से बाल्य और वृद्ध अवस्था

ते दशाहं द्वयोः प्रोक्ते कैश्चित्सप्तदिनं परैः ।
त्र्यहं त्वात्ययिकेऽप्यन्य रर्धाहं च त्र्यहं विधोः ॥ २८ ॥

अन्वयः—कैश्चित् द्वयोः (गुरुशुक्रयोः) ते [बाल्यवार्धके] दशाहं प्रोक्ते, परैः सप्तदिनं प्रोक्ते । अन्यैः आत्ययिके [आवश्यके] त्र्यहं प्रोक्त । विधोः च अर्धाहं बाल्यं, त्र्यहं वार्धकं (प्रोक्तम्) ॥ २८ ॥

कोई आचार्य शुक्र और बृहस्पति दोनों की बाल्य और वृद्धावस्था दश दिन की कहते हैं, कोई सात दिन की कहते हैं और कोई कहते हैं कि यदि किसी कार्य की अति आवश्यकता हो तो तीन ही दिन की मानना चाहिए। चन्द्रमा की बाल्यावस्था आधा दिन और वृद्धावस्था तीन दिन की होती है ॥ २८ ॥

चूडाकर्म का मुहूर्त्त

चूडावर्षात्तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टाद्यरिक्तार्कषष्ठी-
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम् ।
वारे लग्नांशयोश्च स्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः ॥ २९ ॥
क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करैर्मृत्युशस्त्रमृतिपङ्गुताज्वराः ।
स्युः क्रमेण बुधजीवभार्गवैः केन्द्रगैश्च शुभमिष्टतारया ॥ ३० ॥

अन्वयः—तृतीयात् वर्षात् विषमे वर्षे, अष्टाद्यरिक्तार्कषष्ठीपर्वोनाहे, विचैत्रोदगयनसमये, ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानां वारे लग्नांशयोश्च, स्वभनिधनतनौ, नैधने शुद्धियुक्ते (सति) शाक्रोपेतैः विमैत्रैः मृदुचरलघुभः, आयषट्त्रिस्थपापैः चूडा शुभा प्रभवति ॥ २९ ॥ क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करैःकेन्द्रगैःक्रमेणमृत्युशस्त्रमृतिपंगुताज्वराः स्युः । (तथा) बुधजीवभार्गवैः केन्द्रगैः इष्टतारया च (चौलं) शुभं भवति ॥ ३० ॥

जन्म से अथवा गर्भाधान से तीसरे, पाँचवें, सातवें इत्यादि विषम वर्षों में, अष्टमी, द्वादशी, चौथि, नवमी, चतुर्दशी, परीवा, छठि, अमावास्या, पूर्णमासी और सूर्यसंक्रान्ति को छोड़ अन्य तिथियों में; चैत्र महीने को छोड़ उत्तरायण में; बुध, चन्द्र, शुक्र और बृहस्पतिवार में; इन्हीं शुभग्रहों के लग्न वा नवांश में; जिसका मुण्डन कराना हो उसके जन्मलग्न वा जन्मराशि से आठवीं को छोड़ अन्य लग्न में; लग्न से आठवें स्थान में शुक्र को छोड़ अन्य ग्रहों के न रहते; अनुराधा को छोड़ ज्येष्ठासहित मृदु, चर, लघुसंज्ञक नक्षत्रों में अर्थात् ज्येष्ठा, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में; लग्न से गेरहवें, छठे, तीसरे स्थान में पापग्रहों के रहते मुण्डन कराना शुभ होता है ॥ २९ ॥ यदि चन्द्रमा क्षीण हो तो सोमवार को मुण्डन कराने से उस बालक की मृत्यु, मंगल को अस्त्र से मृत्यु, शनैश्चर को पंगु और रविवार को ज्वर होता है। बुध, बृहस्पति, शुक्र केन्द्रस्थान में हों और दूसरी, चौथी, छठी, आठवीं तारा हो तो मुण्डन शुभ होता है ॥ ३० ॥

जिसकी माता गर्भवती हो उसके मुण्डन का मुहूर्त्त

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥ ३१ ॥

अन्वयः—पञ्चमासाधिके मातुः गर्भे शिशोः चौलं न सत् । पञ्चवर्षाधिकस्य शिशोः मातरि गर्भिण्यां अपि चौल इष्टं स्यात् ।। ३१ ।।

यदि माता के पाँच महीने से अधिक दिनों का गर्भ हो तो बालक का मुण्डन शुभ नहीं होता और यदि पाँच वर्ष से अधिक दिनों का बालक हो गया हो तो माता के गर्भवती रहते भी मुण्डन शुभ होता है ।। ३१ ।।

तारादोष का अपवाद

तारादौष्टयेऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे ।
सौम्ये भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ।। ३२ ।।

अन्वयः—तारादौष्टये (अपि) अब्जे (चन्द्रे) त्रिकोणोच्चगे वा सौम्यमित्रस्ववर्गे (स्थिते) क्षौरं सत् स्यात् । शोभने अब्जे सौम्ये भे (सति) क्षौरयात्रादिकृत्ये दुष्टतारापि शस्ता ज्ञेया ।। ३२ ।।

यदि तारा दुष्ट भी हो, अर्थात् पहिली, तीसरी, पाँचवीं, सातवीं भी हो और चन्द्रमा नवें या पाँचवें या अपने उच्चस्थान में, अथवा बुध, बृहस्पति, शुक्र के षड्वर्ग में, अथवा अपने ही षड्वर्ग में स्थित हो तो मुण्डन शुभ होता है । विहित शुभ नक्षत्र हों, चन्द्रमा गोचर से शुभ हो, अर्थात् जन्मराशि से चौथे, छठे, आठवें, बारहवें स्थान को छोड अन्य स्थान में स्थित हो तो दुष्ट भी तारा मुण्डन और यात्रा आदि में शुभ हो जाती है ।। ३२ ।।

मुण्डनादि कार्यों में निषिद्ध काल

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ।। ३३ ।।

अन्वयः—ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोः चौलादि न आचरेत् । ज्येष्ठापत्यस्य ज्येष्ठे चौलं न आचरेत् । कैश्चित् मार्गेऽपि न इष्यते ।। ३३ ।।

जब माता रजस्वला हो, अथवा माता के लड़की हुए महीने से कम अथवा लड़का हुए बीस दिन से कम दिन बीते हों तो लड़के का मुण्डनादि संस्कार न करे । जेठे लड़के और जेठी लड़की का ज्येष्ठ महीने में विवाहादि शुभ कार्य न करे । कोई आचार्य अगहन में भी जेठे लड़के और लड़की के विवाहादि संस्कार को निषिद्ध कहते हैं ।। ३३ ।।

साधारण क्षौरादि का मुहूर्त्त और निषेध

दन्तक्षौरनखक्रियात्र विहिता चौलोदिते वारभे
पातंग्याररवीन् विहाय नवमं घस्रं च सन्ध्यां तथा।
रिक्तां पर्वनिशां निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यतः
स्नाताभ्यक्तकृताशनैर्नहि पुनः कार्या हितप्रेप्सुभिः ॥ ३४ ॥

अन्वयः—पातंग्याररवीन् विहाय च नवमं घस्रं, सन्ध्यां, रिक्तां पर्वनिशां विहाय, चौलोदिते वारभे, दन्तक्षौरनखक्रिया विहिता। अत्र निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यतः स्नाताभ्यक्तकृताशनैः हितप्रेप्सुभिः (जनैः) दन्तक्षौरनखक्रिया नहि कार्या ॥ ३४ ॥

शनैश्चर, मंगल, रविवार, क्षौर दिन से नवें दिन, संध्याकाल, चौथि, नवमी, चतुर्दशी, अष्टमी, पूर्णमासी, अमावास्या, सूर्यसंक्रान्ति और रात्रि को छोड़ मुण्डन में कहे हुए तिथि, वार, नक्षत्र और लग्न में दाँतों को साफ कराना, बाल बनवाना और नख कटाना शुभ कहा है। जिनको अपने हित की इच्छा हो वे बिना आसन के, रणभूमि में, किसी अन्य गाँव में, यात्रा की तैयारी कर चुकने पर, स्नान करके, उबटन या तेल लगाकर और भोजन करके उक्त तीनों काम न करें ॥ ३४ ॥

निमित्तवश क्षौरकर्म

क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे क्षुरकर्म च द्विजनृपाज्ञयाचरेत्।
शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरमाचरेन्न खलु गर्भिणीपतिः ॥ ३५ ॥

अन्वयः—क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे द्विजनृपाज्ञया क्षुरकर्म आचरेत्। खलु गर्भिणीपतिः, शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरं न आचरेत् ॥ ३५ ॥

यज्ञ में, विवाह में, माता-पिता के मरण में, बन्धन से छूटने पर अथवा ब्राह्मण वा राजा की आज्ञा से सदा बाल बनवावे; चाहे निषिद्ध भी वारादि हो तो भी कुछ दोष नहीं। अब गर्भिणीपति के त्याज्य कर्म कहते हैं। शव का ले जाना, तीर्थयात्रा, समुद्र में स्नान और क्षौरकर्म जिसकी स्त्री गर्भवती हो वह पुरुष इतने कर्म न करे ॥ ३५ ॥

क्षौरकर्म में राजाओं के लिए विशेष

नृपाणां हितं क्षौरभे श्मश्रुकर्म दिने पञ्चमे पञ्चमेऽस्योदये वा।
षडग्निस्त्रिमैत्रोऽष्टकः पञ्चपित्र्योऽब्दतोऽब्ध्यर्यमा क्षौरकृन्मृत्युमेति॥ ३६ ॥

अन्वयः—क्षौरभे तथा पञ्चमे पञ्चमे दिने वा अस्य (नक्षत्रस्य) उदये (मुहूर्त्ते) नृपाणां श्मश्रुकर्म हितम् । तथा षडग्निः त्रिमैत्रः, अष्टकः, पञ्चपित्र्यः, अब्ध्यर्यमा, क्षौरकृत् अब्दतः मृत्युं एति ।। ३६ ।।

साधारण क्षौरकर्म के लिए कहे हुए नक्षत्रों में पाँचवें दिन दाढ़ी के बाल बनवाना राजाओं का हितकारक होता है । अब सर्वथा क्षौर में त्याज्य नक्षत्र कहते हैं । कृत्तिका नक्षत्र में छः बार, अनुराधा में तीन बार, रोहिणी में आठ बार, मघा में पाँच बार, उत्तराफाल्गुनी में चार बार बाल बनवाने-वाला पुरुष एक वर्ष के अनन्तर मृत्यु को प्राप्त होता है ।। ३६ ।।

अक्षरारम्भ का मुहूर्त्त

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके
तिथौ शिवार्कदिक्द्विषट्शरत्रिके रवावुदक् ।
लघुश्रवोनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे
चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ।। ३७ ।।

अन्वयः—पञ्चमाब्दके, शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके तिथौ रवौ उदक् लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे, चरोनसत्तनौ, सतां दिने, गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य, शिशोः लिपिग्रहः शुभः स्यात् ।। ३७ ।।

जन्म से पाँचवें वर्ष में, एकादशी, द्वादशी, दशमी, दुइज, छठि, पञ्चमी वा तीज तिथि में; उत्तरायण में सूर्य के रहते; हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा या अनुराधा नक्षत्र में; चर अर्थात्, मेष, कर्क, तुला और मकर को छोड़ शुभग्रहों के लग्न में; शुभ ग्रहों के दिन में; गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी की पूजा करके बालक का अक्षरारम्भ शुभ होता है ।। ३७ ।।

विद्यारम्भ का मुहूर्त्त

मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये
गुरुद्वयेऽर्कजीववित्सितेऽह्नि षट्शरत्रिके ।
शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृता ।। ३८ ।।

अन्वयः—मृगात् करात् श्रुतेः त्रये गुरुद्वये, अर्कजीववित्सिते अह्नि, षट्शरत्रिके शिवार्कदिग्द्विके तिथौ, परैः ध्रुवान्त्यमित्रभे, शुभैः त्रिकोणकेन्द्रगैः अधीतिः उत्तमा स्मृता ।। ३८ ।।

मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य वा आश्लेषा नक्षत्र में; रविवार, बृहस्पति वा शुक्रवार में; छठि, पञ्चमी तीज, एकादशी, द्वादशी, दशमी वा दुइज तिथि में; लग्न से नवें, पाँचवें, पहिले, चौथे, सातवें और दशवें शुभ ग्रहों के रहते विद्यारम्भ शुभ होता है। कोई आचार्य तीनों उत्तरा, रेवती और अनुराधा में भी विद्यारम्भ शुभ कहते हैं ॥ ३८ ॥

वर्णक्रम से यज्ञोपवीत का समय

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाऽष्टमे
वर्षे वाप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद्द्वादशे वत्सरे
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदितं गौणं तदाहुर्बुधाः ॥ ३९ ॥

अन्वयः—गर्भात् वा जनेः [जन्मसमयात्] अष्टमे, अपि वा पञ्चमे वर्षे विप्राणां, (एवं) षष्ठे तथा एकादशे वर्षे क्षितिभुजाम्, पुनः अष्टमे वा द्वादशे वत्सरे वैश्यानाम् व्रतबन्धनं (शुभ) निगदितम्। अथ निगदिते काले द्विगुणे गते सति तत् व्रतम् बुधाः गौणं आहुः ॥ ३६ ॥

गर्भाधान से अथवा जन्मकाल से आठवें वा पाँचवें वर्ष में ब्राह्मणों का, छठे अथवा गेरहवें वर्ष में क्षत्रियों का, आठवें अथवा बारहवें वर्ष में वैश्यों का यज्ञोपवीत श्रेष्ठ कहा गया है। उक्तकाल के द्विगुणकाल में अर्थात् सोलहवें वर्ष ब्राह्मण का, बाइसवें वर्ष क्षत्रिय का और चौबीसवें वर्ष वैश्य का यज्ञोपवीत मध्यम कहा गया है ॥ ३९ ॥

यज्ञोपवीत के नक्षत्रादि

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वा-
रौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत्।
द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च
कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ॥ ४० ॥

अन्वयः—क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रे, अर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने, द्वित्रीषुरुद्र-विदिक्प्रमिते तिथौ, व्रतं सत् स्यात्, च (पुनः) कृष्णादिमत्रिलवके अपि सत्, च (तथा) अपराह्णे व्रतं न सत् ॥ ४० ॥

हस्त, अश्विनी, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, आश्लेषा, स्वाती, पुनर्वसु,

श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मूल, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वा और आर्द्रा नक्षत्र में; सूर्य, बुध, बृहस्पति, शुक्र वा चन्द्रमा के दिन में; दुइज, तीज, पञ्चमी, एकादशी, द्वादशी वा दशमी तिथि में; शुक्लपक्ष में, पञ्चमी तिथि पर्यन्त कृष्णपक्ष में भी दोपहर से पूर्व ही यज्ञोपवीत शुभ होता है। यद्यपि ग्रन्थकार ने महीने यहाँ नहीं कहे तथापि ग्रन्थान्तर से उन्हें जानना चाहिए। वसन्त ऋतु में ब्राह्मण का, ग्रीष्म ऋतु में क्षत्रिय का और शरद् ऋतु में वैश्य का यज्ञोपवीत श्रेष्ठ होता है। यद्यपि सब वर्णों के लिये हस्त, अश्विनी आदि नक्षत्र कहे हैं किंतु ब्राह्मण का यज्ञोपवीत पुनर्वसु नक्षत्र में न करना चाहिए ॥ ४० ॥

यज्ञोपवीत में लग्नदोष

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः।
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ॥ ४१ ॥

अन्वयः—कवीज्यचन्द्रलग्नपाः रिपौ मृतौ स्थिता व्रते अधमाः भवन्ति, तथा अब्जभार्गवौ व्यये, तथा खलाः तनौ मृतौ सुते स्थिताः अशुभाः भवन्ति ॥ ४१ ॥

यज्ञोपवीत में लग्न से छठे वा आठवें स्थान में स्थित शुक्र, बृहस्पति, चन्द्रमा वा लग्नेश तथा बारहवें स्थान में स्थित चन्द्रमा वा शुक्र तथा लग्न में अथवा आठवें वा पाँचवें स्थान में स्थित पापग्रह अधम अर्थात् बालक के मरणकारक होते हैं ॥ ४१ ॥

यज्ञोपवीत में लग्न के गुण

व्रतबन्धेऽष्टषड्रिष्फवर्जिताः शोभनाः शुभाः।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥ ४२ ॥

अन्वयः—शुभाः [शुभग्रहाः] अष्टषड्रिष्फवर्जिताः व्रतबन्धे शोभनाः भवन्ति। तथा खलाः त्रिषडाये, शोभनाः भवन्ति। पूर्णः विधुः गोकर्कस्थः तनौ मृतौ शोभनो भवति ॥ ४२ ॥

यज्ञोपवीत में लग्न से आठवें, छठे वा बारहवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में शुभग्रह स्थित हों और तीसरे छठे वा गेरहवें स्थान में पापग्रह स्थित हों तो शुभ होते हैं। वृष वा कर्क राशि में स्थित पूर्ण चन्द्रमा यदि लग्न में हो तो शुभ होता है ॥ ४२ ॥

वर्णेश वा शाखेश

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः ॥ ४३ ॥

अन्वयः—भार्गवेज्यौ विप्राधीशौ, कुजार्कौ राजन्यानां (अधीशौ), ओषधीशः विशां (अधीशः), ज्ञः शूद्राणां (अधीशः), शनिः अन्त्यजाना (अधीशः), जीवशुक्रारसौम्याः शाखेशाः स्युः ॥ ४३ ॥

शुक्र और बृहस्पति ब्राह्मण वर्ण के ईश, मङ्गल और सूर्य क्षत्रिय वर्ण के ईश, चन्द्रमा वैश्य वर्ण का ईश, बुध शूद्र वर्ण का ईश और शनैश्चर अन्त्यज अर्थात् चाण्डालादि वर्णसङ्कर का ईश है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वणवेद के क्रम से बृहस्पति, शुक्र, मंगल और बुध शाखेश हैं। यथा ऋग्वेद का ईश बृहस्पति, यजुर्वेद का ईश शुक्र, सामवेद का ईश मङ्गल और अथर्वणवेद का ईश बुध है ॥ ४३ ॥

शाखेश और वर्णेश का प्रयोजन

शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं
शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् ।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे
स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन ॥ ४४ ॥

अन्वयः—(व्रते) शाखेशवारतनुवीर्यं अतीव शस्तं स्यात् । शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् स्यात्, जीवे भृगौ च रिपुगृहे, विजिते, नीचे (सति) व्रतेन वेदशास्त्रविधिना रहितः स्यात् ॥ ४४ ॥

यदि शाखेश का दिन हो; शाखेश ही की लग्न हो और शाखेश बली भी हो तो यज्ञोपवीत अति शुभ होता है। अथवा शाखेश, वर्णेश, सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति बली हों तो भी यज्ञोपवीत शुभ होता है। यदि बृहस्पति वा शुक्र अपने शत्रु के स्थान में हों, अथवा युद्ध में किसी ग्रह से हार गये हैं अथवा अपने नीच स्थान में हों तो यज्ञोपवीत करने से वह बालक वेद और शास्त्र से तथा वेद-शास्त्र में कही हुई क्रिया से रहित होता है ॥ ४४ ॥

जन्म-मास आदि का यज्ञोपवीत में अपवाद

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती ।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ॥ ४५ ॥

अन्वयः—विप्राणां आद्यगर्भे, क्षत्रादीनां अनादिमेगर्भे अपि जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते (सति) व्रती विद्याधिकः स्यात् ॥ ४५ ॥

जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मलग्न और जन्मतिथि में ब्राह्मण के पहले लड़के का और क्षत्रियों तथा वैश्यों के पहले को छोड़ अन्य लड़के का यज्ञोपवीत हो तो वह अधिक विद्यावाला होता है ॥ ४५ ॥

बृहस्पति का बल

वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः ॥ ४६ ॥

अन्वयः—वटुकन्याजन्मराशेः त्रिकोणायद्विसप्तगः गुरुः श्रेष्ठः स्यात्, खषट्त्र्याद्येषु पूजया (शुभः) अन्यत्र निन्दितः स्यात् ॥ ४६ ॥

लड़के वा लड़की की जन्मराशि से नवीं, पाँचवीं, गेरहवीं, दूसरी वा सातवीं राशि में बृहस्पति शुभ; दशवीं, छठी, तीसरी वा पहली राशि में पूजा करने से शुभ और चौथी, आठवीं वा बारहवीं राशि में अशुभ होता है ॥ ४६ ॥

गुरुदोषापवाद

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः ।
रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसत् ॥ ४७ ॥

अन्वयः—गुरुः स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे रिष्फाष्टतुर्यगोऽपि इष्टः स्यात् । तथा नीचारिस्थः शुभोऽपि असत् स्यात् ॥ ४७ ॥

बारहवें, आठवें वा चौथे स्थान में भी स्थित बृहस्पति यदि स्वोच्च, स्वराशि, स्वमित्रराशि, स्वनवांश वा वर्गोत्तम में हो तो शुभ हो जाता है और शुभ भी बृहस्पति यदि अपने नीच स्थान में या अपने शत्रु के स्थान में स्थित हो तो वह अशुभ हो जाता है ॥ ४७ ॥

यज्ञोपवीत में निषिद्ध समय

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके ।
प्राक्संध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ॥ ४८ ॥

अन्वयः—कृष्णे, प्रदोषे, अनध्याये, शनौ, निशि, अपराह्णके, प्राक्संध्यागर्जिते तथा गलग्रहे व्रतबन्धः नेष्टः स्यात् ॥ ४८ ॥

पञ्चमी तक को छोड़ कृष्णपक्ष, प्रदोष*, अनध्याय†, शनैश्चर का दिन, रात्रि और दोपहर के बाद का समय, जिस दिन प्रातःकाल मेघ गर्जे वह दिन और गलग्रह‡, इनमें यज्ञोपवीत शुभ नहीं होता ॥ ४८ ॥

सूर्यादि ग्रहों के नवांश में यज्ञोपवीत होने का फल

क्रूरो जडो भवेत्पापः पटुः षट्कर्मकृद्वटुः ।
यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात् ॥ ४९ ॥

अन्वयः—रव्याद्यंशे तनौ सति वटुः क्रमात्, क्रूरः, जडः, पापः, पटुः, षटकर्मकृत्, यज्ञार्थभाक्, तथा मूर्खः स्यात् ॥ ४९ ॥

सूर्य के नवांश+ में यज्ञोपवीत करने से वह बालक क्रूर अर्थात् निर्दय, चन्द्रमा के नवांश में करने से जड़ अर्थात् विचाररहित, मङ्गल के नवांश में पापी, बुध के नवांश में पटु अर्थात् चतुर, बृहस्पति के नवांश में यज्ञ करना-कराना, दान लेना-देना, पढ़ना-पढ़ाना, ये छः कर्म करनेवाला, शुक्र के नवांश में यज्ञ करनेवाला और धनी तथा शनैश्चर के नवांश में यज्ञोपवीत करने से मूर्ख होता है। इसलिए लग्न में शुभग्रह का नवांश हो तब यज्ञोपवीत उत्तम होता है ॥ ४९ ॥

यज्ञोपवीत में चन्द्रनवांश का फल

विद्यानिरतः शुभराशिलवे पापांशगते हि दरिद्रतरः ।
चन्द्रे स्वलवे बहुदुःखयुतः कर्णादितिभे धनवान्स्वलवे ॥ ५० ॥

अन्वयः—शुभराशिलवे चन्द्रे व्रती विद्यानिरतः स्यात्। पापांशगते दरिद्रतरः स्यात्। स्वलवे चन्द्रे बहुदुःखयुतः स्यात्। स्वलवे चन्द्रे कर्णादितिभे धनवान् भवति ॥ ५० ॥

यज्ञोपवीत में यदि चन्द्रमा शुभराशि के नवांश में स्थित हो तो व्रती अर्थात् जिसका यज्ञोपवीत करना है वह बालक सदा विद्या में रुचि रखनेवाला और पापराशि के नवांश में स्थित हो तो अतिशय दरिद्र तथा अपनी राशि के नवांश में अर्थात् कर्कराशि के नवांश में स्थित हो तो बहुत

---

* इसी प्रकरण के ५५ श्लोक में कहेंगे। † इसी प्रकरण के ५४ श्लोक में कहेंगे। ‡ चौथि, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पौर्णमासी, परीवा और कृष्णपक्ष में अमावास्या ये गलग्रहसंज्ञक तिथियाँ हैं।

+ नवांशों का विचार विवाहप्रकरण में कहेंगे।

दुःखों से संयुक्त होता है। यदि यज्ञोपवीतकाल में चन्द्रमा कर्कराशि के नवांश में हो और श्रवण नक्षत्र या पुनर्वसु नक्षत्र हो तो वह बालक धनवान होता है ॥ ५० ॥

केन्द्रस्थित सूर्यादि ग्रहों का फल

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः ।
प्राज्ञोऽर्थवान्म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ॥ ५१ ॥

अन्वयः—केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः व्रती क्रमेण राजसेवी, वैश्यवृत्तिः, शस्त्रवृत्तिः, पाठकः, प्राज्ञः, अर्थवान्, च म्लेच्छसेवी भवति ॥ ५१ ॥

लग्न, चौथे, सातवें और दशवें स्थान की केन्द्र संज्ञा है। सूर्य केन्द्र में स्थित हो तो जिसका यज्ञोपवीत किया जाय वह राजा का सेवक, चन्द्रमा केन्द्र में हो तो वैश्यवृत्ति करनेवाला, मङ्गल केन्द्र में हो तो शस्त्रजीवी, बुध केन्द्र में हो तो अध्यापक, बृहस्पति केन्द्र में हो तो पण्डित, शुक्र केन्द्र में हो तो धनवान् और शनैश्चर केन्द्र में हो तो म्लेच्छों का सेवक होता है ॥ ५१ ॥

यज्ञोपवीतकाल में संयुक्त ग्रहों का फल

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते ।
निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निर्घृणः सद्युते पटुः ॥ ५२ ॥

अन्वयः—शुक्रे, जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते व्रती क्रमेण निर्गुणः, क्रूरचेष्टः तथा निर्घृणः स्यात् । सद्युते पटुः स्यात् ॥ ५२ ॥

यदि यज्ञोपवीतकाल में शुक्र, बृहस्पति व चन्द्रमा, इनमें से किसी ग्रह के साथ सूर्य हो तो बालक निर्गुण, मङ्गल हो तो निर्दय और शनैश्चर हो तो निर्लज्ज होता है। शुभ ग्रहों का संयोग होने से सब विद्याओं में निपुण होता है ॥ ५२ ॥

यज्ञोपवीत में चन्द्रवश से शुभाशुभ योग

विधौ सितांशगे सिते त्रिकोणगे तनौ गुरौ ।
समस्तवेदविद् व्रती यमांशगेऽतिनिर्घृणः ॥ ५३ ॥

अन्वयः—विधौ सितांशगे, सिते त्रिकोणगे, गुरौ तनौ, व्रती समस्तवेदविद् भवति । यमांशगे अतिनिर्घृणः स्यात् ॥ ५३ ॥

यदि शुक्र के नवांश में चन्द्रमा, लग्न से पाँचवें वा नवें स्थान में शुक्र और लग्न में बृहस्पति हो तो बालक चारों वेदों का जाननेवाला होता है। यदि शनैश्चर के नवांश में चन्द्रमा, लग्न में बृहस्पति और लग्न से पाँचवें वा नवें स्थान में शुक्र हो तो बालक निर्दय अथवा निर्लज्ज होता है ॥ ५३ ॥

अनध्यायसंज्ञक तिथियाँ

शुचिशुक्रपौषतपसां दिगशिवरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः ।
भूतादित्रितयाष्टमी संक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥ ५४ ॥

अन्वयः—शुचिशुक्रपौषतपसां मासानां दिगशिवरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः, तथा भूतादित्रितयाष्टमी संक्रमणं च व्रतेषु अनध्यायाः (भवन्ति) ॥ ५४ ॥

आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी, माघ शुक्ल द्वादशी तथा चतुर्दशी, पौर्णमासी, अमावास्या, परीवा, अष्टमी और सूर्य संक्रान्ति ये सब यज्ञोपवीत में अनध्यायसंज्ञक हैं। इनमें यज्ञोपवीत न करना चाहिए ॥ ५४ ॥

प्रदोष-लक्षण

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।
रात्र्यर्धसार्धप्रहरयाममध्ये स्थितैः क्रमात् ॥ ५५ ॥

अन्वयः—अर्कतर्कत्रितिथिषु रात्र्यर्धसार्धप्रहरयाममध्ये स्थितैः तदग्रिमैः प्रदोष स्यात् ॥ ५५ ॥

द्वादशी में आधी रात से पूर्व ही यदि त्रयोदशी का योग हो तो वह प्रदोष, छठि में डेढ़ पहर रात बीतने के पूर्व ही यदि सप्तमी का योग हो तो वह प्रदोष और तीज में पहर भर रात बीतने के पूर्व ही यदि चौथ का योग हो तो वह प्रदोष कहा जाता है ॥ ५५ ॥

ब्रह्मौदन के पहिले उत्पात होने पर शांति का विधान

प्राग् ब्रह्मौदनपाकाद् व्रतबन्धानन्तरं यदि चेत् ।
उत्पातानध्ययनोत्पत्तावपि शान्तिपूर्वकं तत्स्यात् ॥ ५६ ॥

अन्वयः—व्रतबन्धानन्तरं, ब्रह्मौदनपाकात् प्राग् यदि चेत् उत्पातानध्ययनोत्पत्तौ अपि शान्तिपूर्वकं तत् (ब्रह्मौदनं) स्यात् ॥ ५६ ॥

विधिपूर्वक यज्ञोपवीत होने के पश्चात् और सायंकाल में होनेवाले

ब्रह्मौदन कर्म के पूर्व यदि अकस्मात् कोई उत्पातविशेष या अनध्याय हो तो वह उस लड़के के पढ़ने में विघ्नकारक होता है। इसलिए पहिले उसकी शान्ति करके तब ब्रह्मौदन कर्म करे और यदि यज्ञोपवीत के पहिले अकस्मात् कोई उत्पात हो तो यज्ञोपवीत ही न करे। ब्रह्मौदन कर्म बह्वृचों के यहाँ होता है ॥ ५६ ॥

वेदों के भद से यज्ञोपवीत के नक्षत्र

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये।
ध्रौवेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ सत् ॥ ५७ ॥

अन्वयः—शशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु, पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये च ध्रौवेषु, अश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे, मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ, वेदक्रमात् व्रतं सत् स्यात् ॥ ५७ ॥

मृगशिरा, आर्द्रा, आश्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल और तीनों पूर्वा में ऋग्वेदाध्यायियों का; रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी और तीनों उत्तरा में यजुर्वेदाध्यायियों का; अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, आर्द्रा और श्रवण नक्षत्र में सामवेदाध्यायियों का तथा मृगशिरा, रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा और पुनर्वसु नक्षत्र में अथर्वणवेदाध्यायियों का यज्ञोपवीत शुभ होता है ॥ ५७ ॥

मृ०	आ०	श्ले०	ह०	चित्रा	स्वाती	मू०	पू० फा०	पू० षा०	पू० भा०	ऋग्वेद
रे०	ह०	अनु०	मृ०	पुन०	पु०	रो०	उ० फा०	उ० षा०	उ० भा०	यजुर्वेद
अ०	ध०	पु०	ह०	उ.फा.	उ० षा०	उ० भा०	आ०	श्र०		सामवेद
मृ०	रेवती	पु०	अ०	ह०	अनु०	ध०	पु०			अ० वेद

यज्ञोपवीतादि में धर्मशास्त्र का विचार

नान्दीश्राद्धोरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे न हि।
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्योऽन्यथा न सत् ॥ ५८ ॥

अन्वयः—नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे सति, (अग्रे) लग्नान्तरे नहि (प्राप्तेसति) शान्त्वा चौलं व्रतं (कार्यम्) विवाहः (कार्यः) अन्यथा न सत् ॥ ५८ ॥

नान्दीश्राद्ध होने के पश्चात् जिसकी माता रजस्वला हो उस लड़के का मुण्डन, यज्ञोपवीत वा विवाह पूर्व विचारे हुए मुहूर्त्त को छोड़ उसी के समीप दूसरे मुहूर्त्त में करना चाहिए। यदि दैवयोग से पूर्व विचारे हुए मुहूर्त्त के समीप दूसरा शुभ मुहूर्त्त न मिले तो धर्मशास्त्र में कही हुई शान्ति*करके

* वाक्यसार में कही हुई विधि से लक्ष्मी की पूजा।

उसी मुहूर्त्त में करे। किन्तु विना शान्ति किये यदि उक्त कर्म किये जाते हैं, तो शुभ नहीं होता ॥ ५८ ॥

छुरिकाबन्धन मुहूर्त्त

विचैत्रव्रतमासादौ विभौमास्ते विभूमिजे।
छुरिकाबन्धनं शस्तं नृपाणां प्राग्विवाहतः ॥ ५९ ॥

अन्वयः—विचैत्रव्रतमासादौ,विभौमास्ते, विभूमिजे, नृपाणां विवाहतः प्राक् छुरिकाबन्धनं शस्तम् ॥ ५६ ॥

चैत्रमास; मंगल, बृहस्पति, शुक्र का अस्तकाल और मंगल दिन को छोड़कर यज्ञोपवीत में कहे हुए मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, वार लग्नादि में क्षत्रियों को विवाह से पहिले छुरिकाबन्धन शुभ होता है ॥ ५९ ॥

केशान्तकर्म का मुहूर्त्त

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम्।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्त्तनमिष्यते ॥ ६० ॥

अन्वयः—षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे केशान्तं शुभम्। तथा व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्तनम् इष्यते ॥ ६० ॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ संस्कारप्रकरणं समाप्तम् ॥ ५ ॥

जन्म से सोलहवें वर्ष में, मुण्डन में कहे हुए मुहूर्त्त में केशान्तकर्म शुभ होता है। यह केवल ब्राह्मणों के लिए है क्योंकि क्षत्रियों का बाइसवें वर्ष और वैश्यों का चौबीसवें वर्ष केशान्तकर्म होता है, यह मनुजी ने कहा है। अब समावर्त्तन कर्म का मुहूर्त्त कहते हैं। यज्ञोपवीत में कहे हुए मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र और लग्नादि में समावर्त्तन कर्म करना शुभ होता है ॥ ६० ॥

विवाहप्रकरण

—:०:—

भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्याः।
तस्माद्विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि तन्निघ्नतामुपगताः सुतशीलधर्माः ॥१॥

अन्वयः—शुभशीलयुक्ता भार्या त्रिवर्गकरणं भवति, तस्याः शीलं लग्नवशेन शुभं भवति, तस्मात् विवाहसमयः परिचिन्त्यते, हि (यस्मात्) सुतशीलधर्माः तन्निध्नतां उपगताः ॥ १ ॥

सुशीला स्त्री धर्म, अर्थ और काम की वृद्धि करती है, और स्त्री की सुशीलता विवाहकालिक लग्न के अधीन है, अर्थात् शास्त्रोक्त शुभ मुहूर्त्त में विवाह होता है तो स्त्री का स्वभाव और आचरण अच्छे होते हैं। और यदि अशुभ मुहूर्त्त में विवाह हुआ तो स्वभाव आदि अच्छे नहीं होते। इसलिए विवाह का मुहूर्त्त अच्छी तरह विचारना चाहिए। क्योंकि सुशीलता, पुत्र-प्राप्ति और धर्म, ये सब विवाहकाल के मुहूर्त्त के अधीन हैं ॥ १ ॥

विवाह प्रश्नविधि

आदौ संपूज्य रत्नादिभिरथ गणकं वेदयेत्स्वस्थचित्तं
कन्योद्वाहं दिगीशानलहयविशिखे प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुः।
दृष्टो जीवेन सद्यः परिणयनकरो गोतुलाकर्कटाख्यं
वा स्यात्प्रश्नस्य लग्नं शुभखचरयुतालोकितं तद्विदध्यात् ॥ २ ॥

अन्वयः—आदौ रत्नादिभिः स्वस्थचित्त गणकं सम्पूज्य अथ कन्योद्वाहं वेदयेत्। यदि इन्दुः प्रश्नलग्नात् दिगीशानलहयविशिखे (स्थितः) जीवेन दृष्टः तदा सद्यः परिणयनकरः स्यात्, वा गोतुलाकर्कटाख्यं प्रश्नस्य लग्नं शुभखचरयुतालोकितं यदि स्यात् तदा तद् विदध्यात् ॥ २ ॥

मणि, सुवर्ण, चाँदी, वस्त्र, फल, फूल आदि से ज्योतिषी पण्डित की पूजा करके प्रश्नकर्ता उससे कहे कि कन्या का यह नाम है और वर का यह नाम है, इन दोनों का विवाह योग्य है या नहीं। यदि प्रश्नकालिक लग्न से दशवें, गेरहवें, तीसरे, सातवें वा पाँचवें स्थान में चन्द्रमा स्थित होकर बृहस्पति से दृष्ट हो तो शीघ्र ही विवाह होता है, अथवा वृष, तुला वा कर्क प्रश्नकालिक लग्न हो और शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो भी शीघ्र विवाह होता है ॥ २ ॥

विवाहकारक अन्य योग

विषमभांशगतौ शशिभार्गवौ तनुगृहं बलिनौ यदि पश्यतः।
रचयतो वरलाभमिमौ यदा युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ ॥ ३ ॥

अन्वयः—यदि बलिनौ शशिभार्गवौ विषमभांशगतौ तनुगृहं पश्यतः (तदा) वरलाभं

रचयतः । यदा इमौ [बलिनौ शशिभार्गवौ] युगलभांशगतौ (तनुगृहं पश्यतः) तदा युवतिप्रदौ (स्तः) ॥ ३ ॥

प्रश्नकाल में यदि विषमराशि में या विषमराशि के नवांश में स्थित चन्द्रमा वा शुक्र बली होकर लग्न को देखते हों तो कन्या को वर का लाभ कराते हैं, और यदि समराशि में या समराशि के नवांश में स्थित शुक्र वा चन्द्रमा बली होकर लग्न को देखते हों तो वर को स्त्री का लाभ कराते हैं ॥ ३ ॥

वैधव्ययोग

षष्ठाष्टस्थः प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुर्लग्ने क्रूरः सप्तमे वा कुजः स्यात् ।
मूर्त्ताविन्दुः सप्तमे तस्य भौमो रण्डा सा स्यादष्टसंवत्सरेण ॥ ४ ॥

अन्वयः—यदि इन्दुः प्रश्नलग्नात् षष्ठाष्टस्थः वा लग्ने क्रूरः तस्य सप्तमे कुजः, वा मूर्तौ इन्दुः तस्य सप्तमे भौमः तदा सा कन्या अष्टसंवत्सरेण रण्डा स्यात् ॥ ४ ॥

प्रश्नकालिक लग्न से छठे वा आठवें स्थान में यदि चन्द्रमा स्थित हो तो विवाह से आठवें वर्ष में कन्या विधवा हो जाती है, और यदि प्रश्नकालिक लग्न में क्रूरग्रह स्थित हों और उससे सातवें स्थान में मंगल हो तो भी विवाह से आठवें वर्ष में कन्या विधवा होती है, अथवा प्रश्नकालिक लग्न में चन्द्रमा हो और उसके सातवें स्थान में मंगल हो तो भी विवाह से आठवें वर्ष में कन्या विधवा होती है ॥ ४ ॥

कुलटा वा मृतवत्सायोग

प्रश्नतनोर्यदि पापनभोगः पञ्चमगो रिपुदृष्टशरीरः ।
नीचगतश्च तदा खलु कन्या सा कुलटा त्वथवा मृतवत्सा ॥ ५ ॥

अन्वयः—यदि पापनभोगः प्रश्नतनोः पञ्चमगः रिपुदृष्टशरीरः (सन्) नीचगतः, तदा सा कन्या कुलटा अथवा मृतवत्सा (स्यात्) ॥ ५ ॥

प्रश्नकालिक लग्न से पाँचवें स्थान में पापग्रह स्थित हो, और वह अपने शत्रु से देखा जाता हो और अपने नीच स्थान में हो तो कन्या कुलटा अथवा मृतवत्सा (जिसकी सन्तान न जिये) होती है ॥ ५ ॥

विवाहभङ्गयोग

यदि भवति सितातिरिक्तपक्षे तनुगृहतः समराशिगः शशाङ्कः ।
अशुभखचरवीक्षितोऽरिरन्ध्रे भवति विवाहविनाशकारकोऽयम् ॥ ६ ॥

अन्वयः—यदि सितातिरिक्तपक्षे शशाङ्कः तनुगृहतः समराशिगः अशुभखचरवीक्षितः (सन्) अरिरन्ध्रे भवति तदा अयं विवाहविनाशकारको भवति ॥ ६ ॥

कृष्णपक्ष हो, चन्द्रमा वृष और कर्क आदि सम राशियों में, प्रश्नलग्न से छठे वा आठवें स्थान में स्थित हो और अशुभ ग्रहों से देखा जाता हो, तो विवाहभंगयोग होता है ॥ ६ ॥

जन्मकालिक बालविधवायोग के विचारने का उपदेश करते हुए उसके शान्त होने का उपाय

जन्मोत्थं च विलोक्य बालविधवायोगं विधाय्य व्रतं
सावित्र्या उत पैप्पलं हि सुतया दद्यादिमां वा रहः ।
सल्लग्नेऽच्युतमूर्तिपिप्पलघटैः कृत्वा विवाहं स्फुटं
दद्यात्तां चिरजीविनेऽत्र न भवेद्दोषः पुनर्भूभवः ॥ ७ ॥

अन्वयः—जन्मोत्थं चकारात् (प्रश्नलग्नोत्थं) बालविधवायोगं विलोक्य हि [निश्चयेन] सुतया सावित्र्या व्रतं, उत [वा] पैप्पलं व्रतं विधाय्य इमां चिरजीविने (वराय) दद्यात् । वा, सल्लग्ने रहः अच्युतमूर्ति-पिप्पलघटैः स्फुटं विवाहं कृत्वा तां चिरजीविने दद्यात् । अत्र पुनर्भूभवः दोषः न भवेत् ॥ ७ ॥

उक्त रीति से प्रश्नकालिक बालविधवायोग और जातकोक्त रीति से कन्या के जन्मकालिक बालविधवायोग का विचार करके कन्या का पिता एकान्त में कन्या से सावित्री* व्रत या पीपर† वृक्ष का व्रत कराके शुभ लग्न में चिरजीवी वर के साथ उस कन्या का विवाह कर दे, अथवा चतुर्भुजी विष्णु की सोने की मूर्ति वा पीपर का वृक्ष वा मिट्टी का घड़ा, इन तीनों में से किसी के साथ शुभ लग्न में कन्या का विवाह करे और फिर चिरजीवी वर के साथ विवाह कर दे, ऐसा करने से पुनर्भू‡ दोष नहीं लगता ॥ ७ ॥

प्रश्न के समय प्रथम सन्तान का विचार

प्रश्नलग्नक्षणे यादृशापत्ययुक्स्वेच्छया कामिनी तत्र चेदाव्रजेत् ।
कन्यका वा सुतो वा तदा पण्डितैस्तादृशापत्यमस्या विनिर्दिश्यते ॥ ८ ॥

अन्वयः—तत्र प्रश्नलग्नक्षणे चेत् स्वेच्छया यादृशापत्ययुक् कामिनी आव्रजेत् तदा कन्यका वा सुतः तादृशापत्यं अस्याः पण्डितैः विनिर्दिश्यते ॥ ८ ॥

---

*व्रतखण्ड में इसका विधान लिखा है । †ज्ञानभास्करनामक ग्रन्थ में इसका विधान लिखा है ।
‡विवाहित पति को छोड़ दूसरे के साथ विवाह करना ।

प्रश्नमुहूर्त्त में जैसी सन्तान लिये हुई कोई स्त्री या कन्या ज्योतिषी के समीप अपनी इच्छा से आ जाय वैसी ही प्रथम सन्तान उस कन्या के होती है जिसके विवाह का प्रश्न हो। कन्या लेकर आवे तो कन्या और पुत्र लेकर आवे तो पुत्र होता है ॥ ८ ॥

प्रश्नकाल में साधारण शुभाशुभ निमित्त

शङ्खभेरीविपञ्चीरवैर्मङ्गलं जायते वैपरीत्यं तदा लक्षयेत्।
वायसो वा खरः श्वा शृगालोऽपि वा प्रश्नलग्नक्षणे रौति नादं यदि ॥ ९ ॥

अन्वयः—प्रश्नलग्नक्षणे शंखभेरीविपञ्चीरवैः मङ्गलं जायते। वायसः वा खरः श्वा शृगालः अपि यदि रौति वा नादं करोति तदा वैपरीत्यं लक्षयेत् ॥ ९ ॥

यदि प्रश्नकाल में अकस्मात् शंख, तुरही वा वीणा का शब्द सुन पड़े तो वर-कन्या का मंगल होता है, और यदि कौआ, गदहा, कुत्ता वा सियार शब्द करने लगें तो उससे विपरीत अर्थात् अमंगल होता है ॥ ९ ॥

कन्यावरण-मुहूर्त्त

विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैर्वस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचितऋक्षैः।
वस्त्रालङ्कारादिसमेतैः फलपुष्पैः सन्तोष्यादौ स्यादनु कन्यावरणं हि ॥ १० ॥

अन्वयः—विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैः वस्वाग्नेयैः वा करपीडोचितऋक्षैः हि (निश्चयेन) आदौ वस्त्रालंकारादिसमेतैः फलपुष्पैः (कन्यां) संतोष्य अनु कन्यावरणं स्यात् ॥ १० ॥

उत्तराषाढ़, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा वा कृत्तिका नक्षत्र में, अथवा विवाहोक्त नक्षत्रादि में, वस्त्र, आभूषण अथवा फल, फूल आदि से कन्या को संतुष्ट करके फिर उसका वरण करे ॥ १० ॥

वरवरण अर्थात् फलदान का मुहूर्त्त

धरणिदेवोऽथवा कन्यकासोदरः शुभदिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः।
वरवृतिं वस्त्रयज्ञोपवीतादिना ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेत् ॥ ११ ॥

अन्वयः—शुभदिने ध्रुवयुतैः वह्निपूर्वात्रयैः धरणिदेवः अथवा कन्यकासोदरः गीतवाद्यादिभिः संयुतः सन्, वस्त्रयज्ञोपवीतादिना वरवृतिं आचरेत् ॥ ११ ॥

रोहिणी, तीनों उत्तरा, कृत्तिका और तीनों पूर्वा नक्षत्र, शुभ दिन, तिथि, लग्नादि में गीत-वाद्य आदि के साथ ब्राह्मण अथवा कन्या का भाई वस्त्र, यज्ञोपवीत, द्रव्य, फल, फूलादि से वर का वरण करे ॥ ११ ॥

विवाहकाल में ग्रहशुद्धि

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात् ।
रविशुद्धिवशाच्छुभो वराणामुभयोश्चन्द्रविशुद्धितो विवाहः ॥ १२ ॥

अन्वयः—कन्यकानां षडब्दकोपरिष्टात्, समवर्षेषु गुरुशुद्धिवशेन, तथा वराणां रविशुद्धिवशात्, तथा उभयोः चन्द्रविशुद्धितः विवाहः (शुभः) स्यात् ॥ १२ ॥

गुरुशुद्धिवश से अर्थात् कन्या की जन्मराशि से नवें, पाँचवें, दूसरे, सातवें वा गेरहवें स्थान में बृहस्पति के रहते, छः वर्ष से ऊपर समवर्ष में अर्थात् आठवें या दशवें वर्ष में कन्याओं का, और सूर्यशुद्धिवश से अर्थात् वर की जन्मराशि से तीसरे, छठे, दशवें वा गेरहवें स्थान में सूर्य के रहते, विषमवर्ष में अर्थात् नवें, गेरहवें, तेरहवें इत्यादि वर्षों में वर का, और चन्द्रविशुद्धिवश से अर्थात् वर और कन्या की जन्मराशि से पहिले चौथे, आठवें, बारहवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में चन्द्रमा के रहते वर और कन्या का विवाह शुभ होता है ॥ १२ ॥

विवाह के महीने

मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः ।
अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्त्तिकपौषमधुष्वपि ॥ १३ ॥

अन्वयः—मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे रवौ (तथा) मिथुनगे रवौ (सति) शुचेः त्रिलवेऽपि (तथा) अलिमृगाजगते रवौ (सति) कार्त्तिकपौषमधुषु अपि करपीडनं (शुभं) भवति ॥ १३ ॥

मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, वृष और मेष राशि में सूर्य के रहते विवाह शुभ होता है। परन्तु मिथुन राशि में आषाढ़ के तीसरे भाग अर्थात् आषाढ़ शुक्ल दशमी तक, वृश्चिक राशि में कार्त्तिक में भी, मकर राशि में पौष में भी और मेष राशि में सूर्य के रहते चैत्र में भी विवाह होता है ॥ १३ ॥

सन्तानभेद से जन्ममासादि अशुभ व शुभ विवाह

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोर्जन्ममासभतिथौ करग्रहः ।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते चेद्द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः ॥ १४ ॥

अन्वयः—जन्ममासभतिथौ आद्यगर्भसुतकन्ययोः द्वयोः करग्रहः न उचितः । चेत् द्वितीयजनुषोः सुतकन्ययोः (करग्रहः) सुतप्रदः विबुधैः प्रशस्यते ॥ १४ ॥

जन्ममास, जन्मनक्षत्र, जन्मतिथि और जन्मलग्न में प्रथम उत्पन्न पुत्र वा

कन्या का विवाह उचित नहीं है। उसके बाद उत्पन्न पुत्र वा कन्या का विवाह पुत्र का देनेवाला और पण्डितों से प्रशंसित भी है ॥ १४ ॥

ज्येष्ठमास में विशेष

ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं संप्रदिष्टं त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदापि।
केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोह्य चाहुर्नैवान्योन्यं ज्येष्ठयोः स्याद्विवाहः ॥ १५ ॥

अन्वयः—ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं सम्प्रदिष्टम्, त्रिज्येष्ठं चेत्, (तदा) कदापि नैव युक्तं स्यात्, केचित् (आचार्याः) वह्निगं सूर्यं प्रोह्य च विवाहं आहुः। किन्तु अन्योन्यं ज्येष्ठयोः (कन्यावरयोः) विवाहः नैव (शुभः) स्यात् ॥ १५ ॥

विवाह में ज्येष्ठ महीना और ज्येष्ठ वर अथवा ज्येष्ठ महीना और ज्येष्ठ कन्या, ये दो ज्येष्ठ मध्यम कहे गये हैं, अर्थात् शुभ वा अशुभ नहीं हैं। और ज्येष्ठ कन्या, ज्येष्ठ वर और ज्येष्ठ महीना, ये तीन ज्येष्ठ तो किसी तरह से भी श्रेष्ठ नहीं हैं। कोई आचार्य कहते हैं कि कृत्तिका नक्षत्र में स्थित सूर्य को छोड़कर ज्येष्ठ मास में ज्येष्ठ वर वा ज्येष्ठ कन्या का विवाह उचित नहीं है। अर्थात् कृत्तिका में जब सूर्य रहते हैं तब ज्येष्ठ में भी ज्येष्ठ वर अथवा ज्येष्ठ कन्या का विवाह शुभ होता है। ज्येष्ठ वर और ज्येष्ठ कन्या का विवाह तो कभी भी शुभ नहीं होता ॥ १५ ॥

विवाहादिविशेष का निषेध

सुतपरिणयात् षण्मासान्तः सुताकरपीडनं
न च निजकुले तद्वद्वा मण्डनादपि मुण्डनम्।
न च सहजयोर्देये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके
न सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्द्धं शुभे न पितृक्रिया ॥ १६ ॥

अन्वयः—सुतपरिणयात् षण्मासान्तः सुताकरपीडनं न, च तद्वत् निजकुले मण्डनात् मुण्डनं अपि न, च(तथा) सहजयोः भ्रात्रोः सहोदरकन्यके न देये, अब्दार्धं सहजसुतोद्वाहः न, तथा शुभे पितृक्रिया न (कार्या) ॥ १६ ॥

एक कुल में किसी लड़के के विवाह के बाद छः महीने के भीतर किसी लड़की का विवाह और किसी लड़के या लड़की के विवाह के बाद छः महीने के भीतर किसी का मुण्डन न कराना चाहिए, अर्थात् लड़की के विवाह के बाद लड़के का विवाह और मुण्डन के बाद विवाह कराना चाहिए। सगे दो भाइयों के साथ सगी दो बहनों का विवाह, छः महीने के भीतर ही सगे

दो भाइयों का विवाह, छः महीने के भीतर सगी दो बहिनों का विवाह नहीं कराना चाहिए अर्थात् सौतेले भाइयों और सौतेली बहिनों का करा सकते हैं। विवाहादि शुभ कार्यों में पितृश्राद्धादि न करना चाहिए, अर्थात् ऐसे समय में विवाह आदि की लग्न ठीक करना चाहिए कि जिसमें श्राद्ध का दिन न पड़े ॥ १६ ॥

विपत्ति में विवाह का विचार

वध्वा वरस्यापि कुले त्रिपूरुषे नाशं व्रजेत् कश्चन निश्चयोत्तरम् ।
मासोत्तरं तत्र विवाह इष्यते शान्त्याथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥ १७ ॥

अन्वयः—वध्वाः अपि वा वरस्य त्रिपूरुषे कुले, निश्चयोत्तरम्, यदि कश्चन नाशं व्रजेत् तत्र मासोत्तरं विवाह इष्यते, अवथा परैः सूतकनिर्गमे शान्त्या विवाहः देष्यते ॥ १७ ॥

विवाह का निश्चय होने पर यदि वर अथवा कन्या के वंश में तीन पुरुष के मध्य में कोई मर जाय तो उसके मरणदिन से महीने भर के बाद शान्ति* करके विवाह करे तो शुभ होता है, अथवा यदि आवश्यक हो तो अपने वर्ण के अनुसार अशौच व्यतीत हो जाने पर शान्ति करके विवाह करे, यह अन्य आचार्य कहते हैं ॥ १७ ॥

उक्त विषय पर विशेष

चूडा-व्रतं चापि विवाहतो व्रताच्चूडा च नेष्टा पुरुषत्रयान्तरे ।
वधूप्रवेशाच्चसुताविनिर्गमः षण्मासतो वाब्दविभेदतः शुभः ॥ १८ ॥

अन्वयः—पुरुषत्रयान्तरे विवाहतः चूडा नेष्टा च व्रतं अपि (नेष्टम्) च तथा व्रतात् चूडा अपि नेष्टा, च (तथा) वधूप्रवेशात् सुताविनिर्गमः (नेष्टः) षण्मासतः परं वा अब्दविभेदतः शुभः स्यात् ॥ १८ ॥

किसी का विवाह होने के बाद छः महीने के भीतर उसी कुल में तीन पीढ़ी के अन्दर किसी का मुण्डन और यज्ञोपवीत शुभ नहीं होता। तथा किसी का यज्ञोपवीत होने के बाद छः महीने के भीतर किसी का मुण्डन शुभ नहीं होता तथा वधू-प्रवेश होने के बाद छः महीने के भीतर किसी का विवाह शुभ नहीं होता। यदि आवश्यक हो तो संवत्सर के भेद से छः महीने के भीतर भी करना चाहिए। यथा माघ में किसी का विवाह हुआ हो

*याज्ञवल्क्य-संहिता में कही हुई गणेश की पूजा।

और संवत्सर बदलने के बाद वैशाख में उसी कुल में किसी का मुण्डन या यज्ञोपवीत हो तो वह शुभ है। ऐसे ही उक्त संपूर्ण विषयों में जानना चाहिए ॥ १८ ॥

दुष्ट नक्षत्रों में उत्पन्न वर-कन्या का फल

श्वश्रूविनाशमहिजौ सुतरां विधत्तः
कन्यासुतौ निर्ऋतिजौ श्वशुरं हतश्च ।
ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं च
शक्राग्निजा भवति देवरनाशकर्त्री ॥ १९ ॥
द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा ।
मूलान्त्यपादसार्पाद्यपादजातौ तयोः शुभौ ॥ २० ॥

अन्वयः—अहिजौ कन्यासुतौ सुतरां श्वश्रूविनाशं विधत्तः, च निर्ऋतिजौ कन्यासुतौ श्वशुरं हतः, ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं (हन्ति), शक्राग्निजा देवरनाशकर्त्री भवति ॥ १९ ॥ द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा, मूलान्त्यपादसर्पाद्यपादजातौ तयोः (श्वश्रूश्वशुरयोः) शुभौ ॥ २० ॥

आश्लेषा में उत्पन्न वर वा कन्या सासु का, मूल नक्षत्र में उत्पन्न कन्या वा वर श्वशुर का, ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न कन्या अपने पति के बड़े भाई का और विशाखा में उत्पन्न कन्या अपने पति के छोटे भाई का नाश करती है ॥ १९ ॥ विशाखा के पहिले तीन चरण में उत्पन्न कन्या अपने पति के छोटे भाई को सुख देती है, मूल नक्षत्र के चौथे चरण में उत्पन्न कन्या वा वर श्वसुर को और आश्लेषा नक्षत्र के पहिले चरण में उत्पन्न कन्या वा वर सासु को सुख देते हैं ॥ २० ॥

अष्टकूट

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम् ।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥ २१ ॥

अन्वयः—सुगमः ॥ २१ ॥

वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रहमैत्री, गणमैत्री, भकूट और नाड़ी, ये आठ कूट विवाह में अवश्य विचारना चाहिए। इनमें उत्तरोत्तर का एक गुण अधिक है। यथा वर-कन्या की वर्णमैत्री रहते एक गुण, कन्या की जन्मराशि वर की जन्मराशि के वश्य रहते दो गुण, परस्पर तारा शुभ रहते तीन गुण, वर-

कन्या के जन्म-नक्षत्रों की परस्पर योनिमैत्री रहते चार गुण, वर-कन्या के जन्मराशीश ग्रहों की परस्पर मित्रता रहते पाँच गुण, वर-कन्या के जन्म-नक्षत्रों की परस्पर गणमैत्री रहते छः गुण, वर-कन्या की जन्मराशि की परस्पर शुभ संख्या रहते सात गुण और वर-कन्या के जन्मनक्षत्रों की नाड़ी भिन्न रहते आठ गुण होते हैं। सब मिलकर छत्तीस गुण जिस वर-कन्या के हों उनका विवाह बहुत शुभ होता है ॥ २१ ॥

वर्णकूट

द्विजा झषालिकर्कटास्ततो नृपा विशोऽङ्घ्रिजाः ।
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ॥ २२ ॥

अन्वयः—झषालिकर्कटाः द्विजः (ज्ञेयाः) ततः नृपाः [क्षत्रियाः] ततः विशः [वैश्याः] ततः अंघ्रिजाः [शूद्राः]। वरस्य वर्णतः अधिका वधूः बुधैः न शस्यते ॥ २२ ॥

मीन, वृश्चिक, कर्क ये तीन राशियाँ ब्राह्मणसंज्ञक; मेष, धनु, सिंह, ये तीन क्षत्रियसंज्ञक; वृष, मकर, कन्या, ये तीन वैश्यसंज्ञक और मिथुन, कुम्भ, तुला, ये तीन शूद्रसंज्ञक हैं। इन चारों में पहिले से दूसरा, दूसरे से तीसरा और तीसरे से चौथा वर्ण नीच है। यदि वर की जन्मराशि के वर्ण से कन्या की जन्मराशि का वर्ण श्रेष्ठ हो तो उस कन्या के साथ उस वर का विवाह न करना चाहिए। ब्राह्मणवर्ण कन्या और क्षत्रियादि वर्ण वर हो तो उनका परस्पर विवाह योग्य नहीं होता ॥ २२ ॥

वर्णबोधक चक्र

१२	४	८	ब्राह्मण
१	५	९	क्षत्रिय
२	६	१०	वैश्य
३	७	११	शूद्र

वश्यकूट

हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजास्तु भक्ष्याः ।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत् ॥ २३ ॥

अन्वयः—मृगेन्द्रं हित्वा सर्वे नरराशिवश्याः तथा एषां [नरराशीनां] जलजाः

भक्ष्याः, तथा अलिं विना सर्वे सिंहस्य वशे। अतः अन्यत् नराणां व्यवहारतः ज्ञेयम् ॥ २३ ॥

सिंह राशि को छोड़ अन्य सब राशियाँ मनुष्य राशियों के अर्थात् मिथुन, कन्या, तुला के वश में हैं; जल राशियाँ अर्थात् कर्क, मकर, कुम्भ, मीन तो मनुष्य राशियों के भक्ष्य ही हैं; वृश्चिक राशि को छोड़ अन्य सब राशियाँ सिंह राशि के वश में हैं और मेष, वृष, धनु तथा जलचर राशियों का परस्पर वश्यावश्यत्व मनुष्यों के व्यवहार से जानना चाहिए ॥ २३ ॥

ताराकूट

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत्कन्याभं वरभादपि।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ २४ ॥

अन्वयः—कन्यर्क्षात् वरभं यावत् गणयेत्, अपि (तथा) वरभात्, कन्याभं यावत् गणयेत् (ततः) नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभं असत् स्मृतम् ॥ २४ ॥

कन्या के जन्मनक्षत्र से वर के जन्मनक्षत्र तक, और वर के जन्मनक्षत्र से कन्या के जन्मनक्षत्र तक अलग-अलग गिनकर जितनी संख्या हो उसमें अलग ही अलग नव का भाग दे यदि तीन, पाँच या सात शेष रहें तो वरकन्या के अशुभकारक होते हैं। यथा कन्या के जन्मनक्षत्र अश्विनी से वर के जन्मनक्षत्र चित्रा तक गिना, तो चौदह संख्या हुई। इसमें नव का भाग दिया तो शेष पाँच रहे। ये वर के अशुभकारक हुए। ऐसे ही वर के जन्मनक्षत्र से कन्या के जन्मनक्षत्र तक जानो ॥ २४ ॥

योनिकूट

अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः
सिंहो वस्वजपाद्भयोः समुदितो याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः।
मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः
स्याद्वैश्वाभिजितोस्तथैव नकुलश्चान्द्राब्जयोन्योरहिः ॥ २५ ॥
ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरङ्ग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा
मार्जारोऽदितिसार्पयोरथ मघायोन्योस्तथैवोन्दुरुः।
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरार्यम्णबुध्न्यर्क्षयो-
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योर्भवेत् ॥ २६ ॥

अन्वयः—अश्विन्यम्बुपयोः हयः निगदितः । स्वात्यर्कयोः कासरः, वस्वजपाद्भ्योः सिंहः समुदितः, याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः, देवपुरोहितानलभयोः मेषः, कर्णाम्बुनोः वानरः स्यात् । तथैव वैश्वाभिजितोः नकुलः, चान्द्राब्जयोन्योः अहिः, ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरंगः उदितः तथा मूलार्द्रयोः श्वा, अदितिसार्पयोः मार्जारः । अथ तथैव मघायोन्योः उन्दुरुः, द्वीशभचित्रयोः व्याघ्रः, अपि च आर्यम्णबुध्न्यर्क्षयोः योनिः गौः (कथिता), पादगयोः भयोन्योः परस्परं महावैरं भवेत् ॥ २५-२६ ॥

अश्विनी और शतभिष घोड़ा योनि, स्वाती और हस्त भैंसा योनि, धनिष्ठा और पूर्वाभाद्रपद सिंह योनि, भरणी और रेवती हाथी योनि, पुष्य और कृत्तिका मेढ़ा योनि, श्रवण और पूर्वाषाढ़ वानर योनि, उत्तराषाढ़ और अभिजित् न्योला योनि, मृगशिरा और रोहिणी सर्प योनि, ज्येष्ठा और अनुराधा हरिण योनि, मूल और आर्द्रा कुक्कुर योनि, पुनर्वसु और आश्लेषा बिलार योनि, मघा और पूर्वाफाल्गुनी मूस योनि, चित्रा और विशाखा व्याघ्र योनि, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद गौ योनि कहे जाते हैं । यहाँ एक श्लोक के एक पाद में कहे हुए चार नक्षत्रों की दो योनियों का परस्पर महावैर होता है । यथा "अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः" इस एक पाद में कहे हुए घोड़ा और भैंसा का परस्पर वैर होता है । इसलिये वैर योनिवाले वर-कन्या का विवाह उचित नहीं है । भिन्न-भिन्न पाद में कही हुई योनिवाले वर-कन्या का विवाह करना चाहिए ॥ २५-२६ ॥

वैर		वैर		वैर		वैर		वैर		वैर		वैर	
घो०	भैंसा	सिंह	ह०	मे०	वानर	न्यो०	साँ	हरि०	कु०	बिलार	मूस	व्याघ्र	गौ
अ०	स्वा०	ध०	भ०	पु०	श्रवण	उ०षा	मृ०	ज्ये०	मू०	पु०	म०	वि०	उ.भा.
श०	ह०	पू.भा.	रे०	कृ०	पू०षा	अभि.	रो०	अनु०	आ०	ऽश्लेषा	पूफा	चि०	उ.फा.

ग्रहमैत्रीकुट

मित्राणि द्युमणेः कुजेज्यशशिनः शुक्रार्कजौ वैरिणौ
सौम्यश्चास्य समो विधोर्बुधरवी मित्रे न चास्य द्विषत् ।
शेषाश्चास्य समाः कुजस्य सुहृदश्चन्द्रज्यसूर्या बुधः
शत्रुः शुक्रशनी समौ च शशभृत्सूनोः सिताहस्करौ ॥ २७ ॥
मित्रे चास्य रिपुः शशी गुरुशनिक्ष्माजाः समा गीष्पते-
र्मित्राण्यर्ककुजेन्दवो बुधसितौ शत्रू, समः सूर्यजः ।

मित्रे सौम्यशनी कवेः शशिरवी शत्रू कुजेज्यौ समौ
मित्रे शुक्रबुधौ शनेः शशिरविक्ष्माजा द्विषोऽन्यः समः ॥ २८ ॥

अन्वयः—द्युमणेः [सूर्यस्य] कुजेज्यशशिनः मित्राणि, शुक्रार्कजौ वैरिणौ, सौम्यः अस्य समः। विधोः बुधरवी मित्रे, अस्य च द्विषत् न, शेषाः अस्य समाः। कुजस्य चन्द्रेज्यसूर्याः सुहृदः, बुधः शत्रुः, शुक्रशनीसमौ। च (तथा) शशभृत्सूनोः सिताहस्करौ मित्रे, अस्य शशी रिपुः, गुरुशनिक्ष्माजाः समाः। गीष्पतेः अर्ककुजेन्दवः मित्राणि, बुधसितौ शत्रू, सूर्यजः समः। कवेः सौम्यशनी मित्रे, शशिरवी शत्रू, कुजेज्यौ समौ। शनेः शक्रबुधौ मित्रे, शशिरविक्ष्माजा द्विषः, अन्यः समः ॥ २७-२८ ॥

सूर्य के मङ्गल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र, शुक्र और शनैश्चर शत्रु और बुध सम हैं। चन्द्रमा के बुध और सूर्य मित्र, शत्रु कोई नहीं, शेष मङ्गल, बृहस्पति, शनि और शुक्र सम हैं। मङ्गल के चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य मित्र, बुध शत्रु और शुक्र, शनैश्चर सम हैं। बुध के शुक्र और सूर्य मित्र, चन्द्रमा शत्रु, बृहस्पति, शनैश्चर और मङ्गल सम हैं। बृहस्पति के सूर्य मङ्गल और चन्द्रमा मित्र, बुध और शुक्र शत्रु और शनैश्चर सम हैं। शुक्र के बुध और शनैश्चर मित्र हैं, चन्द्रमा और सूर्य शत्रु, मङ्गल और बृहस्पति सम हैं। शनैश्चर के शुक्र और बुध मित्र, चन्द्रमा, सूर्य और मङ्गल शत्रु और बृहस्पति सम हैं। इनके कहने का प्रयोजन यह है कि वर की जन्मराशि का ईश और कन्या की जन्मराशि का ईश परस्पर मित्र हों तो विवाह शुभ, शत्रु हों तो अशुभ और सम हों तो शुभ अशुभ कुछ नहीं होता ॥ २७-२८ ॥

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
मं० बृ० चं०	सू० बु०	बृ० चं० सू०	शु० सू०	सू० चं० मं०	बु० श०	शु० बु०	मित्र
बु०	मं० बृ० शु० श०	शु० श०	बु० श० मं०	श०	बृ० मं०	बृ०	सम
शु० श०	००	बु०	चं०	बु० शु०	सू० चं०	सू० चं० मं०	शत्रु

गणकूट

रक्षोनरामरगणाः क्रमतो मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधाः।
पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि मैत्रादितीन्दु हरिपौष्णमरुल्लघूनि ॥ २९ ॥

अन्वयः—मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधाः, पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि, मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्लघूनि क्रमतः रक्षोनरामरगणाः (ज्ञेयाः) ॥ २९ ॥

मघा, आश्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिष, कृत्तिका, चित्रा और विशाखा ये नव नक्षत्र राक्षसगण, तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी और आर्द्रा ये नव नक्षत्र मनुष्यगण; अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाती, अश्विनी, हस्त और पुष्य ये नव नक्षत्र देवतागण कहे जाते हैं ॥ २९ ॥

म०	श्ले०	ध०	ज्ये०	मू०	श०	कृ०	चि०	वि०	राक्षस
पू०फा०	पू०षा०	पू०भा०	उ० फा०	उ०षा०	उ०भा०	रो०	भ०	आर्द्रा	मनुष्य
अनु०	पुन०	मृ०	श्रवण	रेवती	स्वाती	अश्वि०	ह०	पुष्य	देवता

गणों का फल

निजनिजगणमध्ये प्रीतिरत्युत्तमा
स्यादमरमनुजयोः सा मध्यमा संप्रदिष्टा ।
असुरमनुजयोश्चेन्मृत्युरेव प्रदिष्टो
दनुजविबुधयोः स्याद्वैरमेकान्ततोऽत्र ॥ ३० ॥

अन्वयः—निजनिजगणमध्ये अत्युत्तमा प्रीतिः स्यात् । अमरमनुजयोः सा (प्रीतिः) मध्यमा सम्प्रदिष्टा । असुरमनुजयोः चेत्, (तदा) मृत्युः एव प्रदिष्टः । अत्र दनुज-विबुधयोः एकान्ततः वैरं स्यात् ॥ ३० ॥

वरकन्या का जन्मनक्षत्र एक ही गुण में हो तो विवाह होने पर उन दोनों की अतिशय प्रीति होती है । वरकन्या में से किसी का जन्मनक्षत्र देवतागण में और किसी का मनुष्य गण में हो मध्यम प्रीति होती है । किसी का जन्मनक्षत्र राक्षसगण में और किसी का मनुष्यगण में हो तो वर-कन्या का मरण होता है । किसी का जन्मनक्षत्र देवतागण में और किसी का राक्षसगण में हो तो सदा स्त्री-पुरुष का वैर रहता है ॥ ३० ॥

भकूट

मृत्युः षट्काष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे ।
द्विर्द्वादश निर्धनत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥ ३१ ॥

अन्वयः—षट्काष्टके मृत्युः ज्ञेयः, नवात्मजे अपत्यहानिः (स्यात्), द्विर्द्वादशे द्वयोः निर्धनत्वं (ज्ञेयं), अन्यत्र सौख्यकृत् स्यात् ॥ ३१ ॥

कन्या की जन्मराशि से वर की जन्मराशि अथवा वर की जन्मराशि से कन्या की जन्मराशि छठी और आठवीं हो तो दोनों का मरण होता है ।

नवीं और पाँचवीं हो तो सन्तान की हानि, दूसरी और बारहवीं हो तो दोनों निर्धन होते हैं। इनसे अन्यत्र दोनों के सौख्यकारक हैं। छठी-आठवीं का उदाहरण—मेषराशि वर और कन्याराशि कन्या, अथवा कन्याराशि वर और मेषराशि कन्या ये दोनों परस्पर छठे-आठवें हैं। ऐसे ही नवें-पाँचवें का उदाहरण—सिंहराशि वर और धनुराशि कन्या अथवा धनुराशि वर और सिंहराशि कन्या, ये दोनों परस्पर नवें-पाँचवें हैं। ऐसे ही दूसरे-बारहवें का उदाहरण—मेषराशि वर और वृषराशि कन्या, अथवा वृषराशि वर और मेषराशि कन्या ये दोनों परस्पर दूसरे-बारहवें हैं। ऐसे ही और भी जानना चाहिये ॥ ३१ ॥

दुष्ट भकूट का परिहार

प्रोक्ते दुष्टभकूटके परिणयस्त्वेकाधिपत्ये शुभो-
ऽथो राशीश्वरसौहृदेऽपि गदितो नाड्यर्क्षशुद्धिर्यदि।
अन्यर्क्षेंऽशपयोर्बलित्वसखिते नाड्यर्क्षशुद्धौ तथा
ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावे निरुक्तो बुधैः ॥ ३२ ॥

अन्वयः—प्रोक्ते दुष्टभकूटके एकाधिपत्ये (सति) परिणयः शुभः (स्यात्), अथो राशीश्वरसौहृदेऽपि यदि नाड्यर्क्षशुद्धिः (तदा) दुष्टभकूटके परिणयः शुभः निगदितः, अन्यर्क्षे अंशपयोः बलित्वसखिते नाड्यर्क्षशुद्धौ तथा ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावेऽपि बुधैः परिणयः शुभः निरुक्तः ॥ ३२ ॥

पूर्व कहे हुए षट्काष्टकादि दुष्ट भकूट के रहते भी यदि कन्या-जन्मराशि और वर-जन्मराशि का स्वामी एक ही हो अथवा उन दोनों की परस्पर मित्रता हो और नाड़ी शुद्ध हो तो विवाह शुभ होता है। अथवा दुष्ट भकूट के रहते और जन्मराशीशों की परस्पर शत्रुता या समता के भी रहते यदि नाड़ी शुद्ध हो और जन्म-राशियों के नवांशों के स्वामी परस्पर मित्र या बली हों तो भी विवाह शुभ होता है। अथवा इन दोषों के रहते भी यदि नाड़ी शुद्ध हो और तारा शुद्ध हो तो भी विवाह शुभ होता है। अथवा पूर्वोक्त सब दोषों के रहते और तारादोष के भी रहते यदि नाड़ी शुद्ध हो और 'हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्या' इस श्लोक में कही हुई रीति से कन्या-जन्मराशि के वश में वर जन्मराशि न हो तो भी विवाह शुभ होता है। परन्तु नाड़ी के शुद्ध न रहते विवाह न करना चाहिए, ऐसा पण्डितलोग कहते हैं ॥ ३२ ॥

दुष्ट गणकूट, भकूट और ग्रहकूट का परिहार

मैत्र्यां राशिस्वामिनोरंशनाथद्वन्द्वस्यापि स्याद्गणानां न दोषः ।
खेटारित्वं नाशयेत्सद्भकूटं खेटप्रीतश्चापि दुष्टं भकूटम् ॥ ३३ ॥

अन्वयः—राशिस्वामिनोः मैत्र्यां, अपि वा अंशनाथद्वन्द्वस्य मैत्र्यां सत्यां गणानां दोषः न स्यात् । सद्भकूटं खेटारित्वं नाशयेत् । तथा खेटप्रीतिः अपि दुष्टं भकूटं नाशयेत् ॥ ३३ ॥

कन्याजन्मराशि के स्वामी और वरजन्मराशि के स्वामी की, तथा कन्याजन्मराशि के नवांश के स्वामी और वरजन्मराशि के नवांश के स्वामी की परस्पर मित्रता हो तो गणदोष नहीं होता, और यदि सद्भकूट हो अर्थात् कन्याजन्मराशि से वर की जन्मराशि अथवा वरजन्मराशि से कन्या की जन्मराशि गेरहवीं, तीसरी, दशवीं, चौथी या सातवीं हो तो कन्याजन्मराशीश और वरजन्मराशीश की शत्रुता का नाश कर देता है । यदि कन्याजन्मराशीश और वरजन्मराशीश की परस्पर मित्रता हो तो वह पूर्वोक्त षट्काष्टकादि दुष्ट भकूट का नाश करती है ॥ ३३ ॥

आठ कूटों में सबसे प्रधान नाड़ीकूट

ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भः पतिभयुगयुगं दास्रभं चैकनाडी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या ।
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभं चापरा स्याद्
दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां हि मृत्युः ॥ ३४ ॥

अन्वयः ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं च एकनाडी । पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या नाडी । वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगं पौष्णभं च अपरा नाडी स्यात् । एकनाड्यां दम्पत्योः परिणयनं असत् स्यात् । मध्यनाड्यां हि मृत्युः स्यात् ॥ ३४ ॥

ज्येष्ठा, आर्द्रा, उत्तराफाल्गुनी और शतभिष, ये दो-दो नक्षत्र अर्थात् ज्येष्ठा-मूल, आर्द्रा-पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी-हस्त, शतभिष-पूर्वाभाद्रपद और अश्विनी, इन नव नक्षत्रों की आदिनाडी है । पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ़, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, इन नव नक्षत्रों की मध्यनाडी है । स्वाती, कृत्तिका, आश्लेषा, उत्तराषाढ़ ये दो-दो नक्षत्र अर्थात् स्वाती-विशाखा, कृत्तिका-रोहिणी, आश्लेषा-मघा, उत्तराषाढ़-श्रवण और रेवती इन नव नक्षत्रों की अन्त्यनाडी है ।

ज्ये०	उ०फा०	आ०	श०	मू०	ह०	पुन०	पू०भा०	अ०	आ०ना०
पु०	मृ०	चित्रा	अनु०	भ०	ध०	पू०षा०	पू०फा०	उ०भा०	म०नाड़ी
स्वाती	कृ०	आश्ले०	उ०षा०	वि०	रो०	म०	श्रवण	रे०	अं०ना०

कन्या का जन्मनक्षत्र और वर का जन्मनक्षत्र यदि किसी एक नाडी में हो तो विवाह अशुभ होता है और यदि उक्त दोनों नक्षत्र मध्य नाड़ी में हों तो वर और कन्या की मृत्यु होती है ॥ ३४ ॥

एक अन्य प्रकार का वर्गकूट

अकचटतपयशवर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम् ।
सर्पाखुमृगावीनां निजं पञ्चमवैरिणामष्टौ ॥ ३५ ॥

अन्वयः–निजं पञ्चमवैरिणां खगेशमार्जारसिंहशुनां सर्पाखुमृगावीनां (क्रमात्) अष्टौ अकचटतपयशवर्गाः (ज्ञेयाः) ॥ ३५ ॥

अ० क० च० ट० त० प० य० श० ये आठ वर्ग हैं। इनमें गरुड़ का अवर्ग, बिलार का कवर्ग, सिंह का चवर्ग, कुत्ता का टवर्ग, साँप का तवर्ग, मूस का पवर्ग, हरिण का यवर्ग और भेंड़ का शवर्ग है। इनमें प्रत्येक वर्ग का पाँचवाँ वर्ग वैरी होता है। यथा गरुड़ का साँप, बिलार का मूस, सिंह का हिरण, कुत्ता का भेंड़ इत्यादि। इन वर्गों का प्रयोजन यह है कि कन्या के नाम का पहिला अक्षर जिस वर्ग में हो उससे वर के नाम का पहिला अक्षर पाँचवें वर्ग में हो तो विवाह अशुभ होता है और कन्या और वर के नाम का पहिला अक्षर एक ही वर्ग में हो अथवा उदासीन वर्ग में हो तो विवाह शुभ होता है ॥ ३५ ॥

अवर्गादि चक्र

ईश	वर्ण	वर्ग	वैरी
गरुड़	अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ	अवर्ग	साँप
बिलार	क ख ग घ ङ	कवर्ग	मूस
सिंह	च छ ज झ ञ	चवर्ग	हरिण
कुत्ता	ट ठ ड ढ ण	टवर्ग	भेंड़
साँप	त थ द ध न	तवर्ग	गरुड़
मूस	प फ ब भ म	पवर्ग	बिलार
हरिण	य र ल व	यवर्ग	सिंह
भेंड़	श ष स ह	शवर्ग	कुत्ता

नक्षत्र और राशि एक वा भिन्न होने में विशेष

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव ।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥ ३६ ॥

अन्वयः—द्वयोः (कन्यावरयोः) राश्यैक्ये चेत् भिन्नं ऋक्षं तथैव नक्षत्रैक्ये राशियुग्म स्यात् तदा नाडीदोषो नो च गणानां दोषो नो (भवेत्) । तथा नक्षत्रैक्ये पादभेदे (सति) शुभं स्यात् ॥ ३६ ॥

यदि कन्या और वर की जन्मराशि एक हो और जन्मनक्षत्र भिन्न भिन्न हों, अथवा जन्मनक्षत्र एक हो और जन्मराशि भिन्न भिन्न हों तो नाड़ीदोष, गणदोष और तारादोष नहीं होता । एक राशि और भिन्न नक्षत्र का उदाहरण—शतभिष नक्षत्र में कन्या का जन्म और पूर्वाभाद्रपद के तीन पाद के अन्तर वर का जन्म हो तो नक्षत्र भिन्न भिन्न है और कुम्भ राशि एक ही है । एक नक्षत्र और भिन्न राशि का उदाहरण—पूर्वाभाद्रपद के तीन पाद के अन्तर कन्या का जन्म और चौथे पाद में वर का जन्म हो तो नक्षत्र एक ही है और राशि कुम्भ और मीन दो हैं । एक नक्षत्र और भिन्न पाद का उदाहरण—भरणी नक्षत्र के प्रथम पाद में वर का जन्म और द्वितीय पाद में कन्या का जन्म हो तो एक राशि और नक्षत्र होने पर भी शुभ है ॥ ३६ ॥

राशियों के स्वामी

कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः कविभौमजीवशनिसौरयो गुरुः ।
इह राशिपाः क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतो नवांशविधिरुच्यते बुधैः ॥ ३७ ॥

अन्वयः—इह कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः कविभौमजीवशनिसौरयः गुरुः (क्रमेण) राशिपाः (ज्ञेयाः) (तथा) क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतः नवांशविधिः बुधैः उच्यते ॥ ३७ ॥

मेष राशि का मंगल, वृष का शुक्र, मिथुन का बुध, कर्क का चन्द्रमा, सिंह का सूर्य, कन्या का बुध, तुला का शुक्र, वृश्चिक का मंगल, धनु का बृहस्पति, मकर और कुम्भ का शनैश्चर और मीन राशि का बृहस्पति स्वामी है ॥ ३७ ॥

राशीश-चक्र

राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
स्वा०	मं०	शु०	बु०	चं०	सूर्य	बु०	शुक्र	मं०	बृ०	श०	श०	बृ०

अब नवांशविधि कहते हैं। प्रत्येक राशि में तीस अंश होते हैं और एक अंश में साठि कला होती हैं। तीन अंश बीस कलाओं का एक नवांश होता है। नव नवांश एक राशि में होते हैं। उनका क्रम यह है कि मेष राशि में मेष से लेकर धनुराशिपर्यन्त नव राशियों के नव नवांश, वृष राशि में मकर से लेकर कन्याराशिपर्यन्त नव राशियों के नव नवांश, मिथुन राशि में तुला से लेकर मिथुनराशिपर्यन्त नव राशियों के नव नवांश, कर्क राशि में कर्क से लेकर मीनराशिपर्यन्त नव राशियों के नव नवांश होते हैं। फिर सिंह राशि से वृश्चिक तक और धनु राशि से मीन तक इसी उक्त विधि से नवांशों का भोग होता है ॥ ३७ ॥

नवांश चक्र

	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
३।२०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०
६।४०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०
१०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०
१३।२०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०
१६।४०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०
२०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०
२३।२०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०
२६।४०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०
३०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०	ध०	कं०	मि०	मी०

होरा

समगृहमध्ये शशिरविहोरा विषमभमध्ये रविशशिनोः सा ॥ ३८ ॥

अन्वयः—समगृहमध्ये (क्रमेण) शशिरविहोरा (भवति) विषमभमध्ये सा (होरा) रविशशिनोः (क्रमेण) ज्ञेया ॥ ३८ ॥

पन्द्रह अंशों का एक होरा होता है। एक राशि में दो होरा होते हैं। वृष-कर्कादि सम राशियों में पहिला चन्द्रमा का और दूसरा सूर्य का होरा होता है और मेष-मिथुनादि विषम राशियों में पहिला सूर्य का और दूसरा चन्द्रमा का होरा होता है ॥ ३८ ॥

त्रिंशांश

शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य बाण-
शैलाष्टपञ्चविशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशको विषमभे विपरीतमस्माद्
द्रेष्काणकाः प्रथमपञ्चनवाधिपानाम् ॥ ३९ ॥

अन्वयः—समराशिमध्ये बाणशैलाष्टपञ्चविशिखाः (अंशाः) (क्रमेण) शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य त्रिंशांशका (भवन्ति), विषमभे अस्मात् विपरीतं तथा प्रथमपञ्चनवाधिपानां द्रेष्काणकाः (भवन्ति) ॥ ३६ ॥

वृष-कर्कादि सम राशियों में पहिले पाँच अंशों का स्वामी शुक्र, तदनन्तर सात अंशों का स्वामी बुध, तदनन्तर आठ अंशों का स्वामी बृहस्पति, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी शनैश्चर, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी मंगल होता है। मेष-मिथुनादि विषम राशियों में इससे विपरीत अर्थात् पहिले पाँच अंशों का स्वामी मंगल, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी शनैश्चर, तदनन्तर आठ अंशों का स्वामी बृहस्पति, तदनन्तर सात अंशों का स्वामी बुध, तदनन्तर पाँच अंशों का स्वामी शुक्र होता है ॥ ३९ ॥

त्रिंशांश चक्र

ग्रह	शु०	बु०	बृ०	श०	मं०	ईश
समगृह	५	७	८	५	५	अंश
ग्रह	मं०	श०	बृ०	बु०	शु०	ईश
विषमगृह	५	५	८	७	५	अंश

द्रेष्काण

दश अंशों का एक द्रेष्काण होता है। एक राशि में तीन द्रेष्काण होते हैं। जिस राशि में द्रेष्काण जानना हो उस राशि का स्वामी ही पहिले द्रेष्काण का स्वामी होता है, और उससे पाँचवीं राशि का स्वामी दूसरे द्रेष्काण का, और नवीं राशि का स्वामी तीसरे द्रेष्काण का स्वामी होता

है । उदाहरण—मेष राशि में पहला द्रेष्काण मंगल का, दूसरा सूर्य का और तीसरा द्रेष्काण बृहस्पति का होता है ॥ ३९ ॥

द्रेष्काण चक्र

अंश	मे०	वृ०	मि०	क०	सिंह	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
१०	मं०	शु०	बु०	च०	सू०	बु०	शु०	मं०	बृ०	श०	श०	बृ०
२०	सू०	बु०	शु०	मं०	बृ०	श०	श०	बृ०	मं०	शु०	बु०	चं०
३०	बृ०	श०	श०	बृ०	मं०	शु०	बु०	चं०	सू०	बु०	शु०	मं०

द्वादशांश विधि

स्याद्द्वादशांश इह राशित एव गेहं
होराथ दृक्कनवमांशकसूर्यभागाः ।
त्रिंशांशकश्च षडिमे कथितास्तु वर्गाः
सौम्यैः शुभं भवति चाशुभमेव पापैः ॥ ४० ॥

अन्वयः—इह राशितः एव द्वादशांशः (स्यात्) अथ गेहं, होरा दृक्कनवमांशकसूर्यभागाः च त्रिंशांशकः इमे षड्वर्गाः कथिताः, (तत्र) सौम्यैः (षड्वर्गैः) शुभ पापैः च अशुभं (फलं) भवति ॥ ४० ॥

दो अंश तीस कलाओं का एक द्वादशांश होता है । एक राशि में बारह द्वादशांश होते हैं । उनका यह क्रम है कि जिस राशि में द्वादशांशों का विचार करना हो उसी राशि से लेकर क्रम से बारह राशियों के द्वादशांश होते हैं । यथा मेष राशि में पहिला द्वादशांश मेष ही का, दूसरा वृष का, तीसरा मिथुन का, चौथा कर्क का, पाँचवाँ सूर्य का, छठा कन्या का, सातवाँ तुला का, आठवाँ वृश्चिक का, नवाँ धनु का, दशवाँ मकर का, गेरहवाँ कुम्भ का और बारहवाँ मीन का द्वादशांश होता है । ऐसे ही वृष राशि में पहिला द्वादशांश वृष का और दूसरा मिथुन का इत्यादि ।

द्वादशांश चक्र

	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०
२।३०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०
५	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०
७।३०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मो०	मे०	वृ०
१०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०
१२।३०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०
१५	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०
१७।३०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०
२०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिंह	कं०	तु०
२२।३०	ध०	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०
२५	म०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०
२७।३०	कुम्भ	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०
३०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुम्भ

षड्वर्ग

राशि, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, और त्रिशांश ये छः षड्वर्ग कहे जाते हैं। षड्वर्ग शुभ ग्रहों से शुभ और पाप ग्रहों से अशुभ हो जाता है, अर्थात् यदि शुभ ग्रह शुभ ग्रहों के राशि, होरा, द्रेष्काणादि में स्थित हो तो शुभ फल होता है और शुभ ग्रह पाप ग्रहों के राशि, होरा, द्रेष्काणादि में, अथवा पाप ग्रह शुभ ग्रहों के राशि, होरा, द्रेष्काणादि में स्थित हो तो सम फल होता है। और पाप ग्रह पाप ग्रहों के राशि, होरा, द्रेष्काणादि में स्थित हो तो अशुभ फल होता है ॥ ४० ॥

नक्षत्रों की पूर्वार्द्धयोगि आदि संज्ञा और उनका फल

पौष्णेशशाक्राद्रससूर्यनन्दाः पूर्वार्द्धमध्यापरभागयुग्मम् ।
भर्त्ता प्रियःप्राग्युजिभे स्त्रियाः स्यान्मध्ये द्वयोः प्रेमपरे प्रिया स्त्री ॥ ४१ ॥

अन्वयः—पौष्णेशशाक्रात् रससूर्यनन्दाः (क्रमात्) पूर्वार्धमध्यापरभागयुग्मं (स्यात्) प्राग्युजिभे स्त्रियाः भर्ता प्रियः स्यात्। मध्ये द्वयोः प्रेम (भवति) परे (भर्तुः) स्त्री प्रिया भवति ॥ ४१ ॥

रेवती नक्षत्र से लेकर छः, अर्थात् रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, इन नक्षत्रों को पूर्वार्द्धयोगि कहते हैं। आर्द्रा से लेकर बारह, अर्थात् आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा इन नक्षत्रों को मध्ययोगि कहते हैं। ज्येष्ठा से लेकर नव, अर्थात् ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रों को अपरभागयोगि कहते हैं। यदि पहिले-पहिल पुरुष-स्त्री का समागम पूर्वार्द्धयोगि नक्षत्रों में हो तो स्त्री को स्वामी प्रिय होता है। मध्ययोगि नक्षत्रों में हो तो स्त्री-पुरुष दोनों में परस्पर प्रीति होती है और अपरभागयोगि नक्षत्रों में हो तो स्वामी को स्त्री प्यारी होती है ॥ ४१ ॥

स्वामी और सेवक के जन्मनक्षत्र का विचार

सेव्याधमर्णयुवतीनगरादिभं चेत्
पूर्वंहि भृत्यधनिभर्तृ पुरादिसद्मात् ।
सेवाविनाशधननाशनभर्तृनाश-
ग्रामादिसौख्यहृदिदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥ ४२ ॥

अन्वयः—भृत्यधनिभर्तृपुरादिसद्मात् पूर्वं चेत् (यदि) सेव्याधमर्णयुवतीनगरादिभं (भवेत्) तदा सेवाविनाशधननाशनभर्तृनाशग्रामादिसौख्यहृत् इदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥ ४२ ॥

यदि स्वामी के जन्मनक्षत्र से सेवक का जन्मनक्षत्र दूसरा हो तो सेवा का नाश होता है। ऋण लेनेवाले के जन्मनक्षत्र से ऋण देनेवाले का जन्मनक्षत्र दूसरा हो तो दिया हुआ धन फिर नहीं मिलता। पत्नी के जन्मनक्षत्र से पति का जन्मनक्षत्र दूसरा हो तो पति का नाश होता है। गाँव के नक्षत्र से बसनेवाले का जन्मनक्षत्र दूसरा हो तो उस गाँव में बसने से कभी सुख नहीं होता ॥ ४२ ॥

गण्डान्त दोष

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं च मूलाश्विनी-
पित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम् ।
कर्काल्यण्डजभान्ततोऽर्द्धघटिका सिंहाश्वमेषादिगा
पूर्णान्ते घटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम् ॥ ४३ ॥

अन्वयः—ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं च (तथा) मूलाश्विनीपित्र्यादौ घटिकाद्वयं तद्भस्य गण्डान्तकं निगदितम्। कर्काल्यण्डजभान्ततः अर्द्धघटिका, सिंहाश्वमेषादिगा (अर्द्धघटिका) तथा पूर्णान्ते घटिकात्मकं च (तथा) नन्दातिथेः आदिमघटिकात्मकं गण्डान्तं अशुभदं (भवेत्) ॥ ४३ ॥

ज्येष्ठा, रेवती और आश्लेषा में अन्त के दो दण्ड तथा मूल, अश्विनी और मघा में आदि के दो दण्ड गंडान्त कहा जाता है। अर्थात् रेवती-अश्विनी आश्लेषा-मघा, ज्येष्ठा-मूल इन नक्षत्रों की सन्धि में चार-चार दंड गंडान्त होता है। कर्क, वृश्चिक और मीन लग्न में अन्त का आधा दण्ड तथा सिंह, धन और मेष में आदि का आधा दण्ड गंडान्त है। अर्थात् मीन-मेष, कर्क-सिंह, वृश्चिक-धनु इन लग्नों की सन्धि में एक-एक दंड गंडान्त होता है। पञ्चमी, दशमी, पूर्णमासी और अमावास्या में अंत का एक दण्ड तथा परीवा, छठि और एकादशी में आदि का एक दण्ड गंडान्त होता है। अर्थात् पूर्णमासी-परीवा, अमावास्या-परीवा, पंचमी-छठि, दशमी-एकादशी, इन तिथियों की सन्धि में दो-दो दंड गंडान्त होता है। गण्डान्त में विवाहादि शुभ कार्य न करना चाहिए। यदि अज्ञान से विवाह किया जाता है तो स्त्री शोक करनेवाली, वन्ध्या अथवा मृतवत्सा होती है। अभिजित्*संज्ञक मुहूर्त्त में विवाहादि शुभ कार्य करे तो गंडान्त दोष नहीं होता ॥ ४३ ॥

कर्तरी दोष

लग्नात्पापावृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ यदा तदा।
कर्तरी नाम सा ज्ञेया मृत्युदारिद्र्यशोकदा ॥ ४४ ॥

अन्वयः—यदा ऋज्वनृजू पापौ लग्नात् व्ययार्थस्थौ (स्याताम्) तदा कर्तरीनाम ज्ञेया। सा मृत्युदारिद्र्यशोकदा (भवति) ॥ ४४ ॥

यदि पापग्रह मार्गी† होकर लग्न से बारहवें स्थान में और दूसरा पापग्रह वक्री‡ होकर लग्न से दूसरे स्थान में स्थित हो तो इसे कर्तरी दोष कहते हैं। विवाहादि शुभ कार्यों में कर्तरी दोष मृत्यु, दारिद्र्य और शोक देनेवाला होता है। ऐसे ही कोई पापग्रह मार्गी होकर चन्द्रमा से बारहवें स्थान में और दूसरा पापग्रह वक्री होकर चन्द्रमा से दूसरे स्थान में स्थित हो तो इसे भी कर्तरी कहते हैं। यह भी पूर्वोक्त फल देनेवाली होती है। इसी रीति से सब भावों की कर्तरी होती है ॥ ४४ ॥

---

*आगे कहेंगे। †आगे को चलनेवाला। ‡पीछे को लौटनेवाला।

संग्रह×दोष

चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्रयं मरणं शुभम् ।
सौख्यं सापत्न्यवैराग्ये पापद्वययुते मृतिः ॥ ४५ ॥

अन्वयः—चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्रयं, मरण, शुभं, सौख्यं (स्यात्) सापत्न्य-वैराग्ये (भवतः) तथा पापद्वययुते (चन्द्रे) मृतिः स्यात् ॥ ४५ ॥

विवाहकाल में चन्द्रमा यदि सूर्य के साथ हो तो स्त्री-पुरुष दरिद्र होते हैं, मंगल के साथ हो तो दोनों की मृत्यु, बुध के साथ हो तो शुभ, बृहस्पति के साथ हो तो सुख और शुक्र के साथ हो तो स्त्री के सौत आती है तथा शनैश्चर संयुक्त हो तो स्त्री-पुरुष में प्रीति नहीं होती है। यदि चन्द्रमा दो, तीन अथवा कई पापग्रहों से संयुक्त हो तो स्त्री-पुरुष की मृत्यु होती है। नारदजी ने बुध के योग में सन्तान-हानि, बृहस्पति के योग में भाग्य-हानि, शनैश्चर के योग में संन्यास, राहु के योग में स्त्री-पुरुष का परस्पर झगड़ा और केतु के योग में सदा कष्ट वा दरिद्रता कहा है। यदि चन्द्रमा अपनी उच्च राशि में, अपने मित्र की राशि में अथवा अपनी राशि में स्थित होकर शुभग्रह-संयुक्त हो तो शुभफलकारक और यदि इससे विपरीत हो तो अशुभ-फलकारक होता है ॥ ४५ ॥

अष्टमलग्न का दोष और परिहार

जन्मलग्नभयोर्मृत्युराशौ नेष्टः करग्रहः ।
एकाधिपत्ये राशीशमैत्रे वा नैव दोषकृत् ॥ ४६ ॥

अन्वयः—जन्मलग्नभयोः मृत्युराशौ करग्रहः नेष्टः । एकाधिपत्ये वा राशीशमैत्रे नैव दोषकृत् ॥ ४६ ॥

स्त्री वा पुरुष की जन्मलग्न वा जन्मराशि से आठवीं लग्न में विवाह शुभ नहीं होता। यदि जन्मलग्न का स्वामी वा जन्मराशि का स्वामी जन्म-लग्न वा जन्मराशि से आठवीं लग्न का भी स्वामी हो अथवा आठवीं लग्न के स्वामी का मित्र हो तो उक्त दोष नहीं होता ॥ ४६ ॥

अन्य परिहार

मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियोऽष्टमं लग्नं यदा नाष्टमगेहदोषकृत् ।
अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधूर्भवेत्सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी ॥ ४७ ॥

×चन्द्रमा के साथ एक राशि में अन्य ग्रहों के रहने का नाम ।

अन्वयः—मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियः यदा अष्टमं लग्नं (भवेत्) तदा अष्टमगेहदोषकृत् न (स्यात्) अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधूः सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी-भवेत् ॥ ४७ ॥

यदि स्त्री वा पुरुष की जन्मलग्न वा जन्मराशि से आठवीं लग्न मीन, वृष, कर्क, वृश्चिक, मकर और कन्या में से कोई हो तो आठवीं लग्न का दोष नहीं होता; क्योंकि ये दोनों परस्पर मित्र अथवा एक ही हैं। उदाहरण—यथा स्त्री वा पुरुष की जन्मलग्न या जन्मराशि सिंह हो तो उससे आठवीं मीन हुई। सिंह के स्वामी सूर्य और मीन के स्वामी बृहस्पति की परस्पर मित्रता होने के कारण विवाह में दोष नहीं हो सकता। ऐसे ही तुला से आठवीं वृष होती है। तुला और वृष दोनों का स्वामी शुक्र है, इसलिये विवाह में कोई दोष नहीं हो सकता, ऐसे ही कर्कादि को भी जानना चाहिए। यदि ऐसे योग में विवाह हो तो वह स्त्री उत्तम पुत्र, आयु, उत्तम घर और सुख पाती है ॥ ४७ ॥

आठवीं राशि के नवांश और बारहवीं राशि का दोष

मृतिभवनांशो यदि च विलग्ने तदधिपतिर्वा न शुभकरः स्यात् ।
व्ययभवनं वा भवति तदंशस्तदधिपतिर्वा कलहकरः स्यात् ॥ ४८ ॥

अन्वयः—मृतिभवनांशः वा तदधिपतिः यदि विलग्ने (भवेत्) तदा शुभकरः न स्यात्। यदि व्ययभवनं वा तदंशः वा तदधिपतिः यदि (विलग्ने) भवति तदा कलहकरः स्यात् ॥ ४८ ॥

स्त्री वा पुरुष की जन्मराशि से वा जन्मलग्न से आठवीं राशि का नवांश वा आठवीं राशि का स्वामी लग्न में स्थित हो तो विवाह शुभकारक नहीं होता। ऐसे ही बारहवीं राशि, बारहवीं राशि का नवांश वा बारहवीं राशि का स्वामी यदि लग्न में हो तो स्त्री-पुरुष में परस्पर झगड़ा होता है ॥ ४८ ॥

विषघटी-दोष

खरामतो ३० न्त्यादितिवह्निपित्र्यभे
खवेदतः ४० के रदत ३२ श्च सार्पभे ।
खबाणतो ५० श्वे धृतितो १८ र्यमाम्बुपे
कृते २० भंगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे ॥ ४९ ॥

मनो १४ द्विदैवानिलसौम्यशाक्रभे
कुपक्षतः २१ शैवकरेऽष्टि १६ तोऽजभे ।
युगाश्विनो २४ बुध्न्यभतोययाम्यभे
खचन्द्रतो १० मित्रभवासवश्रुतौ ॥ ५० ॥
मूलेऽङ्गबाणा ५६ द्विषनाडिकाः कृताः
वर्ज्या शुभेऽथो विषनाडिका ध्रुवाः ।
निघ्ना भभोगेन खतर्क ६० भाजिताः
स्फुटा भवेयुर्विषनाडिकास्तथा ॥ ५१ ॥

अन्वयः—अन्त्यादितिवह्निपित्र्यभे खरामतः, के खवेदतः, सार्पभे रदतः, अश्वे खबाणतः, अर्यमाम्बुपे धृतितः, भगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे कृतेः, द्विदैवानिलसौम्यशाक्रभे मनोः, शैवकरे कुपक्षतः, अजभे अष्टितः, बुध्न्यभतोययाम्यभे युगाश्वितः, मित्रभवासवश्रुतौ खचन्द्रतः, मूले अङ्गबाणात् कृताः [चतस्रः] विषनाडिकाः शुभे वर्ज्याः, अथो विषनाडिका ध्रुवाः भभोगेन निघ्नाः, खतर्कभाजिताः तथा स्फुटा विषनाडिका भवेयुः ॥ ४९-५१ ॥

रेवती, पुनर्वसु, कृत्तिका और मघा में तीस दण्ड के बाद चार दण्ड विषघटी होता है। रोहिणी में चालीस दण्ड के बाद, आश्लेषा में बत्तीस दण्ड के बाद, अश्विनी में पचास दण्ड के बाद, उत्तराफाल्गुनी और शतभिष में अठारह दण्ड के बाद; पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा, उत्तराषाढ़ और पुष्य में बीस दण्ड के बाद चार दण्ड विषनाड़ी कही जाती हैं। विशाखा, स्वाती, मृगशिरा और ज्येष्ठा में चौदह दण्ड के बाद, आर्द्रा और हस्त में इक्कीस दण्ड के बाद, पूर्वभाद्रपद में सोलह दण्ड के बाद; उत्तराभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ और भरणी में चौबीस दण्ड के बाद; अनुराधा धनिष्ठा और श्रवण में दश दण्ड के बाद चार दण्ड विषनाड़ी कही जाती हैं। मूल नक्षत्र में छप्पन दण्ड के बाद चार दण्ड विषनाड़ी हैं। ये विषनाड़ियाँ शुभ कार्य में त्याज्य हैं। इनमें विवाहादि शुभ कार्य न करना चाहिए। परन्तु यहाँ विशेष यह है कि यदि उक्त नक्षत्रों का पूरे साठ दण्ड का मान हो तब तो उक्त दण्डों के बाद चार दण्ड विषघटी होती हैं और यदि उक्त नक्षत्रों का मान साठ दण्ड से कम या ज्यादा हो तो उस नक्षत्र के मान को कहे हुए उसके अङ्क से गुणकर जितनी संख्या हो उसमें साठ का भाग देने से जो संख्या लब्ध हो उतने ही दण्ड के बाद चार दण्ड विषघटी होती हैं। उदाहरण—यथा रोहिणी नक्षत्र का सम्पूर्ण मान छप्पन दण्ड अठारह पल है। इनको उक्त रोहिणी के चालीस ध्रुवक से गुणा तो दो हजार दो सौ बावन हुए। इनमें साठ का भाग दिया

तो सैंतीस दण्ड बत्तीस पल लब्ध हुए । इन्हीं सैंतीस दण्ड बत्तीस पल के बाद चार दण्ड विषनाड़ी होगी । ऐसे ही और भी जानना चाहिए ॥ ४९-५१ ॥

दिन के पन्द्रह मुहूर्त्त

गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वम्बुविश्वे-
ऽभिजिदथ च विधातापीन्द्र इन्द्रानलौ च
निर्ऋतिरुदकनाथोऽप्यर्यमाथो भगः स्यु
क्रमश इह मुहूर्त्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥ ५२ ॥

अन्वयः—गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वम्बुविश्वे अभिजित् अथ च विधाता अपि च इन्द्रः इन्द्रानलौ, निर्ऋतिः उदकनाथः, अपि (तथा) अर्यमा अथो भगः इमे बाणचन्द्राः (पञ्चदश) मुहूर्त्ताः क्रमशः वासरे स्युः ॥ ५२ ॥

दिन का जितना मान हो उसमें पन्द्रह का भाग देने से जो दण्ड पल लब्ध हों वही एक मुहूर्त्त का मान होता है । पहिले मुहूर्त्त का स्वामी महादेव, दूसरे का सर्प, तीसरे का मित्र नामक सूर्य, चौथे के पितर, पाँचवें के वसु, छठे का जल, सातवें के विश्वेदेव, आठवें का अभिजित्, नवें का विधाता, दशवें का इन्द्र, गेरहवें के इन्द्र और अग्नि, बारहवें का राक्षस, तेरहवें का वरुण, चौदहवें का अर्यमा नामक सूर्य और पन्द्रहवें का भग नामक सूर्य स्वामी है । क्रम से ये पन्द्रह मुहूर्त्त दिन में होते हैं ॥ ५२ ॥

रात्रि के मुहूर्त्त

शिवोऽजपादादष्टौ स्युर्भेशा अदितिजीवकौ ।
विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतो मुहूर्त्ता निशि कीर्तिताः ॥ ५३ ॥

अन्वयः—शिवः अजपादात् अष्टौ भेशाः अदितिजीवकौ विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतः (एते) निशि [रात्रौ] मुहुर्त्ताः स्युः ॥ ५३ ॥

दिनमान को साठ में घटाने पर जो बाकी रहे वह रात्रिमान होता है । उसमें पन्द्रह का भाग देने से जो दण्ड-लब्ध हों वह रात्रि में एक मुहूर्त्त का मान होता है । रात्रि में पहिले मुहूर्त्त के स्वामी शिव और दूसरे मुहूर्त्त से लेकर नवें मुहूर्त्त पर्यन्त आठ मुहूर्त्तों के पूर्वभाद्रपद आदि आठ नक्षत्र स्वामी होते हैं, अर्थात् दूसरे मुहूर्त्त के स्वामी अजपाद नामक शिव, तीसरे मुहूर्त्त के अहिर्बुध्न्य नामक शिव, चौथे मुहूर्त्त के पूषा नामक सूर्य, पाँचवें मुहूर्त्त के अश्विनीकुमार, छठे मुहूर्त्त के यम, सातवें मुहूर्त्त के अग्नि, आठवें मुहूर्त्त के

ब्रह्मा, नवें मुहूर्त्त के चन्द्रमा, दशवें मुहूर्त्त के अदिति, गेरहवें मुहूर्त्त के बृहस्पति, बारहवें मुहूर्त्त के विष्णु, तेरहवें मुहूर्त्त के सूर्य, चौदहवें मुहूर्त्त के त्वष्टा अर्थात् विश्वकर्मा और पन्द्रहवें मुहूर्त्त का वायु स्वामी है। क्रम से ये पन्द्रह मुहूर्त्त रात्रि में होते हैं ॥ ५३ ॥

आदित्यादि वारों में निषिद्ध मुहूर्त्त

रवावर्यमा ब्रह्मरक्षश्च सोमे कुजे वह्निपित्र्ये बुधे चाभिजित्स्यात् ।
गुरौ तोयरक्षौ भृगौ ब्राह्मपित्र्ये शनावीशसार्पौ मुहूर्त्ता निषिद्धाः ॥ ५४ ॥

अन्वयः—रवौ अर्यमा, सोमे ब्रह्मरक्षः, कुजे वह्निपित्र्ये, बुधे अभिजित्, गुरौ तोयरक्षौ, भृगौ ब्राह्मपित्र्ये, शनौ ईशसार्पौ, (इमे) मुहूर्त्ताः निषिद्धाः (ज्ञेयाः) ॥ ५४ ॥

रविवार में अर्यमा नामक मुहूर्त्त, सोमवार में ब्रह्म और राक्षस दो मुहूर्त्त, मङ्गल में अग्नि और पितर दो मुहूर्त्त, बुधवार में अभिजित् नामक मुहूर्त्त, बृहस्पतिवार में जल और राक्षस दो मुहूर्त्त, शुक्रवार में ब्राह्म और पितर दो मुहूर्त्त, शनैश्चर में महादेव और सर्प दो मुहूर्त्त निषिद्ध होते हैं। इन दिनों के इन मुहूर्त्तों में कोई शुभ कार्य न करना चाहिए। इन मुहूर्त्तों का और भी यह प्रयोजन है कि किसी कार्य की आवश्यकता हो और जिस नक्षत्र में उस कार्य के करने को कहा है, वह नक्षत्र उस काल में नहीं है तो उस नक्षत्र के स्वामी के मुहूर्त्त में उस कार्य को कर ले ॥ ५४ ॥

विवाह के नक्षत्र और अभिजित् नक्षत्र का मान

निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्रपित्र्य-
ब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः शुभो विवाहः ।
रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्व-
प्रान्त्याङ्घ्रिः श्रुतितिथिभागतोऽभिजित्स्यात् ॥ ५५ ॥

अन्वयः—निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्रपित्र्यब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः, रिक्तामारहिततिथौ, शुभे अह्नि, विवाहः शुभः (स्यात्), तथा वैश्वप्रान्त्यांघ्रिः श्रुतितिथिभागतः अभिजित् स्यात् ॥ ५५ ॥

सूर्यादि ग्रहों से विद्ध* नक्षत्रों को छोड़ मृगशिरा, हस्त, मूल, अनुराधा, मघा, रोहिणी, रेवती, तीनों उत्तरा और स्वाती नक्षत्र में चौथ, नवमी, चतुर्दशी, अमावास्या को छोड़ अन्य तिथियों में और शुभ दिन अर्थात्

*वेध का प्रकार आगे कहेंगे।

सोमवार, बुध, बृहस्पति, शुक्रवार में विवाह शुभ होता है। उत्तराषाढ़ नक्षत्र के चौथे चरण से लेकर श्रवण के चार दण्ड बीते तक अभिजित् नाम नक्षत्र कहा जाता है ॥ ५५ ॥

ग्रहों द्वारा नक्षत्रों का वेध

वेधोऽन्योन्यमसौ विरिञ्च्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयो-
र्विश्वेन्द्वोर्हरिपित्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः ।
स्वातीवारुणयोर्भवेन्निर्ऋतिभाबित्योस्तथोपान्त्ययोः
खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयद्वयोः ॥ ५६ ॥

अन्वयः—विरिञ्च्यभिजितोः, याम्यानुराधर्क्षयोः, विश्वेन्द्वोः, हरिपित्र्ययोः, हस्तोत्तराभाद्रयोः, स्वातीवारुणयोः, निर्ऋतिभादित्योः, तथा उपान्त्ययोः ग्रहकृतः वेधः भवेत् । तत्र गते खेटे तुरीयचरणाद्योः वा (तथा) तृतीयद्वयोः वेधः भवेत् ॥ ५६ ॥

पाँच रेखा खड़ी खींचकर उन्हीं के ऊपर पाँच आड़ी रेखा और चारों कोनों में दो-दो तिरछी रेखा खींचे, तब जो आकार बन जाता है, उसे पञ्च-शलाका चक्र कहते हैं। इस चक्र में ऊपर बाईं ओर के कोने में खींची हुई दूसरी रेखा के छोर पर कृत्तिका नक्षत्र स्थापित करके फिर दाहिने क्रम से सब रेखाओं के छोरों पर रोहिणी से लेकर भरणी पर्यन्त सब नक्षत्र स्थापित किये जाते हैं। तब एक रेखा के दोनों छोरों पर जो नक्षत्र रहते हैं उन दोनों का परस्पर वेध होता है। उदाहरण—यथा रोहिणी और अभिजित् का, भरणी और अनुराधा का, उत्तराषाढ़ और मृगशिरा का, श्रवण और मघा का, हस्त और उत्तराभाद्रपद का, स्वाती और शतभिष का, मूल और पुनर्वसु का, उत्तराफाल्गुनी और रेवती का परस्पर वेध होता है। परन्तु यह वेध ग्रहकृत होता है, अर्थात् एक रेखा में स्थित दो नक्षत्रों में से किसी एक में जो ग्रह स्थित हो वह दूसरे को वेधता है। यथा रोहिणी में कोई ग्रह स्थित हो तो वह अभिजित् को वेधता है और अभिजित् में कोई ग्रह स्थित हो तो वह रोहिणी को वेधता है। ऐसा ही वेध सब नक्षत्रों में जानना चाहिये। इसी चक्र में पाद-वेध भी कहते हैं। उसकी रीति यह है कि एक रेखा में स्थित जिन दो नक्षत्रों का परस्पर वेध होता है उनमें से किसी नक्षत्र के चौथे पाद में ग्रह स्थित हो तो वह उसी रेखा में स्थित दूसरे नक्षत्र के पहिले पाद को वेधता है, यदि तीसरे पाद में स्थित हो तो दूसरे पाद को और दूसरे पाद में स्थित हो तो तीसरे पाद को और पहिले

पाद में स्थित हो तो चौथे पाद को वेधता है। यथा रोहिणी के पहिले पाद में स्थित ग्रह अभिजित् के चौथे पाद को और रोहिणी के दूसरे पाद में स्थित ग्रह अभिजित् के तीसरे पाद को और रोहिणी के दूसरे पाद में स्थित ग्रह अभिजित् के तीसरे पाद को और रोहिणी के चौथे पाद में स्थित ग्रह अभिजित् के पहिले पाद को वेधता है। इसी तरह अन्यत्र भी पादवेध जानना चाहिए ॥ ५६ ॥

सप्तशलाका चक्र में ग्रहों द्वारा नक्षत्रों का वेध

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे वसु-
द्वीशे वैश्वसुधांशुभे हयभगे सार्पानुराधे मिथः ।
हस्तोपान्तिमभे विधातृविधिभे मूलादिती त्वाष्ट्रभा-
जाङ्घ्री याम्यमघे कृशानुहरिभे विद्धे कुभृद्रेखिके ॥ ५७ ॥

अन्वयः—कुभृद्रखिके (सप्तशलाके चक्रे) शाक्रेज्ये, शतभानिले, जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे, वसुद्वीशे, वैश्वसुधांशुभे, हयभगे, सार्पानुराधे, हस्तोपान्तिमभे, विधातृविधिभे, मूलादिती, त्वाष्ट्रभाजांघ्री, याम्यमघे, कृशानुहरिभे, मिथः विद्धे (स्तः) ॥ ५७ ॥

सात रेखा खड़ी खींचकर उन्हीं के ऊपर सात रेखा आड़ी खींचने से जो आकार बन जाता है उसे सप्तशलाका चक्र कहते हैं। इस सप्तशलाका चक्र में ऊपर बाईं ओर खड़ी रेखा के छोर पर कृत्तिका नक्षत्र को स्थापित करके दाहिने क्रम से सब रेखाओं के छोरों पर रोहिणी आदि भरणीपर्यंत सब नक्षत्र स्थापित किये जाते हैं। तब जो एक रेखा के दोनों छोरों पर दो नक्षत्र रहते हैं उनका परस्पर वेध होता है। यथा ज्येष्ठा और पुष्य का, शतभिष और स्वाती का, पूर्वाषाढ़ और आर्द्रा का, रेवती और उत्तरा-फाल्गुनी का, धनिष्ठा और विशाखा का, उत्तराषाढ़ और मृगशिरा का, अश्विनी और पूर्वाफाल्गुनी का, आश्लेषा और अनुराधा का, हस्त और उत्तराभाद्रपद का, रोहिणी और अभिजित् का, मूल और पुनर्वसु का, चित्रा और पूर्वाभाद्रपद का, भरणी और मघा का कृत्तिका और श्रवण का परस्पर वेध होता है। यह वेध भी ग्रह के द्वारा होता है अर्थात् एक रेखा के दोनों छोरों पर स्थित दो नक्षत्रों में से किसी एक नक्षत्र में कोई ग्रह स्थित हो तो वह ग्रह उसी रेखा के दूसरे छोर पर स्थित दूसरे नक्षत्र को वेधता है। यथा ज्येष्ठा नक्षत्र में कोई ग्रह स्थित हो तो वह पुष्य नक्षत्र को वेधता है, अथवा पुष्य ही नक्षत्र में कोई ग्रह स्थित हो तो वह ज्येष्ठा नक्षत्र को वेधता

है। इसी तरह इस सप्तशलाका चक्र में क्रूरग्रह* करके वेधा हुआ नक्षत्र और शुभग्रह करके वेधा हुआ नक्षत्र का एक पाद विवाहादि शुभ कार्यों में त्यागना चाहिए; क्योंकि दीपिका ग्रन्थ में कहा है कि जिस स्त्री के विवाह-काल में सप्तशलाका चक्र में पापग्रहों वा शुभग्रहों से चन्द्रमा विद्ध हो वह स्त्री विवाहकाल ही के वस्त्र पहने रोती हुई श्मशानभूमि को जाती है ॥ ५७ ॥

सप्तशलाका चक्र

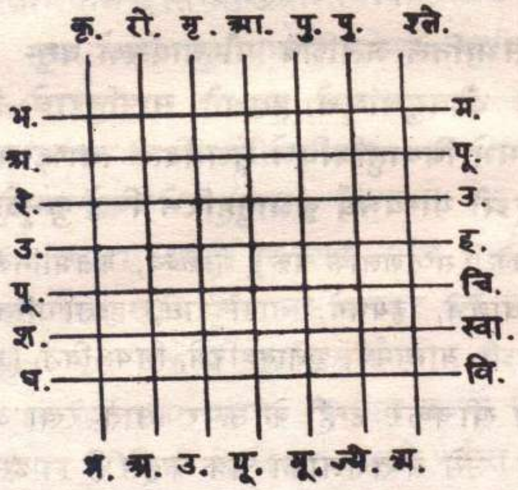

क्रूरग्रहों से विद्ध नक्षत्रों का दोष और उसका परिहार

ऋक्षाणि क्रूरविद्धानि क्रूरमुक्तादिकानि च ।
भुक्त्वा चन्द्रेण मुक्तानि शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥ ५८ ॥

अन्वयः—क्रूरविद्धानि क्रूरभुक्तादिकानि च ऋक्षाणि (तानि यदि) चन्द्रेण भुक्त्वा मुक्तानि (तदा) शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥ ५८ ॥

जो नक्षत्र क्रूरग्रहों करके पंचशलाका या सप्तशलाका चक्र में वेधे गये हों और जिनको क्रूरग्रहों ने भोग करके शीघ्र ही छोड़ दिया हो और जिन नक्षत्रों में क्रूरग्रह स्थित हों और जिन नक्षत्रों में क्रूरग्रह जानेवाले हों और जिन नक्षत्रों में भौम, दैव, आन्तरिक्ष, इन तीन प्रकार के उत्पातों में से कोई उत्पात हुआ हो, वे सब नक्षत्र शुभ नहीं होते। इसलिए उन नक्षत्रों में विवाहादि शुभ कार्य नहीं करना चाहिए और उन्हीं नक्षत्रों को यदि चन्द्रमा ने भोग करके छोड़ दिया हो तो शुभ हो जाते हैं अर्थात् एक महीने के बाद वे सब नक्षत्र शुभ कार्य करने के लिए शुभ हो जाते हैं ॥ ५८ ॥

*सूर्य, क्षीण चन्द्रमा, मङ्गल, शनैश्चर, राहु और केतु ये क्रूर तथा पापग्रह कहे जाते हैं।

लत्तादोष

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि ।
संलत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमाः सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥ ५९ ॥

अन्वयः—ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे सप्तगोजातिशरैर्मितं भं संलत्तयन्ते । (तथा) अर्कशनीज्यभौमाः पुरस्तात् (अग्रे) सूर्याष्टतर्काग्निमितं भं संलत्तयन्ते ॥ ५६ ॥

बुध, राहु, पूर्ण चन्द्रमा, शुक्र ये ग्रह क्रम से अपने पिछले सातवें, नवें, बाइसवें, पाँचवें नक्षत्र को लतिआते हैं अर्थात् बुध जिस नक्षत्र में स्थित हो उससे पिछले सातवें नक्षत्र को, राहु नवें नक्षत्र को, पूर्ण चन्द्रमा बाइसवें नक्षत्र को और शुक्र पाँचवें नक्षत्र को लात से मारता है। परन्तु राहु सदा वक्री रहता है। इसलिए यदि वह अश्विनी नक्षत्र में स्थित हो तो उसका पिछला नवाँ नक्षत्र श्लेषा होता है। सूर्य, शनैश्चर, बृहस्पति, मङ्गल, ये ग्रह क्रम से अपने अगले बारहवें, आठवें, छठे, तीसरे नक्षत्र को लतिआते हैं, अर्थात् सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित होता है उससे अगले बारहवें नक्षत्र को, शनैश्चर आठवें नक्षत्र को, बृहस्पति छठे नक्षत्र को और मङ्गल तीसरे नक्षत्र को लात से मारता है। प्रयोजन यह है कि इन नक्षत्रों में विवाह नहीं करना चाहिए; क्योंकि सूर्य की लत्ता धन का नाश और चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, राहु इन ग्रहों की लत्ता वर-कन्या का नाश और बृहस्पति की लत्ता बंधु का नाश और शुक्र की लत्ता कार्य का नाश करती है, ऐसा वराहजी ने कहा है ॥ ५९ ॥

पातयोग

हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतिपातकगण्डशूलयोगानाम् ।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत्स्यात् ॥ ६० ॥

अन्वयः—हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतिपातकगण्डशूलयोगानाम् अन्ते यत् नक्षत्रं तत् पातेन निपातितं स्यात् ॥ ६ ॥

हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतीपात, गुंड, शूल इन योगों के समान काल में जो नक्षत्र हो वह पातदोष से दूषित किया जाता है। उदाहरण—यथा किसी दिन कृत्तिका नक्षत्र २२ दण्ड ५ पल है और हर्षण योग १९ दण्ड ९ पल है। अब यहाँ हर्षणयोग कृत्तिका नक्षत्र ही में समाप्त है, इस कारण कृत्तिका नक्षत्र पात से दूषित है। ऐसे नक्षत्र विवाहादि शुभ कार्यों में त्याज्य होते हैं। इसी पात-दोष को नारद और वशिष्ठजी ने अन्य प्रकार से कहा है

कि सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हो उस नक्षत्र से लेकर श्लेषा, मघा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, श्रवण इन नक्षत्रों तक गिनने से जितनी संख्या हो अश्विनी को लेकर उतनी ही संख्यावाला दिन नक्षत्र पातदोष से दूषित होता है। उदाहरण—यथा ज्येष्ठा में सूर्य है उससे लेकर श्रवण नक्षत्र तक गिनने से पाँच संख्या हुई। अब अश्विनी से पाँचवाँ मृगशिरा नक्षत्र हुआ। यही पात-दूषित हुआ। ऐसे ही और भी जानना चाहिए ॥ ६० ॥

क्रान्तिसाम्य योग

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे।
तत्रान्योऽन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मङ्गलेषु ॥ ६१ ॥

अन्वयः—पञ्चास्याजौ, गोमृगौ, तौलिकुम्भौ, कन्यामीनौ, कर्क्यली, चापयुग्मे तत्र अन्योऽन्यं (स्थितयोः) चन्द्रभान्वोः क्रान्तेः साम्यं निरुक्त (तत्) मंगलेषु नो शुभं स्यात् ॥ ६१ ॥

सिंह और मेष इन दोनों में से किसी एक में चन्द्रमा और दूसरे में सूर्य स्थित हो तो क्रान्तिसाम्य योग होता है। ऐसे ही वृष-मकर, तुला-कुम्भ, कन्या-मीन, कर्क-वृश्चिक और धनु-मिथुन, इन दो-दो राशियों में से किसी एक में सूर्य और दूसरी राशि में चन्द्रमा स्थित हो तो क्रान्तिसाम्य होता है। यह विवाहादि शुभ कार्यों में शुभ नहीं होता ॥ ६१ ॥

एकार्गल दोष

व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वशूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे।
योगे विरुद्धे त्वभिजित्समेतः खार्जूरमर्काद्विषमे शशी चेत् ॥ ६२ ॥

अन्वयः—व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वशूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे (अस्मिन्) विरुद्धे योगे चेत् (यदि) अभिजित्समेतः शशी अर्कात् विषमे (स्थितः) (तदा) खार्जूरं स्यात् ॥ ६२ ॥

जिस दिन व्याघात, गंड, व्यतीपात, विष्कुम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ, अतिगंड इन योगों में से कोई योग हो और जिस नक्षत्र में सूर्य स्थित हो उस नक्षत्र से लेकर विषम नक्षत्र में चन्द्रमा स्थित हो उस दिन खार्जूर दोष होता है। यहाँ सम-विषम की गणना में अभिजित् का भी ग्रहण है। यह योग विवाहादि शुभ कार्यों में निन्दित होता है। उदाहरण—यथा द्वादशी, रविवार और मूल नक्षत्र व्याघात योग है, और सूर्य

उत्तराषाढ़ में है, इसलिए उत्तराषाढ़ से अभिजित्सहित मूल नक्षत्र तक सत्ताइस हुए। यहाँ सूर्य से चन्द्रमा विषम नक्षत्र में हैं, इसलिए एकार्गल दोष है। इस दिंन विवाह करना अच्छा नहीं है। इस दोष को एकार्गल भी कहते हैं॥ ६२॥

उपग्रह दोष

शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यस्तिथिर्धृतिश्च प्रकृतेश्च पञ्च।
उपग्रहाः सूर्यभतोऽब्जताराः शुभा न देशे कुरुबाह्लिकानाम्॥ ६३॥

अन्वयः—सूर्यभतः अब्जताराः (यदि) शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यः तिथिः, धृतिः प्रकृतेः पञ्च (स्युः) (तदा) उपग्रहाः भवन्ति ते कुरुबाह्लिकानां देशे शुभाः न भवन्ति॥ ६३॥

जिस नक्षत्र में सूर्य स्थित हो उस नक्षत्र से ५। ८। १०। १४। ७। १९। १५। १८। २१। २२। २३। २४। २५ ये चन्द्रमा के तेरह नक्षत्र उपग्रह दोष से दूषित होते हैं। कुरु तथा बाह्लीक देशों में शुभ कार्य करने के लिये ये अशुभ गिने जाते हैं॥ ६३॥

पातादि दोषों पर विशेष

पातोपग्रहलत्तासु नेष्टोऽङ्घ्रिः खेटपत्समः।
वारस्त्रिघ्नोऽष्टभिस्तष्टः सैकः स्यादर्द्धयामकः॥ ६४॥

अन्वयः—पातोपग्रहलत्तासु खेटपत्समः अंघ्रिः नेष्टः स्यात्। (अथ) वारः त्रिघ्नः अष्टभिः तष्टः सैकः अर्द्धयामकः स्यात्॥ ६४॥

पात, उपग्रह और लत्ता दोष में दोषकारक ग्रह जिस नक्षत्र के जिस चरण में स्थित हो उस नक्षत्र का वही चरण अशुभ होता है अर्थात् पात और उपग्रह में तो जिस नक्षत्र के जिस चरण में सूर्य स्थित हो उस नक्षत्र से पाँचवें आदि चन्द्रमा के नक्षत्र का वही चरण दूषित होता है। और लत्ता दोष में लत्ताकारक ग्रह, नक्षत्र के जिस चरण में स्थित होते हैं, चन्द्रमा के नक्षत्र का वही चरण दोषी होता है, सम्पूर्ण नक्षत्र दोषी नहीं होता। अब अर्द्धयाम दोष कहते हैं। दिनमान में आठ का भाग देने से जो दण्डपल लब्ध हों, उनको अर्द्धयाम कहते हैं। ऐसे आठ अर्द्धयाम एक दिन में होते हैं। उनमें एक अशुभ होता है। उसके जानने की यह रीति है कि जिस दिन उस अशुभ अर्द्धयाम को जानना हो, रविवार से उस दिन तक

गिनने से जितनी संख्या हो उसे तीन से गुणा करके आठ का भाग देने से जो बाकी बचे उसमें एक और मिलाने से जितनी संख्या हो उतनी संख्या-वाला अर्द्धयाम अशुभ होता है। उदाहरण—यथा रविवार से मंगलवार तक की तीन संख्या को तीन से गुणा किया तो नव हुए। उसमें आठ का भाग दिया तो एक शेष रहा। उसमें एक और मिलाने पर दो हुए। इससे ज्ञात हुआ कि मंगलवार का दूसरा अर्द्धयाम अशुभ होता है। ऐसे ही अन्य दिनों में भी जानना चाहिए, सो चक्र में मैंने स्पष्ट कर दिया है ॥ ६४ ॥

अशुभ अर्द्धयाम चक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	बृहस्पति	शुक्रवार	शनैश्चर	दिन
४	७	२	५	८	३	६	अशुभ अर्द्धयाम

कुलिक दोष

शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यश्विनः कुलिका रवेः ।
रात्रौ निरेकास्तिथ्यंशाः शनौ चान्तेऽपि निन्दितः ॥ ६५ ॥

अन्वयः—रवेः [सकाशात् क्रमेण] शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यश्विनः तिथ्यंशाः [मुहूर्त्ताः] कुलिकाः स्युः (ते) निरेकाः रात्रौ कुलिकाः (ज्ञेयाः) च शनौ अन्त्येऽपि (मुहूर्त्तः) निन्दितः स्यात् ॥ ६५ ॥

सूर्यादि वारों में १४। १२। १०। ८। ६। ४। २ ये मुहूर्त्त कुलिक संज्ञक होते हैं, अर्थात् दिनमान में पन्द्रह का भाग देने से जो दण्डपल लब्ध हों उनको मुहूर्त्त कहते हैं। ऐसे पन्द्रह मुहूर्त्त एक दिन में होते हैं। उनमें रविवार को चौदहवाँ, सोमवार को बारहवाँ, मंगल को दशवाँ, बुध को आठवाँ, बृहस्पति को छठा, शुक्र को चौथा, शनैश्चर को दूसरा मुहूर्त्त कुलिक-संज्ञक होता है। यही सब मुहूर्त्त एक हीन होकर इन्हीं दिनों की रात्रि में कुलिक होते हैं अर्थात् रविवार की रात्रि में तेरहवाँ, सोमवार की रात्रि में गेरहवाँ, मंगलवार की रात्रि में नवाँ, बुध की रात्रि में सातवाँ, बृहस्पति की रात्रि में पाँचवाँ, शुक्र की रात्रि में तीसरा, शनैश्चर की रात्रि में पहिला तथा पन्द्रहवाँ भी मुहूर्त्त कुलिकसंज्ञक होता है। ये मुहूर्त्त विवाहादि शुभ कार्यों में अशुभ होते हैं ॥ ६५ ॥

कुलिकमुहूर्त्तचक्र

र०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	वार
१४	१२	१०	८	६	४	२	दिन मुहूर्त्त
१३	११	९	७	५	३	१।१५	रात्रि मुहूर्त्त

दग्धातिथि

चापान्त्यगे गोघटगे पतङ्गे कर्काजगे स्त्रीमिथुने स्थिते च ।
सिंहालिगे नक्रधटे समाः स्युस्तिथ्यो द्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः ।। ६६ ।।

अन्वयः—चापान्त्यगे, गोघटगे, कर्काजगे, स्त्रीमिथुने स्थिते च सिंहालिगे नक्रधटे, पतंगे [सूर्ये] सति (क्रमेण) द्वितीयाप्रमुखाः समाः तिथ्यः दग्धाः (भवन्ति) ।। ६६ ।।

धनु-मीनादि राशियों में सूर्य के स्थित रहते द्वितीयादि सम तिथियाँ दग्धसंज्ञक होती हैं, अर्थात् धनु और मीन राशि में सूर्य के स्थित रहते द्वितीया, वृष और कुम्भ राशि में सूर्य के रहते चतुर्थी, कर्क और मेष राशि में सूर्य के रहते षष्ठी, कन्या और मिथुन राशि में सूर्य के रहते अष्टमी, सिंह और वृश्चिक राशि में सूर्य के रहते दशमी तथा मकर और तुला राशि में सूर्य के रहते द्वादशी तिथि दग्धा होती है । दग्धा तिथि में विवाहादि शुभ काम न करना चाहिए ।। ६६ ।।

दग्धातिथिचक्र

धनु-मीन	वृष कुम्भ	कर्क मेष	कन्या मिथुन	सिंह वृश्चिक	मकर तुला	संक्रांति
२	४	६	८	१०	१२	तिथिदग्धा

जामित्र दोष

लग्नाच्चन्द्रान्मदनभवनगे खेटे न स्यादिह परिणयनम् ।
किंवा बाणाशुगमितलवगे जामित्रं स्यादशुभकरमिदम् ।। ६७ ।।

अन्वयः—लग्नात् (वा) चन्द्रात् मदनभवनगे किंवा बाणाशुगमितलवगे खेटे (सति) जामित्रं स्यात्, इह परिणयनं न स्यात्, इदं अशुभकरं स्यात् ।। ६७ ।।

विवाह की लग्न से अथवा चन्द्रमा से सातवें स्थान में यदि कोई ग्रह स्थित हो तो जामित्र दोष होता है । जामित्र दोष में विवाह न करना चाहिए । लग्न और चन्द्रमा जिस नवांश में हो उससे पचपनवें नवांश में यदि कोई ग्रह स्थित हो तो, और कोई ग्रह जिस नवांश में स्थित हो उससे पचपनवें नवांश में यदि लग्न या चन्द्रमा हो तो भी जामित्र दोष होता

है। यह जामित्र दोष विवाहादि शुभ कार्यों में अति अशुभकारक होता है ॥ ६७ ॥

एकार्गलादि दोषों का परिहार

एकार्गलोपग्रहपातलत्ताजामित्रकर्तर्युदयास्तदोषाः ।
नश्यन्ति चन्द्रार्कबलोपपन्ने लग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषा ॥ ६८ ॥

अन्वयः—चन्द्रार्कबलोपपन्ने लग्ने [सति] एकार्गलोपग्रहपातलत्ताजामित्रकर्तर्युदयास्तदोषाः नश्यन्ति, यथा अर्काभ्युदये दोषा (रात्रिः नश्यति) ॥ ६८ ॥

यदि विवाह लग्न सूर्य-चन्द्रमा के स्वोच्चादि-स्थान-स्थितिरूप बल से युक्त हो तो एकार्गल, उपग्रह, पात, लत्ता, जामित्र, कर्तरी, उदयास्तदोष, ये सब नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्य के उदय होते ही रात्रि नष्ट हो जाती है ॥ ६८ ॥

देशभेद से उक्त दोषों का परिहार

उपग्रहर्क्षं कुरुबाह्लिकेषु कलिंगबंगेषु च पातितं भम् ।
सौराष्ट्रशाल्वेषु च लत्तितं भं त्यजेत्तु विद्धं किल सर्वदेशे ॥ ६९ ॥

अन्वयः—कुरुबाह्लिकेषु [देशेषु] उपग्रहर्क्षं, च कलिङ्गबङ्गेषु पातितं भं, च सौराष्ट्रशाल्वेषु लत्तितं भं त्यजेत्, विद्धं भं तु सर्वदेशे किल (निश्चयेन) त्यजेत् ॥ ६९ ॥

कुरु और बाह्लीक, इन पश्चिम के देशों में उपग्रह दोषयुक्त नक्षत्र का; कलिङ्ग और बङ्ग, इन पूर्व के देशों में पात दोष का; सौराष्ट्र और शाल्व, इन पश्चिम के देशों में लत्तादोषयुक्त नक्षत्र का और पञ्चशलाकादि चक्र द्वारा ग्रहों से वेधे हुए नक्षत्र का सब देशों में त्याग करना चाहिए ॥ ६९ ॥

दश दोष

शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेर्भशेषं खं भूयुगाङ्गानि दशेशतिथ्यः ।
नागेन्दवोऽङ्केन्दुमिता नखाश्चेद्भवन्ति चैते दशयोगसंज्ञाः ॥ ७० ॥

अन्वयः—शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेः भशेषं खं भूयुगांगानि दशेशतिथ्यः नागेन्दवः अंकेन्दुमिताः नखाः चेत् (यदि) भवन्ति च (तदा) एते (क्रमेण) दशयोगसंज्ञाः (भवन्ति) ॥ ७० ॥

अश्विनी से लेकर सूर्य और चन्द्रमा के नक्षत्र तक अलग-अलग गिने। फिर उन दोनों संख्याओं को जोड़कर उसमें सत्ताइस का भाग देने से यदि शून्य, एक, चार, छः, दस, गेरह, पन्द्रह, अठारह, उन्नीस, बीस ये अङ्क बाकी बचें तो दोषी होते हैं, उस नक्षत्र में विवाह शुभ नहीं होता। उदाहरण—यथा उत्तराषाढ़ में चन्द्रमा और अनुराधा नक्षत्र में सूर्य स्थित है। अश्विनी से

चन्द्रमा के नक्षत्र की इक्कीस संख्या और सूर्य के नक्षत्र की सत्रह संख्या हुई। इन दोनों का जोड़ अड़तीस हुआ। इसमें सत्ताइस का भाग दिया तो बाकी गेरह बचे। उक्त रीति से यह अङ्क दोषी है, इसलिए उत्तराषाढ़ नक्षत्र में विवाह शुभ नहीं है। ये दश अङ्क गिनाये गये हैं; इसलिए इनका दशयोग नाम पड़ गया है ॥ ७० ॥

उक्त दश दोषों का फल

वाताभ्राग्निमहीपचोरमरणं रुग्वज्रवादाः क्षति-
योगाङ्के दलिते समे मनुयुतेऽथौजे तु सैकेऽर्द्धिते ।
भं दास्रादथ संमितास्तु मनुभीरेखाः क्रमात् संलिखे-
द्वेधेऽस्मिन् ग्रहचन्द्रयोर्न शुभदः स्यादेकरेखास्थयोः ॥ ७१ ॥

अन्वयः—वाताभ्राग्निमहीपचोरमरणं रुग्वज्रवादाः क्षतिः (इति क्रमेण दशयोग-फलानि ज्ञेयानि) अथ समे योगाङ्के दलिते मनुयुते ओजे [योगांके] सैके अर्द्धिते (सति) दास्रात् भं (ज्ञेयम्) अथ मनुभिः सम्मिताः रेखाः क्रमात् संलिखेत् अस्मिन् एकरेखा-स्थयोः ग्रहचन्द्रयोः वेधः न शुभदः स्यात् ॥ ७१ ॥

इन पूर्व कहे हुए दश अङ्कों में से यदि शून्य शेष हो तो विवाहकाल में वायु बहुत चले, एक शेष हो तो बादल बहुत हों, चार शेष हों तो अग्नि लगे, छः शेष हों तो राजदण्ड हो, दश शेष हों तो चोरी हो, गेरह शेष हों तो मरण हो, पन्द्रह शेष हों तो रोग हो, अठारह शेष हों तो बिजली गिरे, उन्नीस शेष हों तो झगड़ा हो, बीस शेष हों तो हानि हो। इस कारण इन दश योगों को विवाह, देवादिप्रतिष्ठा, यज्ञोपवीत, पुंसवनकर्म, कर्णछेद, मुण्डनादि शुभ कर्मों में त्यागना चाहिए। अब इन दश योगों का परिहार कहते हैं। पूर्व कहे हुए दश अङ्कों में से यदि सम अङ्कवाला योग आ पड़े तो उसके दो भाग करके एक भाग में चौदह और मिलावे और यदि विषम अङ्कवाला योग आ पड़े तो उसमें एक और मिलाकर सम करे। तदनन्तर उसके दो भाग करके एक भाग में चौदह और मिलावे। तब जितनी संख्या हो अश्विनी से लेकर उतनी संख्यावाले नक्षत्र को आड़ी चौदह लकीरों से बने हुए चक्र के आदि में लिखकर क्रम से अभिजित् सहित अट्ठाइस नक्षत्र रेखाओं के छोरों पर लिखे। उन नक्षत्रों में जो ग्रह स्थित हों उन्हें भी वहीं लिखे। यदि इस चक्र में किसी ग्रह और चन्द्रमा का परस्पर वेध हो तो वह अशुभ होता है, अर्थात् इस चक्र की किसी एक ही रेखा के एक छोर पर चन्द्रमा हो और दूसरे छोर

पर शुभ या अशुभ कोई अन्य ग्रह स्थित हो तो पूर्वोक्त दश योगों में से यह योग अति अशुभकारक होता है और यदि दूसरे छोर पर कोई ग्रह न स्थित हो तो अशुभकारक नहीं होता। उदाहरण—यथा पूर्वोक्त दश योगांकों में से दस संख्यावाला अङ्क है। इसके दो भाग किये तो पाँच पाँच हुए। एक स्थान में चौदह और मिलाया तो उन्नीस हुए। अब अश्विनी से गिना तो उन्नीसवाँ मूल नक्षत्र हुआ और उन्हीं पूर्वोक्त दश योगों में से गेरह संख्यावाला योग है तो यहाँ एक और मिलाया तो बारह हुए। इनके दो भाग किये तो छः छः हुए। एक स्थान में चौदह और जोड़ा तो बीस हुए। अश्विनी से लेकर गिना तो बीसवाँ पूर्वाषाढ़ नक्षत्र हुआ। इन सम और विषम दोनों अङ्कों से आये हुए मूल और पूर्वाषाढ़ नक्षत्रों में से मूल नक्षत्र को आदि में लिखकर चक्र को स्पष्ट करता हूँ।

मू०	पू०
ज्ये०	उ०–शु०
अ०	अ०
वि०	श्र०
के०–स्वा०	ध०–सू० बु०
श०चं०–चि०	श०
ह०	पू०
उ०	उ०
पू०	रे० बु०
म०	अ०–मं० रा०
आश्ले०	भ०
पू०	कृ०
पु०	रो०
आ०	मृ०

इस चक्र की छठी रेखा के एक छोर पर चित्रा नक्षत्र है। उसमें चन्द्रमा स्थित है और दूसरे छोर पर शतभिष नक्षत्र है उसमें कोई भी ग्रह नहीं है। इस कारण चन्द्रमा का किसी ग्रह के साथ परस्पर वेध नहीं है। इस चित्रा नक्षत्र में यदि विवाह हो तो पूर्वोक्त दश योग दोष अशुभकारक नहीं हो सकता। इस दश योग का बाधक योग व्यासजी ने कहा है कि यदि विवाह लग्न शुक्र या बृहस्पति से दृष्ट वा युक्त हो तो दश योग नष्ट हो जाता है।। ७१ ।।

दक्षिण देशों में प्रसिद्ध बाणदोष

लग्नेनाढ्या याततिथ्योऽङ्कतष्टाः शेषेनागद्व्यब्धितर्केन्दुसंख्ये ।
रोगो वह्नी राजचौरौ च मृत्युर्बाणश्चायं दाक्षिणात्यप्रसिद्धः ॥ ७२ ॥

अन्वयः—याततिथ्यः लग्नेन आढ्याः अंकतष्टाः नागद्व्यब्धितर्केन्दुसंख्ये शेषे (सति क्रमेण) रोगः, वह्निः, राजचौरौ (तथा) मृत्युबाणः स्यात्, च अयं दाक्षिणात्यप्रसिद्धः स्यात् ॥ ७२ ॥

शुक्लपक्ष की परीवा से लेकर जितनी तिथि बीत गई हों उनमें लग्न की राशि की संख्या को जोड़कर नव का भाग देने पर यदि आठ बाकी रहें तो रोगबाण, दो बाकी रहें तो अग्नि बाण, चार शेष रहें तो राजबाण, छः शेष रहें तो चोरबाण और एक शेष रहे तो मृत्युबाण दोष होता है। यह विवाहादि कार्यों में अशुभ होता है। यह बाणदोष दक्षिण देश के लोगों में प्रसिद्ध है ॥ ७२ ॥

अन्य बाणदोष

रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातां-
शकमितिरथतष्टाङ्कैर्यदा पञ्च शेषाः ।
रुगनलनृपचोरा मृत्युसंज्ञश्च बाणो
नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये सशल्यः ॥ ७३ ॥

अन्वयः—रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातांशकमितिः अकैः तष्टा यदा [यत्र] पञ्च शेषाः (तदा क्रमेण) रुगनलनृपचोराः मृत्युसंज्ञः च बाणः (स्यात्), शेषकैक्ये नवहृतशरशेषे (सति) सशल्यः (स्यात्) ॥ ७३ ॥

सूर्य की स्पष्ट संक्रान्ति के भोगे हुए अंशों की संख्या को पाँच स्थान में रखकर क्रम से ६, ३, १, ८, ४ इन अंकों को जोड़कर उनमें नव का भाग देने से यदि पहिले स्थान में पाँच शेष रहें तो रोगबाण, दूसरे स्थान में पाँच शेष रहें तो अग्निबाण, तीसरे स्थान में पाँच शेष रहें तो राजबाण, चौथे स्थान में पाँच शेष रहें तो चोरबाण, पाँचवें स्थान में पाँच शेष रहें तो मृत्युबाण दोष होता है। उदाहरण—यथा सूर्य की स्पष्ट संक्रान्ति का एक अंश बीत गया है तो इस एक को पाँच स्थानों पर रखकर उनके नीचे क्रम से छः तीन, एक, आठ, चार ये अंक स्थापन किये और क्रम से सबको अलग-अलग जोड़ा तो सात, चार, दो, नव, पाँच ये अङ्क हुए। इनमें नव का भाग दिया तो पहिले में सात शेष, दूसरे में चार शेष, तीसरे में दो शेष,

चौथे में शून्य शेष रहा। इस कारण क्रम से रोग, अग्नि, राज, चोर, ये चार बाण नहीं हुए, और पाँचवें स्थान में पाँच शेष रहे, इस कारण मृत्यु नाम का पाँचवाँ बाणदोष हुआ। इस रीति से कहे हुए बाण में काष्ठ का ही शल्य रहता है, इस कारण अति अशुभकारक नहीं होता। अब लोहे के शल्यवाला बाणदोष कहते हैं। पूर्व कहे हुए पाँचों स्थानों के शेषों के जोड़ में नव का भाग देने पर यदि पाँच शेष रहें तो वह लोहे के शल्यवाला बाणदोष होता है। यह अति अशुभकारक होता है। उदाहरण—यथा ७।४।२।०।५ इन पाँचों शेषों का जोड़ १८ हुआ। इनमें ९ का भाग दिया तो शून्य शेष रहा। इस कारण अति अशुभकारक नहीं हुआ ॥ ७३ ॥

बाणदोष का परिहार

रात्रौ चौररुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा संध्ययो-
र्मृत्युश्चाथ शनौ नृपो विदि मृतिर्भौमेऽग्निचौरौ रवौ।
रोगोऽथ व्रतगेहगोनृपपसेवायानपाणिग्रहे
वर्ज्याश्च क्रमतो बुधै रुगनलक्ष्मापालचौराः मृतिः ॥ ७४ ॥

अन्वयः—रात्रौ चौररुजौ (वर्ज्यौ), दिवा नरपतिः (वर्ज्यः), वह्निः सदा (वर्ज्यः), च सन्ध्ययोः मृत्युः (वर्ज्यः), अथ शनौ नृपः, विदि मृतिः, भौमे अग्निचौरौ, रवौ रोगः (वर्ज्यः) अथ व्रतगेहगोपनृपसेवायानपाणिग्रहे क्रमतः रुगनलक्ष्मापालचौराः मृतिश्च बुधैः वर्ज्याः ॥ ७४ ॥

चोर और रोगबाण रात्रि में, राजबाण दिन में, अग्निबाण सब काल में और मृत्युबाण प्रातः तथा सायङ्काल की संध्याओं में शुभ नहीं होता। शनैश्चर में राजबाण, बुधवार में मृत्युबाण, मङ्गल में अग्नि और चोर-बाण, रविवार में रोगबाण वर्जनीय है। यज्ञोपवीत, घर का छवाना, राजा की सेवा अर्थात् नौकरी इत्यादि, सवारी करना और विवाह, इन पाँचों कार्यों में क्रम से रोगबाण, अग्निबाण, राजबाण, चोरबाण और मृत्युबाण त्यागना चाहिए, अर्थात् यज्ञोपवीत में रोगबाण, घर छवाने में अग्निबाण, राजा की सेवा में राजबाण, सवारी में चोरबाण और विवाह में मृत्युबाण त्यागना चाहिए ॥ ७४ ॥

ग्रहों की दृष्टि

त्र्याशं त्रिकोणं चतुरस्त्रमस्तं पश्यन्ति खेटाश्चरणाभिवृद्धया।
मन्दी गुरुर्भूमिसुतः परे च क्रमेण संपूर्णदृशो भवन्ति ॥ ७५ ॥

अन्वयः—त्र्याशं, त्रिकोणं, चतुरस्रं, अस्तं (सप्तमं) खेटाः चरणाभिवृद्धया पश्यन्ति, च [तथा] मन्दः, गुरुः, भूमिसुतः, परे [रविचन्द्रबुधशुक्राः] क्रमेण सम्पूर्णदृशः भवन्ति ॥ ७५ ॥

सब ग्रह अपने स्थान से तीसरे-दशवें, पाँचवें-नवें, चौथे-आठवें और सातवें स्थान को पादवृद्धि से देखते हैं, अर्थात् तीसरे-दशवें स्थान को एक पाद अर्थात् चौथाई दृष्टि से, पाँचवें-नवें स्थान को दो पाद अर्थात् आधी दृष्टि से, चौथे-आठवें स्थान को तीन पाद अर्थात् पौन दृष्टि से और सातवें स्थान को चार पाद अर्थात् पूर्णदृष्टि से देखते हैं। अपने स्थान से तीसरे-दशवें स्थान को शनैश्चर, पाँचवें-नवें स्थान को बृहस्पति, चौथे-आठवें स्थान को मंगल पूर्णदृष्टि से देखता है ॥ ७५ ॥

लग्नस्थान की शुद्धि

यदा लग्नांशेशो लवमथ तनुं पश्यति युतो
भवेद्वाऽयं वोढुः शुभफलमनल्पं रचयति।
लवद्यूनस्वामी लवमदनभं लग्नमदनं
प्रपश्येद्वा वध्वाः शुभमितरथा ज्ञेयमशुभम् ॥ ७६ ॥

अन्वयः—यदा लग्नांशेशः लग्नं अथ (अथवा) तनुं पश्यति वा युतो भवेत् (तदा) अयं वोढुः अनल्पं शुभफलं रचयति। यदि लवद्यूनस्वामी लवमदनभं लग्नमदनं वा प्रपश्येत् (तदा) वध्वाः शुभं रचयति इतरथा अशुभं ज्ञेयम् ॥ ७६ ॥

यदि विवाहकालिक लग्न से नवांश का स्वामी लग्न के नवांश को या लग्न को देखता हो, अथवा नवांश या लग्न में स्थित हो तो वह वर को अति शुभ फल देता है। नवांश का उदाहरण—यथा मेष लग्न में मिथुन का नवांश हो, उसका स्वामी बुध तुला में स्थित होकर मिथुन के नवांश को देखता हो, अथवा उसी में स्थित हो। लग्न का उदाहरण—यथा मेष लग्न में मिथुन के नवांश का स्वामी बुध, मकरराशि में स्थित होकर मिथुन-नवांश को नहीं देखता और मेष लग्न को देखता है या उसी में स्थित है। अब सातवें स्थान की शुद्धि कहते हैं। लग्न के नवांश से सातवें नवांश का स्वामी यदि लग्न से सातवें भाव के नवांश को या सातवें भाव को देखता हो या उसी में स्थित हो तो स्त्री को अति शुभ फल करता है। नवांश का उदाहरण—यथा मेष लग्न में मिथुन का नवांश है, उससे सातवें धनु के नवांश का स्वामी बृहस्पति, लग्न से सातवें तुला भाव में स्थित होकर धनु नवांश

को देखता है या उसी में स्थित है। सातवें भाव का उदाहरण—यथा मेष लग्न में मिथुन का नवांश है। उससे सातवें धनु के नवांश का स्वामी बृहस्पति कर्क में स्थित रहकर अपने नवांश को नहीं देखता और लग्न से सातवें तुला भाव को देखता है या उसी में स्थित है। इस कही हुई रीति से विपरीत अशुभ होता है यदि पूर्वोक्त नवांशों के स्वामी पूर्वोक्त नवांशों को या भावों को न देखते हों और न उनमें स्थित हों तो वर और कन्या की मृत्यु होती है ॥ ७६ ॥

लग्न से सातवें भाव की शुद्धि

लवेशो लवं लग्नपो लग्नगेहं प्रपश्येन्मिथो वा शुभं स्याद्वरस्य।
लवद्यूनपोंऽशं द्युनं लग्नपोऽस्तं मिथो वेक्षते स्याच्छुभं कन्यकायाः ॥ ७७ ॥

अन्वयः—लवेशः लवं, (तथा) लग्नपः लग्नगेहं वा मिथः (यदि) प्रपश्येत् (तदा) वरस्य शुभं स्यात्। लवद्यूनपः अंशं द्युनं लग्नपः अस्त वा मिथः ईक्षते (तदा) कन्यकायाः शुभं स्यात् ॥ ७७ ॥

नवांश का स्वामी नवांश को और लग्न का स्वामी लग्न को देखता हो अथवा दोनों परस्पर देखते हों, अर्थात् नवांश का स्वामी लग्न को और लग्न का स्वामी नवांश को देखता हो तो वर का शुभ होता है और यदि लग्न के नवांश से सातवें नवांश का स्वामी लग्न से सातवें भाव के नवांश को और लग्न से सातवें भाव का स्वामी लग्न से सातवें भाव को देखता हो अथवा दोनों परस्पर देखते हों, अर्थात् नवांश का स्वामी भाव को और भाव का स्वामी नवांश को देखता हो तो कन्या का शुभ होता है ॥ ७७ ॥

अन्य प्रकार से लग्न और सातवें भाव की शुद्धि

लवपतिशुभमित्रं वीक्षतेंऽशं तनुं वा
परिणयनकरस्य स्याच्छुभं शास्त्रदृष्टम्।
मदनलवपमित्रं सौम्यमंशं द्युनं वा
तनुमदनगृहं चेद्वीक्षते शर्म वध्वा ॥ ७८ ॥

अन्वयः—लवपतिशुभमित्रं अंशं तनुं वा यदि वीक्षते तदा परिणयनकरस्य शास्त्रदृष्टं शुभं स्यात्। सौम्यं मदनलवपमित्रं चेत् अंशं द्यूनं वा तनुमदनगृहं वीक्षते चेत् [तदा] वध्वाः शर्म [शुभं] स्यात् ॥ ७८ ॥

लग्न के नवांश के स्वामी का मित्र होकर शुभग्रह, यदि नवांश को या लग्न को देखता हो तो वर को शुभ होता है और लग्न के नवांश से सातवें

नवांश के स्वामी का मित्र होकर शुभग्रह यदि लग्न से सातवें भाव के नवांश को या सातवें भाव को देखता हो तो स्त्री को शुभ होता है। ऐसा शास्त्र में कहा और देखा गया है ॥ ७८ ॥

सूर्य-संक्रान्ति में निषिद्धकाल

विषुवायनेषु परपूर्वमध्यमान् दिवसांस्त्यजेदितरसंक्रमेषु हि।
घटिकास्तु षोडशशुभक्रियाविधौ परतोपि पूर्वमपि सन्त्यजेद्बुधः ॥ ७९ ॥

अन्वयः—विषुवायनेषु [संक्रान्तिषु] (क्रमेण) परपूर्वमध्यमान् दिवसान् त्यजेत्। इतरसंक्रमेषु हि परतः पूर्वं अपि षोडश घटिकाः शुभक्रियाविधौ बुधः त्यजेत् ॥ ७६ ॥

विषुव अर्थात् तुला और मेष, अयन अर्थात् कर्क और मकर की संक्रान्ति जिस दिन हो वह दिन और उससे एक दिन आगे और पीछे, इन तीन दिनों में विवाहादि शुभ कार्य न करे। अन्य संक्रान्तियों में जिस समय संक्रान्ति हो उससे पहिले सोलह दण्ड और पीछे सोलह दण्ड त्याग दे अर्थात् इन बत्तीस दण्डों में विवाहादि शुभ कार्य न करे ॥ ७९ ॥

सूर्यादि ग्रहों की संक्रान्तियों में निषिद्धकाल

देवद्वचङ्कर्तवोऽष्टाष्टौ नाड्योऽङ्काः खनृपाः क्रमात्।
वर्ज्याः संक्रमणेऽर्कादेः प्रायोऽर्कस्यातिनिन्दिताः ॥ ८० ॥

अन्वयः—अर्कादेः संक्रमणे क्रमात् देवद्वयंकर्तवः अष्टाष्टौ अंकाः खनृपाः नाड्यः वर्ज्याः। अर्कस्य प्रायः अतिनिन्दिताः (भवन्ति) ॥ ८० ॥

संक्रान्ति* काल से पूर्व और पर मिलाकर तेंतिस दण्ड सूर्य की संक्रान्ति में, तो दण्ड चन्द्रमा की संक्रान्ति में, नवदण्ड मंगल की संक्रान्ति में, छः दण्ड बुध की संक्रान्ति में, अट्ठासी दण्ड बृहस्पति की संक्रान्ति में, नव दण्ड शुक्र की संक्रान्ति में और एक सौ साठ दण्ड शनैश्चर की संक्रान्ति में निषिद्ध होते हैं, इसलिए विवाहादि शुभ कार्यों में त्यागने के योग्य हैं। किन्तु इनमें सूर्य की संक्रान्तिवाले तेंतिस दण्ड अति अशुभ होते हैं ॥ ८० ॥

पंगु-अन्धादि लग्नदोष

घस्रे तुलाली बधिरौ मृगाश्वौ रात्रौ च सिंहाजवृषा दिवान्धाः।
कन्यानृयुक्कर्कटका निशान्धा दिने घटोऽन्त्यो निशि पङ्गुसंज्ञः ॥ ८१ ॥

अन्वयः—घस्रे [दिने] तुलाली बधिरौ [भवेताम्], रात्रौ मृगाश्वौ बधिरौ

*एक राशि से दूसरी राशि में ग्रहों के जाने को संक्रान्ति कहते हैं।

(स्याताम्), च (तथा) सिंहाजवृषाः दिवान्धाः, कन्यानृयुक्कर्कटकाः निशान्धाः (भवन्ति), दिने घटः, निशि अन्त्यः पंगुसंज्ञः स्यात् ॥ ८१ ॥

तुला और वृश्चिक ये दोनों लग्नें दिन में तथा मकर और धनु रात्रि में बहिरी होती हैं। सिंह, मेष और वृष दिन में तथा कन्या, मिथुन और कर्क रात्रि में अन्धी होती हैं। कुम्भ लग्न दिन में तथा मीन लग्न रात्रि में पंगु होती हैं ॥ ८१ ॥

*मतान्तर से पंगु आदि दोष

बधिरा धन्वितुलालयोऽपराह्णे मिथुनं कर्कटकोऽङ्गना निशान्धाः।
दिवसान्धा हरिगोक्रियास्तु कुब्जा मृगकुम्भान्तिमभानिसन्ध्ययोर्हि ॥ ८२ ॥

अन्वयः—धन्वितुलालयः अपराह्णे बधिराः (स्युः) मिथुनं कर्कटः अंगना (एते) निशान्धाः, हरिगोक्रियाः दिवसान्धाः (भवन्ति) तु पुनः मृगकुम्भान्तिमभानि सन्ध्ययोः हि कुब्जाः (भवन्ति) ॥ ८२ ॥

धनु, तुला और वृश्चिक ये लग्नें दो पहर के बाद बहिरी होती हैं। मिथुन, कर्क और कन्या रात्रि में तथा सिंह, वृष और मेष दिन में अन्धी होती हैं। मकर, कुम्भ और मीन प्रातःकाल तथा सायंकाल कुबड़ी होती हैं ॥ ८२ ॥

पंग्वादि लग्नों का फल

दारिद्र्यं बधिरतनौ दिवान्धलग्ने वैधव्यं शिशुमरणं निशान्धलग्ने।
पङ्ग्वंगे निखिलधनानि नाशमापुः सर्वत्राधिपगुरुदृष्टिभिर्न दोषः ॥ ८३ ॥

अन्वयः—बधिरतनौ (विवाहे) दारिद्र्यं स्यात्, दिवान्धलग्ने वैधव्यम्, निशान्धलग्ने शिशुमरणम्, पग्वंगे निखिलधनानि नाशं आपुः। सर्वत्र अधिपगुरुदृष्टिभिः न दोषः (स्यात्) ॥ ८३ ॥

बहिरी लग्न में यदि विवाह हो तो दारिद्र्य होता है, जो लग्नें दिन में अन्धी कही हैं, उनमें यदि विवाह हो तो कन्या विधवा होती है, जो लग्नें रात्रि में अन्धी कही हैं उनमें विवाह हो तो सन्तान नहीं जीती और पंगु-संज्ञक लग्न में विवाह हो तो धन का नाश होता है। परन्तु यदि लग्न का स्वामी या बृहस्पति लग्न को देखता हो तो उक्त दोष नहीं होता ॥ ८३ ॥

---

* यद्यपि मतान्तर से ये पंग्वादि संज्ञाएँ ग्रन्थकार ने कही हैं, परन्तु इसमें कोई प्रमाण नहीं मिलता।

शुभ नवांश

कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे झषगे वा ।
यर्हि भवेदुपयामस्तर्हि सती खलु कन्या ॥ ८४ ॥

अन्वयः—कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे वा झषगे (लवे) यर्हि उपयामः भवेत् तर्हि (सा) कन्या खलु [निश्चयेन] सती (स्यात्) ॥ ८४ ॥

धनु, तुला, कन्या और मिथुन के नवांश में यदि विवाह हो तो कन्या पतिव्रता होती है । ग्रन्थकार ने मीन का नवांश भी विकल्प से शुभ बताया है, किन्तु प्राचीन मुनियों ने मीन का नवांश त्याज्य कहा है ॥ ८४ ॥

विहित नवांशों में भी किसी का निषेध

अन्त्यनवांशे न च परिणेया काचन वर्गोत्तममिह हित्वा ।
नो चरलग्ने चरलवयोगं तौलिमृगस्थे शशभृति कुर्यात् ॥ ८५ ॥

अन्वयः—इह वर्गोत्तमं हित्वा अन्त्यनवांशे काचन (कन्या) न च परिणेया, तौलमृगस्थे शशिभृति चरलग्ने चरलवयोगं नो कुर्यात् ॥ ८५ ॥

वर्गोत्तम* नवांश को छोड़ लग्न के अन्त्य नवांश में विवाह न करना चाहिए । जैसे मेष लग्न में धन का नवांश और वृष लग्न में कन्या का नवांश इत्यादि । तुला और मकर राशि में चन्द्रमा के रहते चर लग्न में चर नवांश का योग न करे, अर्थात् मेष, कर्क, तुला और मकर लग्न में नवांश का योग न करे, अर्थात् मेष, कर्क, तुला और मकर लग्न में इन्हीं के नवांश में विवाह न करे; क्योंकि ऐसे योग में ब्याही स्त्री पति को छोड़कर दूसरे पुरुष को ग्रहण करती है ॥ ८५ ॥

सर्वथा लग्नभङ्ग योग

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः ।
लग्नेट्कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौर्लग्नेट् शुभाराश्च मदे च सर्वे ॥ ८६ ॥

अन्वयः—शनिः व्यये, अवनिजः खे, भृगुः तृतीये, चन्द्रखलाः तनौ न शस्ताः । लग्नेट् कविः, ग्लौः रिपौ, च ग्लौः लग्नेट् शुभाराः मृतौ, च (तथा) सर्वे [ग्रहाः] मदे [न शस्ताः स्युः] ॥ ८६ ॥

विवाहकालिक लग्न से बारहवें स्थान में शनैश्चर, दशवें स्थान में मंगल, तीसरे स्थान में शुक्र और लग्न में चन्द्रमा तथा पापग्रह शुभ नहीं होते । छठे

*अभीष्ट राशि में उसी का नवांश वर्गोत्तम कहा जाता है । यथा मेष राशि में मेष का नवांश, वृष राशि में वृष का नवांश ।

स्थान में लग्नेश, शुक्र और चन्द्रमा शुभ नहीं होते। आठवें स्थान में चन्द्रमा, लग्नेश, शुभग्रह और मंगल शुभ नहीं होते। और सातवें स्थान में सम्पूर्ण शुभाशुभ ग्रह शुभ नहीं होते ॥ ८६ ॥

विवाहकालिक शुभग्रह

त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्रा-
स्त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः ।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोष्ट-
त्रिद्यूनषट्व्ययगृहान्परिहृत्य शस्तः ॥ ८७ ॥

अन्वयः—त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्राः (शस्ताः स्युः)। क्षितिसुतः त्र्यायारिगः, अब्जः द्विगुणायगः (शुभः)। ज्ञगुरू सप्तव्ययाष्टरहितौ (शुभौ), अष्टत्रिद्यूनषड्व्ययगृहान् परिहृत्य सितः शस्तः (स्यात्) ॥ ८७ ॥

लग्न से तीसरे, गेरहवें, आठवें और छठे स्थान में सूर्य शुभ होता है। इन्हीं स्थानों में केतु, राहु और शनैश्चर भी शुभ होते हैं। तीसरे, गेरहवें, छठे स्थान में मंगल शुभ होता है। दूसरे, तीसरे, गेरहवें स्थान में चन्द्रमा शुभ होता है। सातवें, बारहवें, आठवें स्थान को छोड़कर अन्य स्थानों में बुध और बृहस्पति शुभ होते हैं। आठवें, तीसरे, सातवें, छठे, बारहवें स्थान को छोड़कर अन्य स्थानों में शुक्र शुभ होता है ॥ ८७ ॥

कर्तरी आदि महादोषों का परिहार

पापौ कर्तरिकारकौ रिपुगृहे नीचास्तगौ कर्तरी-
दोषो नैव सितेऽरिनीचगृहगे तत्षष्ठदोषोऽपि न ।
भौमेऽस्ते रिपुनीचगे नहि भवेद्भौमोऽष्टमो दोषकृ-
न्नीचे नीचनवांशके शशिनि रिष्फाष्टारिदोषोऽपि न ॥ ८८ ॥

अन्वयः—कर्तरिकारकौ पापौ (यदि) रिपुगृहे (वा) नीचास्तगौ (तदा) कर्तरीदोषो नैव (भवति), अरिनीचगृहगे सिते तत्षष्ठदोषः अपि न (भवेत्), भौमे अस्ते रिपुनीचगे अष्टमो भौमः दोषकृत् नहि भवेत्, शशिनि नीचे नीचनवांशके (स्थिते) रिष्फाष्टारिदोषः अपि न भवेत् ॥ ८८ ॥

यदि कर्तरी कारक दोनों ग्रह क्रूर हों, अथवा अपने शत्रु के स्थान में स्थित हों या अपने नीच स्थान में हों, अथवा अस्त हों तो कर्तरी दोष नहीं होता। यदि शुक्र अपने शत्रु के स्थान में या नीच स्थान में स्थित हो तो लग्न से छठे स्थान में रहने का दोष नहीं होता। यदि मंगल अपने शत्रु के स्थान

में या नीच स्थान में स्थित हो अथवा अस्त हो, तो लग्न से आठवें स्थान में रहकर भी दोषकारक नहीं होता। यदि चन्द्रमा अपने नीच स्थान में या नीच राशि के नवांश में स्थित हो तो लग्न से बारहवें, आठवें, छठे स्थान में रहने का दोष नहीं होता ॥ ८८ ॥

वर्ष आदि अनेक दोषों का परिहार

अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्धतिथ्यन्धकाणबधिराङ्गमुखाश्च दोषाः ।
नश्यन्ति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांशदोषः ॥ ८९ ॥

अन्वयः—विद्गुरुसितेषु केन्द्रकोणे (स्थितेषु) इह अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्धतिथ्यन्धकाणबधिरांगमुखाः दोषाः नश्यन्ति च पुनः तद्वत् पापविधुयुक्तनवांशदोषः नश्यति ॥ ८९ ॥

लग्न, चौथे, पाँचवें, नवें, दशवें स्थान में बुध, बृहस्पति और शुक्र के रहते सम-विषमादि वर्षदोष, अयनदोष, ऋतुदोष, रिक्तादि तिथिदोष, मास-दोष, क्रूरग्रहसहितादि नक्षत्रदोष, तेरह दिन का पक्षदोष, दग्धातिथिदोष अन्ध-काण-बधिरादि लग्नदोष और अकालवृष्टि आदि दोष नष्ट हो जाते हैं। ऐसे ही चन्द्रयुक्त राशि के नवांश में पापग्रह के रहने का भी दोष नष्ट हो जाता है ॥ ८९ ॥

अन्य दोषों का परिहार

केन्द्रे कोणे जीव आये रवौ वा लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमे वा ।
सर्वे दोषा नाशमायान्ति चन्द्रे लाभे तद्वद्दुर्मुहूर्तांशदोषाः ॥ ९० ॥

अन्वयः—जीवे केन्द्रे वा कोणे, वा रवौ आये, वा लग्ने वर्गोत्तमे, अपि वा चन्द्रे वर्गोत्तमे [स्थिते] सर्वे दोषाः नाशं आयान्ति, तद्वत् चन्द्रे लाभे (सति) दुर्मुहूर्तांशदोषाः नाशं आयान्ति ॥ ९० ॥

लग्न, चौथे, पाँचवें, नवें, दशवें स्थान में बृहस्पति, लग्न से गेरहवें स्थान में सूर्य तथा लग्न के वर्गोत्तम में या अपने वर्गोत्तम में चन्द्रमा के रहते सब दोष नष्ट हो जाते हैं। ऐसे ही लग्न से गेरहवें स्थान में चन्द्रमा के रहते दुष्टमुहूर्त्तदोष तथा पापग्रह के नवांश का दोष नष्ट हो जाता है ॥ ९० ॥

सामान्य दोषों का परिहार

त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः ।

भवेदाये केन्द्रेऽङ्गप उत लवेशो यदि तदा
समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥ ९१ ॥

अन्वयः—सौम्यः त्रिकोणे वा मदनरहिते केन्द्रे (स्थितः) दोषशतकं हरेत्। अपि शुक्रः द्विगुणं, सुरगुरुः लक्षं [लक्षगुणं] दोषं हरेत्। अंगपः उत् लवेशः यदि आये वा केन्द्रे भवेत् तदा दोषाणां समूह दहनः तूलं इव शमयति ॥ ९१ ॥

यदि लग्न, चौथे, पाँचवें, नवें या दशवें स्थान में बुध स्थित हो तो सौ दोषों को हरता है। यदि इन्हीं स्थानों में शुक्र स्थित हो तो पूर्व से द्विगुण, अर्थात् दो सौ दोषों को हरता है। यदि इन्हीं स्थानों में बृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषों को हरता है। लग्न का स्वामी अथवा नवांश का स्वामी यदि लग्न, चौथे, दशवें, गेरहवें स्थान में स्थित हो तो दोषों के समूह को वैसे ही नष्ट करता है जैसे अग्नि रुई के ढेर को भस्म करती है ॥ ९१ ॥

लग्न का विंशोपक बल

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्द्धत्रयो गुरौ।
रामा मन्दागुकेत्वारे सार्द्धैकैकं विंशोपकाः ॥ ९२ ॥

अन्वयः—ज्ञभृग्वोः द्वौ द्वौ, इन्दौ पञ्च, रवौ सार्धत्रयः, गुरौ रामः, मन्दागुकेत्वारे सार्धैकैकं विंशोपकाः (भवन्ति) ॥ ९२ ॥

इसी प्रकरण के सत्तासी श्लोक में कहे हुए अपने शुभ स्थानों में स्थित रहते बुध का दो बिस्वा, शुक्र का दो बिस्वा, चन्द्रमा का पाँच बिस्वा, सूर्य का साढ़े तीन बिस्वा, बृहस्पति का तीन बिस्वा, शनैश्चर का डेढ़ बिस्वा और राहु, केतु तथा मंगल का डेढ़-डेढ़ बिस्वा बल होता है। उक्त स्थानों से अन्यत्र स्थित रहते सूर्य आदि ग्रह शून्यबल होते हैं। प्रयोजन यह है कि विवाहकाल में यह सब बल मिलकर पन्द्रह से बीस बिस्वा तक हो तो लग्न शुभ और दश से पन्द्रह बिस्वा तक हो तो मध्यम और पाँच से दस बिस्वा तक हो तो अशुभ होती है। पाँच बिस्वा से कम हो तो वह लग्न वर्जित होती है ॥ ९२ ॥

श्वश्रवादि के सुख-दुःख जानने का उपाय

श्वश्रूः सितोऽर्कः श्वशुरस्तनुस्तनुर्जामित्रपः स्याद्दयितो मनः शशी।
एतद्बलं संप्रतिभाव्य तान्त्रिकस्तेषां सुखं संप्रवदेद्विवाहतः ॥ ९३ ॥

अन्वयः—सितः श्वश्रूः, अर्कः श्वशुरः, तनुः [लग्नं] तनुः [शरीरं] जामित्रपः दयितः, शशी मनः स्यात्। तान्त्रिकः एतद्बलं संप्रतिभाव्य विवाहतः तेषां सुखं संप्रवदेत् ॥ ९३ ॥

शुक्र सासुसंज्ञक, सूर्य ससुरसंज्ञक, लग्न देहसंज्ञक, लग्न से सातवें स्थान का स्वामी पतिसंज्ञक और चन्द्रमा मनसंज्ञक होता है। विवाहकाल में इन ग्रहों के बल का विचार करके ज्योतिषी को चाहिए कि कन्या के ससुर आदि के सुख दुःख को कहे। विवाहकाल में यदि शुक्र बली हो तो कन्या की सासु को पतोहू की ओर से सुख, यदि सूर्य बली हो तो ससुर को सुख, यदि लग्न बली हो तो कन्या के शरीर को सुख, यदि लग्न से सातवें स्थान का स्वामी बली हो तो कन्या के पति को सुख और चन्द्रमा बली हो तो कन्या के मन को सुख देता है ॥ ९३ ॥

संकरवर्णों के विवाह का मुहूर्त्त

कृष्णे पक्षे सौरिकुजार्केऽपि च वारे
वर्ज्ये नक्षत्रे यदि वा स्यात्करपीडा।
संकीर्णानां तर्हि सुतायुर्धनलाभ-
प्रीतिप्राप्त्यै सा भवतीह स्थितिरेषा ॥ ९४ ॥

अन्वयः—कृष्णे पक्षे अपि च सौरिकुजार्के वारे वर्ज्ये नक्षत्रे वा यदि संकीर्णानां करपीडा स्यात् (तदा) सा (करपीडा) सुतायुर्धनलाभप्रीतिप्राप्त्यै भवति, इह एषा स्थितिः (स्यात्) ॥ ९४ ॥

कृष्णपक्ष में, शनैश्चर, मंगल वा रविवार में, और विवाह में वर्जित नक्षत्रों में यदि संकर वर्णों का विवाह हो तो उनको पुत्र, आयु, धन, लाभ और प्रीति की प्राप्ति होती है ॥ ९४ ॥

गान्धर्वादि विवाह और त्रिपदीचक्र में नक्षत्रशुद्धि

गान्धर्वादिविवाहेऽर्काद्वेदनेत्रगुणेन्दवः।
कुयुगाङ्गाग्निभूरामास्त्रिपद्यामशुभाः शुभाः ॥ ९५ ॥

अन्वयः—गान्धर्वादिविवाहे त्रिपद्यां अर्कात् (अर्कनक्षत्रात्) वेदनेत्रगुणेन्दवः कुयुगांगाग्निभूरामाः (क्रमात्) अशुभाः शुभाः (स्मृताः) ॥ ९५ ॥

गान्धर्वादि विवाह में सूर्य के नक्षत्र से चार नक्षत्र अशुभ, फिर दो नक्षत्र शुभ, फिर तीन नक्षत्र अशुभ, फिर एक नक्षत्र शुभ, फिर एक नक्षत्र

अशुभ, फिर चार नक्षत्र शुभ, फिर छः नक्षत्र अशुभ, फिर तीन नक्षत्र शुभ, फिर एक नक्षत्र अशुभ, फिर तीन नक्षत्र शुभ होते हैं। ऐसे ही त्रिपदीचक्र में भी ये नक्षत्र क्रम से अशुभ और शुभ होते हैं ॥ ९५ ॥

सूर्य के नक्षत्र से अशुभ और शुभ नक्षत्र

४	२	३	१	१	४	६	३	१	३
अ०	शु०	अ०	शु०	अ०	शु०	अ०	शु०	अ०	शु०

विवाह से पूर्व होनेवाले कार्यों का मुहूर्त्त

विधोर्बलमवेक्ष्य वा दलनकण्डनं वारकं
गृहांगणविभूषणान्यथ च वेदिकामण्डपान् ।
विवाहविहितोडुभिर्विरचयेत्तथोद्वाहतो न
पूर्वमिदमाचरेत्त्रिनवषण्मिते वासरे ॥ ९६ ॥

अन्वयः—विधोः बलं अवेक्ष्य विवाहविहितोडुभिः दलनकण्डनं वारकं गृहाङ्गणविभूषणानि (कार्याणि) अथ वेदिकामण्डपान् च विरचयेत् तथा उद्वाहतः पूर्वं त्रिनवषण्मिते वासरे इदं (पूर्वोक्तं कर्म) न आचरेत् ॥ ९६ ॥

विवाह के लिए जो नक्षत्र शुभ कहे गये हैं उन नक्षत्रों में तथा वर-कन्या के चन्द्रबल को विचारकर विवाह दिन से पूर्व तीसरे, छठे, नवें दिन को छोड़ अन्य दिनों में, आटा पीसना, दाल दलना, चावल कूटना, कलशस्थापन करना, घर और आँगन की सफाई करना, वेदी बनाना, मंडप छवाना आदि कार्य करे ॥ ९६ ॥

वेदी के लक्षण तथा मंडप का उद्वासन

हस्तोच्छ्राया वेदहस्तैः समन्तात्तुल्या वेदी सद्मनो वामभागे ।
युग्मे घस्रे षष्ठहीने च पञ्चसप्ताहे स्यान्मण्डपोद्वासनं सत् ॥ ९७ ॥

अन्वयः—सद्मनः वामभागे हस्तोच्छ्राया समन्तात् वेदहस्तैः तुल्या वेदी (कार्या), च षष्ठहीने युग्मे घस्रे पञ्चसप्ताहे मण्डपोद्वासनं सत् स्यात् ॥ ९७ ॥

घर के बायें भाग में हाथ भर ऊँची, हाथ भर लम्बी और हाथ भर चौड़ी वेदी बनाना चाहिए, और विवाह के दिन से छठे दिन को छोड़ सम दिनों में तथा विषम दिनों में पाँचवें या सातवें दिन मंडप का विसर्जन करना चाहिए ॥ ९७ ॥

मंडप के खम्भ गाड़ने का मुहूर्त्त

सूर्येऽङ्गनासिंहधटेषु शैवे स्तम्भोलिकोदण्डमृगेषु वायौ।
मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ विवाहे स्थाप्योऽग्निकोणे वृषयुग्मकर्के ॥ ९८ ॥

अन्वयः—अंगनासिंहधटेषु (स्थिते) सूर्ये शैवे (ईशानकोणे) अलिकोदण्डमृगेषु वायौ, मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ वृषयुग्मकर्के अग्निकोणे विवाहे स्तम्भः स्थाप्यः ॥ ९८ ॥

कन्या, सिंह और तुला में सूर्य के स्थित रहते घर के ईशानकोण में; वृश्चिक, धनु, मकर में स्थित रहते वायव्यकोण में; मीन, कुम्भ, मेष में स्थित रहते नैर्ऋत्यकोण में और वृष, मिथुन, कर्क में स्थित रहते आग्नेय-कोण में खम्भ गाड़ना चाहिए ॥ ९८ ॥

स्तम्भचक्र

सिंह	कन्या	तुला	ईशान
वृश्चिक	धन	मकर	वायव्य
कुम्भ	मीन	मेष	नैर्ऋत्य
वृष	मिथुन	कर्क	आग्नेय

गोधूलिप्रशंसा

नास्यामृक्षं न तिथिकरणं नैव लग्नस्य चिन्ता
नो वारो न च लवविधिर्नो मुहूर्त्तस्य चर्चा।
नो वा योगो न मृतिभवनं नैव जामित्रदोषो
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता ॥ ९९ ॥

अन्वयः—अस्यां (गोधूल्यां) ऋक्षं न (चिन्त्यं) तिथिकरणं न, लग्नस्य चिन्ता नैव, वा वारः न, च लग्नविधिः न, मुहूर्तस्य चर्चा नो, नो वा योगः, मृतिभवनं नैव, जामित्र-दोषः नैव, (यतः) सा गोधूलिः मुनिभिः सर्वकार्येषु शस्ता उदिता ॥ ९९ ॥

सम्पूर्ण कार्यों में गोधूलि को मुनियों ने ऐसी शुभ कही है कि इसमें नक्षत्र, तिथि, करण, वार नवांशविधान, योग, आठवें स्थान की शुद्धि, जामित्रदोष ये सब विशेष नहीं विचारे जाते। लग्न का भी विशेष विचार नहीं किया जाता, और मुहूर्त्त को तो कुछ चर्चा ही नहीं है। इस श्लोक का तात्पर्य यह है कि बहुत से सुयोगों के रहते कोई एक कुयोग भी हो तो गोधूलि में विवाह शुभ होता है। अथवा अन्य समय के लग्न में सब सुयोग ही हों और गोधूलि की लग्न में कुछ दोष भी हो तो गोधूलि ही श्रेष्ठ होती

है। अथवा पूर्व देशों में तथा कलिंग देश में गोधूलि मुख्य होती है। अथवा गांधर्वविवाह तथा वैश्य आदि के विवाह में गोधूलि श्रेष्ठ है। अथवा कोई शुभ लग्न न हो और कन्या युवती हो गई हो तो विधवा आदि भारी दोषों को छोड़कर गोधूलि में विवाह श्रेष्ठ होता है ॥ ९९ ॥

समयभेद से गोधूलिकाल

पिण्डीभूते दिनकृति हेमन्ततौं स्यादर्धास्ते तपसमये गोधूलिः ।
संपूर्णस्ते जलधरमालाकाले त्रेधा योज्या सकलशुभे कार्यादौ ॥ १०० ॥

अन्वयः—हेमन्ततौं दिनकृति (सूर्ये) पिण्डीभूते (सति), तपसमये अर्धास्ते (सति) जलधरमालाकाले सम्पूर्णास्ते [सूर्ये सति] गोधूलिः स्यात्, एवं त्रेधा [गोधूलिः] सकलशुभकार्यादौ योज्या ॥ १०० ॥

हेमन्त ऋतु से यहाँ प्रयोजन शीतकाल से है, जाड़े के चार महीनों में कुहिरा आदि से ढककर सायंकाल में जब सूर्य भात के गोले के समान स्वच्छ तेजरहित देख पड़े तब, और चैत्रादि गर्मी के चार महीनों में सूर्य के आधे अस्त हो जाने पर और वर्षाकाल अर्थात् श्रावण आदि चार महीनों में सूर्य के सम्पूर्ण अस्त हो जाने पर गोधूलि होती है। यह गोधूलि का समय संपूर्ण कार्यों में शुभ होता है। गोधूलिपद का अर्थ यह है कि जब सायं काल में इकट्ठी होकर वन से घर की ओर आती हुई गौओं के खुरों से उठी हुई धूलि से आकाश भर जाता है, उस समय का नाम गोधूलि काल है ॥ १०० ॥

गोधूलि समय में त्याज्य दोष

अस्तं यात गुरुदिवसे सौरे सार्के लग्नान्मृत्यौ रिपुभवने लग्ने चेन्दौ ।
कन्यानाशस्तनुमदमृत्युस्थे भौमे वोढुर्लाभे धनसहजे चन्द्रे सौख्यम् ॥ १०१ ॥

अन्वयः—गुरुदिवसे अस्तं याते (सूर्ये), सौरे सार्के गोधूलिः भवति लग्नात् मृत्यौ रिपुभवने, च लग्ने इन्दौ कन्यानाशः स्यात् तथा तनुमदमृत्युस्थे भौमे वोढुः मृत्युः स्यात्, लाभे धनसहजे चन्द्रे (सति) सौख्यं भवेत् ॥ १०१ ॥

बृहस्पति के दिन सूर्यास्त होने के बाद और शनैश्चर के दिन सूर्यास्त होने के पूर्व गोधूलि शुभ होती है। बृहस्पति के दिन सूर्यास्त से पूर्व अर्द्धयाम दोष और शनैश्चर के दिन सूर्यास्त के बाद कुलिक दोष रहता है, इसलिए इन दोनों कालों की गोधूलि निषिद्धि होती है। लग्न से आठवें या छठे स्थान में अथवा लग्न में चन्द्रमा के स्थित रहते कन्या की

मृत्यु तथा सातवें या आठवें स्थान में अथवा लग्न में मंगल के स्थित रहते वर की मृत्यु होती है, इसलिए गोधूलिकाल में ऐसा लग्न निषिद्ध होता है। लग्न से ग्यारहवें, दूसरे या तीसरे स्थान में चन्द्रमा के स्थित रहते कन्या और वर दोनों को सौख्य होता है, इसलिए गोधूलिकाल में ऐसा लग्न श्रेष्ठ होता है ॥ १०१ ॥

सूर्य की स्पष्टगति

मेषादिगेऽर्केऽष्टशरा ५८ नागाक्षाः ५७
सप्तेषवः ५७ सप्तशरा ५७ गजाक्षाः ५८ ।
गोऽक्षाः ५९ खतर्काः ६० कुरसाः ६१ कुतर्काः ६१
क्वङ्गानि ६१ षष्टि ६० र्नवपञ्च ५९ भुक्तिः ॥ १०२ ॥

अन्वयः—मेषादिगे अर्के अष्टशराः नगाक्षाः सप्तेषवः, सप्तशराः, गजाक्षाः, गोऽक्षाः, खतर्काः, कुरसाः, कुतर्काः, क्वंगानि, षष्टिः, नवपञ्च, भुक्तिः ॥ १०२ ॥

मेषादि बारह राशियों में इस क्रम से सूर्य की ५८ । ५७ । ५७ । ५७ । ५८ । ५९ । ६० । ६१ । ६१ । ६१ । ६० । ५९ । कला गति होती है ॥ १०२ ॥

सूर्यस्पष्ट करने की रीति

संक्रान्तियातघस्राद्यैर्गतिर्निघ्ना खषट् ६० हृता ।
लब्धेनांशादिना योज्यं यातर्क्षं स्पष्टभास्करः ॥ १०३ ॥

अन्वयः—संक्रान्तियातघस्राद्यैः गतिः निघ्ना खषट्हृता लब्धेन अंशादिना यातर्क्षं योज्यं, स स्पष्टभास्करः स्यात् ॥ १०३ ॥

जिस दिन जितने दण्ड-पल पर सूर्य की संक्रान्ति लगी हो उस दिन से इष्टकाल पर्यन्त जितने दण्ड-पल हों उनको पूर्व कही हुई कलारूप गति से गुणकर उसमें साठ का भाग दे। जो कुछ अंशादि लब्ध हों उसमें बीती हुई संक्रान्ति की राशि जोड़ दे तो तात्कालिक सूर्य स्पष्ट होता है। उदाहरण—यथा संवत् १९४९ माघ कृष्ण दशमी बृहस्पतिवार को १२ दण्ड ६ पल पर मकर की संक्रान्ति लगी और माघ कृष्ण त्रयोदशी रविवार को २५ दण्ड ६ पल पर सूर्य स्पष्ट करना है। इसलिए संक्रान्तिकाल से इष्टकाल तक बीते हुए ३ दिन १३ दण्ड ०० पल को पूर्व कही हुई मकर संक्रान्ति की ६० कलारूप गति से गुणकर उसमें ६० का भाग देने से ३

अंश १३ कला ०० विकला लब्ध हुए। इनमें बीती हुई धनु संक्रान्ति की नवीं राशि जोड़ी गई, तब ९ । ३ । १३ । ०० हुए। यही तात्कालिक स्पष्ट सूर्य हुआ ॥ १०३ ॥

लग्नघटिकासाधनार्थं लग्नभुक्तांशसाधन

तनोरिष्टांशकात्पूर्वं नवांशा दशसंगुणाः ।
रामाप्ता लब्धमंशाद्यं तनोर्वर्गादिसाधने ॥ १०४ ॥

अन्वयः—तनोः इष्टांशकात् पूर्वं नवांशाः दशसंगुणाः रामाप्ताः लब्ध वर्गादिसाधने तनोः अंशाद्यं (स्यात्) ॥ १०४ ॥

विवाहादि शुभ कार्य के लिए जिस बली शुभ लग्न का जो दोषरहित विहित नवांश विचारा गया हो उससे पूर्व जितने नवांश उस लग्न के हों उनकी संख्या को दश से गुणाकर तीन का भाग देने से जो कुछ लब्ध हों वही उस लग्न के तात्कालिक भुक्त अंश-कला आदि होंगे और वही उस लग्न के गृह होरा द्रेष्काणादि पूर्वोक्त षड्वर्गसाधन में काम आते हैं। उदाहरण—तथा मिथुन लग्न का सातवाँ नवांश शुद्ध विचारा गया तो उससे पूर्व नवांशों की छः संख्या को दश से गुणा तो साठ हुए। इनमें तीन का भाग देने से २० । ०० लब्ध हुए। यही मिथुन लग्न के भुक्तांशादि होंगे ॥ १०४ ॥

लग्न और सूर्य से इष्टकाल साधन

अर्काल्लग्नात् सायनाद्भोग्यभुक्तै-
र्भागैर्निघ्नात् स्वोदयात् खाग्निभक्तात् ।
भोग्यं भुक्तं चान्तरालोदयाढ्यं
षष्ट्या भक्तं स्वेष्टनाड्यो भवेयुः ॥ १०५ ॥

अन्वयः—सायनात् अर्कात् लग्नात् भोग्यभुक्तैः भागैः निघ्नात् स्वोदयात् खाग्नि-भक्तात् भोग्यं भुक्तं (तत्) अन्तरालोदाढ्यं षष्ट्या भक्तं तदा स्वेष्टनाड्यः भवेयुः ॥ १०५ ॥

अयनांशसंयुक्त तात्कालिक सूर्य के भोग्य अंशों से और अयनांशसंयुक्त तात्कालिक लग्न के भुक्त अंशों से गुणे हुए अपने देश के मेषादि लग्नों के मान में तीस का भाग देने से लब्ध हुआ सूर्य का भोग्य अर्थात् भोग करने के लिए बाकी, और लग्न का भुक्त, अर्थात् भोग किया हुआ पलात्मक काल होता है। इन दोनों को तथा सूर्य और लग्न के मध्य लग्नों के पलात्मक प्रमाण को

जोड़कर उसमें साठ का भाग देने से लब्ध हुए इष्टकालिक दण्ड पल होते हैं। उदाहरण—यथा शाके १८१४ माघ कृष्ण दशमी बृहस्पतिवार को २५ दण्ड ६ पल तात्कालिक सूर्य के ९ । ३ । १३ । ०० स्पष्ट में अयनांश जोड़ने से ९ । २६ । ३ । ०० यह सूर्य का सायन स्पष्ट हुआ। इसके २६ । ३ । ०० अंशादि को ३० अंशों में घटाने पर शेष ३ । ५७ । ०० सूर्य के भोग्य अंशादि हुए। मकरराशि में रहने के कारण सूर्य के ३ । ५७ । ०० भोग्य अंशों से लखनऊ की ३०३ पलात्मक मकरोदय प्रमाण को गुणने पर ११९६ । ५१ । ०० पलादि हुए। इनमें ३० तीस का भाग देने से ३९ । ५३ लब्ध सायन सूर्य के भोग्य पलादि हुए। ऐसे ही तात्कालिक २ । २६ । ४० । ०० लग्न में २२ । ५० अयनांश जोड़ने से ३ । १९ । ३० । ०० सायन लग्न हुई। कर्कराशि होने के कारण इसके १९ । ३० । ०० भुक्तांशों से लखनऊ की पलात्मक ३४३ कर्कोदय प्रमाण को गुणने से ६६८८ । ३० । ०० पलादि हुए। इनमें ३० का भाग देने से २२२ । ५७ लब्ध सायन लग्न के भुक्त पलादि हुए। सूर्य के ३९ । ५३ भोग्य और लग्न के २२२ । ५७ भुक्त पलों को तथा मकर और कर्क के मध्य की कुम्भ के २५१, मीन के २१८, मेष के २१८, वृष के २५१, मिथुन के ३०३ पलात्मक प्रमाणों को जोड़ने से १५०४ पल हुए। इनमें साठ का भाग देने से २५ । ४ लब्ध इष्ट दण्ड हुए। वहाँ सूर्यादि प्रतिविकलादि छूटने के कारण इष्ट में दो पलों का भेद हुआ है ॥ १०५ ॥

लखनऊ का लग्नमान

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
२१८	२५१	३०३	३४३	३४७	३३८	३३८	३४७	३४३	३०३	२५१	२१८

इष्टकाल बनाने की विशेष रीति

चेल्लग्नार्कौ सायनावेकराशौ तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्निभक्तः ।
स्वेष्टः कालो लग्नमूनं यदार्काद्राशौ शेषोऽर्कात्सषड्भं निशायाम् ॥ १०६ ॥

अन्वयः—चेत् सायनौ लग्नार्कौ एकराशौ (तदा) तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्निभक्तः स्वेष्टः कालः (स्यात्), यदा लग्नं अर्कात् ऊनं (तदा) रात्रेः शेषः स्यात् तथा, निशायां सषड्भात् अर्कात् ॥ १०६ ॥

यदि अयनांशयुक्त लग्न और अयनांशयुक्त सूर्य दोनों एक ही राशि में हों तो दोनों के आपस में घटने पर शेष से गुणी हुई अपने देश की उदय में तीस का भाग देने से जो लब्ध हो, वह सूर्योदय से लेकर इष्टकाल होता है। यदि सायन लग्न तथा सूर्य ये दोनों एक ही राशि में स्थित हों और सूर्य के अंशों से लग्न के अंश कम हों तो उन कम अंशों से गुणी हुई अपने देश की उदय में तीस का भाग देने से जो लब्ध हो वह सूर्योदय से पूर्व रात्रि का बाकी काल होता है। इसको साठ में घटाने से शेष पूर्व दिन के सूर्योदय से लेकर इष्टकाल होता है। रात्रि में सूर्य की राशि में छः जोड़कर उक्त रीति करने पर इष्टकाल स्पष्ट होता है। एक राशि में स्थित सूर्य से अधिक लग्न का उदाहरण—यथा ९ । २५ । ६ । ३६ इस लग्न में ९ । १६ । ५९ । २६ सूर्य को घटाया तो ० । ८ । ७ । १० शेष रहे। इन शेष अंकों को लग्न तथा सूर्य के मकरराशि में रहने के कारण मकर की ३०३ उदय से गुण दिया, तो २४६० । ११ । ३० हुए। इनमें तीस का भाग दिया तो ८२ । २२ । १ पलादि लब्ध हुए। सूर्योदय से लेकर यही इष्टकाल हुआ। कम लग्न का उदाहरण—यथा ९ । २६ । ५० । ४० सूर्य में ९ । २२ । ४५ । ३६ लग्न को घटाया तो ० । ४ । ५ । ४ शेष रहे। इनको मकर की स्वदेशी ३०३ उदय से गुण दिया तो २२३५ । ३५ । १२ हुए। इनमें तीस का भाग दिया तो ४१ । १५ । १० पलादि लब्ध हुए। सूर्योदय से पूर्व इतना रात्रिशेष हुआ। इसको साठ में घटाया तो ५९ । १८ । ४४ । ५० दण्डादि शेष रहे। यही इष्टकाल हुआ। रात्रि में इष्टकाल का उदाहरण तो पूर्व श्लोक में कहे हुए उदाहरण के सायन सूर्य में छः राशि जोड़कर उक्त क्रिया करने से हो जायगा, इसलिये यहाँ नहीं कहा ॥ १०६ ॥

शुभ कार्यों में अवश्य त्यागने योग्य दोष

उत्पातान्सह पातदग्धतिथिभिर्दुष्टांश्च योगांस्तथा
चन्द्रेज्योशनसामथास्तमयनं तिथ्याः क्षयर्द्धी तथा ।
गण्डान्तं च सविष्टिसंक्रमदिनं तन्वंशपास्तं तथा
तन्वंशेशविधूनथाष्टरिपुगान्पापस्य वर्गास्तथा ॥ १०७ ॥
सेन्दुक्रूरखगोदयांशमुदयास्ताशुद्धिचण्डायुधान्
खार्जूरं दशयोगयोगसहितं जामित्रलत्ताव्यधम् ।

बाणोपग्रहपापकर्त्तरि तथा तिथ्यर्क्षयोगोत्थितं
दुष्टं योगमथार्धयामकुलिकाद्यान्वारदोषानपि ॥ १०८ ॥
क्रूराक्रान्तविमुक्तभं ग्रहणभं यत्क्रूरगन्तव्यभं
त्रेधोत्पातहतं च केतुहतभं सन्ध्योदितं भं तथा ।
तद्वच्च ग्रहभिन्नयुद्धगतभं सर्वानिमान्संत्यजे-
दुद्वाहे शुभकर्मसु ग्रहकृतान् लग्नस्य दोषानपि ॥ १०९ ॥

अन्वयः—पातदग्धतिथिभिः सह उत्पातान्, तथा दुष्टान् योगान् अथ चन्द्रेज्योशनसां अस्तमयनं तथा तिथ्याः क्षयर्धी, च सविष्टिसंक्रमदिनं, गण्डान्तं, तथा तन्वंशपास्तं, अथ तन्वंशेशविधून् तथा अष्टरिपुगान् पापस्य वर्गान् सेन्दुक्रूरखगोदयांशं उदयास्तशुद्धिचण्डायुधान्, दशयोगयोगसहितं खार्जूरं जामित्रलत्ताव्यधम्, तथा बाणोपग्रहपापकर्तरि, तिथ्यर्क्षयोगोत्थितं दुष्टं योगं अथ अर्धयामकुलिकाद्यान् वारदोषान् अपि [तथा] क्रूराक्रान्तविमुक्तभं, ग्रहणभं, तथा यत् क्रूरगन्तव्यभं, त्रेधोत्पातहतं च पुनः केतुहतभं तथा सन्ध्योदितं भं च (पुनः) तद्वत् ग्रहभिन्नयुद्धगतभं, ग्रहकृतान् लग्नस्य दोषान् अपि इमान् सर्वान् उद्वाहे शुभकर्मसु सन्त्यजेत् ॥ १०७-१०९ ॥

दिग्दाह प्रसिद्ध वृक्ष या मकान आदि का अकस्मात् गिरना, पानी का बरसना, उल्कापात, बड़ी आँधी का आना, बिजली का गिरना, बिना मेघ का गरजना, भूकम्प आना, चन्द्र-सूर्य में मण्डल होना, सियारी का चिल्लाना, और भी ग्रामसम्बन्धी उत्पात तथा क्रान्तिसाम्य, दग्धातिथि, व्यतीपात, वैधृति इत्यादि दुष्टयोग, चन्द्र, शुक्र, बृहस्पति का अस्त, दक्षिणायन, तिथि की हानि-वृद्धि, नक्षत्र, तिथि, लग्न के गण्डान्त, भद्रा, संक्रान्ति दिन, लग्न और नवांश के स्वामी का अस्त, लग्न से आठवें वा छठे स्थान में स्थित लग्न वा नवांश का स्वामी, लग्न में पापग्रहों के गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिशांश, चन्द्रमा वा क्रूरग्रह से युक्त लग्न वा नवांश, लग्नशुद्धि, सातवें स्थान की शुद्धि, पात और खार्जूर दोष, दशयोगों के सहित जामित्र वा लत्तादोष, वेध दोष, बाणदोष, उपग्रहदोष, पापकर्त्तरीदोष तथा तिथि-नक्षत्र से, तिथि-वार से, नक्षत्र-वार से, वा तिथि-नक्षत्र-वार से उत्पन्न दुष्योग, अर्द्धयाम, कुलिकादि वारदोष, क्रूरग्रहयुक्त नक्षत्र, क्रूरग्रह का भोग किया नक्षत्र, जिसमें क्रूरग्रह आनेवाला हो या सूर्य-चन्द्रग्रहण हुआ हो वह नक्षत्र, जिसमें पूर्वोक्त उत्पात हुए हों या केतु का उदय हुआ हो वह नक्षत्र, सूर्य के अस्तकाल में प्रारम्भ होनेवाला, अर्थात् सूर्य के नक्षत्र से चौदहवाँ नक्षत्र, जिसमें ग्रहों का युद्ध हुआ

हो वह नक्षत्र और लग्न के दोष इन सबका विवाहादि सम्पूर्ण शुभ कार्यों में त्याग करे ॥ १०७-१०९ ॥

कन्यादि के तेल आदि लगाने की संख्या

मेषादिराशिजवधूवरयोर्वटोश्च तैलादिलापनविधौ कथितात्र संख्या ।
शैला दिशः शरदिगक्षनगाद्रिबाणबाणाक्षबाणगिरयो ७ । १० । ५
१० । ५ । ७ । ७ । ५ । ५ । ५ ।५ । ७ विबुधैस्तु कश्चित् ॥ ११० ॥
इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ विवाहप्रकरणं समाप्त ॥ ६ ॥

अन्वयः—अत्र मेषादिराशिजवधूवरयोः वटोः (बालकस्य) च तैलादिलापनविधौ कैश्चित् विबुधैः (क्रमेण) शैलाः दिशः शरदिगक्षनगाद्रिबाणबाणाक्षबाणगिरयः (इति) संख्या कथिता ॥ ११० ॥

मेषादि राशियों में उत्पन्न कन्या, वर और जिसका यज्ञोपवीत होनेवाला हो उसके तेल-उबटन आदि लगाने में कुछ पण्डितों ने ७।१०।५।१०।५।७।७।५। ५।५।५।७ यह संख्या कही है, अर्थात् मेष राशिवालों को विवाह और यज्ञोपवीत दिन से पूर्व सात दिन, वृष राशिवालों को दश दिन, मिथुन राशिवालों को पाँच दिन, कर्क राशिवालों को दश दिन, सिंह राशिवालों को पाँच दिन, कन्या राशिवालों को सात दिन, तुला राशिवालों को सात दिन, वृश्चिक राशिवालों को पाँच दिन, धनु राशिवालों को पाँच दिन, मकर राशिवालों को पाँच दिन, कुम्भ राशिवालों को पाँच दिन, मीन राशिवालों को सात दिन तेल और उबटन लगाना चाहिए ॥ ११० ॥

वधूप्रवेशप्रकरण

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले ।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम् ॥ १ ॥

अन्वयः—विवाहात् अष्टिदिनान्तराले समाद्रिपञ्चाङ्कदिने वधूप्रवेशः शुभः स्यात्, परस्तात् [षोडशदिनेभ्यः पश्चात्] विषमाब्दमासदिने शुभः स्यात्, अथ अक्षवर्षात् परतः यथेष्टम् [यदा कदाचित् शुभदिने] वधूप्रवेशः शुभः (स्यात्) ॥ १ ॥

विवाह के दिन से सोलह दिन के भीतर सम अर्थात् दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें, बारहवें, चौदहवें तथा सातवें, पाँचवें, नवें दिन में और सोलह

दिनों के बाद पहिले, तीसरे, पाँचवें वर्ष में, और पहिले, तीसरे, पाँचवें, सातवें, नवें, गेरहवें मास में और पाँच वर्ष के ऊपर अपनी इच्छा के अनुसार सम-विषम वर्ष मास दिन का विचार न करके अथवा हो सके तो करके भी गोचर में वर की जन्मराशि से सूर्य, चन्द्रमा, बृहस्पति के बली रहते, दुष्ट भद्रा आदि दोषरहित काल में किया हुआ वधूप्रवेश शुभ होता है ॥ १ ॥

वधूप्रवेश का मुहूर्त्त

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः ॥ २ ॥

अन्वयः—ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले वधूप्रवेशः सत् रिक्तारार्के नेष्टः, परैः बुधे अपि नेष्टः ॥ २ ॥

रोहिणी, तीनों उत्तरा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा और स्वाती नक्षत्र में किया हुआ वधूप्रवेश शुभ होता है। चौथि, नवमी और चतुर्दशी तिथि में; रविवार और मंगलवार में तथा कुछ आचार्यों के मत से बुध दिन में भी अशुभ होता है ॥ २ ॥

विवाह के बाद प्रथम वर्ष के महीनों में स्वामी के घर में स्त्री के रहने का फल

ज्येष्ठे पतिज्येष्ठमथाधिके पतिं हन्त्यादिमे भर्तृगृहे वधूः शुचौ ।
श्वश्रूं सहस्ये श्वशुरं क्षये तनुं तातं मधौ तातगृहे विवाहतः ॥ ३ ॥
इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ वधूप्रवेशप्रकरणं समाप्तम् ॥ ७ ॥

अन्वयः—विवाहतः आदिमे ज्येष्ठे भर्तृगृहे स्थिता वधूः पतिज्येष्ठं, अथ आदिमे अधिके [अधिमासे] पतिं तथा आदिमे शुचौ श्वश्रूं आदिमे सहस्ये श्वशुरं, आदिमे क्षये [क्षयमासे] तनुं हन्ति । तथा आदिमे मधौ तातगृहे स्थिता वधूः तातं हन्ति ॥ ३ ॥

विवाह होने के बाद पहिले ज्येष्ठ में यदि स्वामी के घर में स्त्री रहे तो स्वामी के ज्येष्ठ भाई को, पहिले मलमास में स्वामी को, पहिले आषाढ़ में सासु को, पौष मास में ससुर को, पहिले क्षयमास में अपनी देह को और पिता के घर में यदि पहिले चैत्र में रहे तो पिता को नष्ट करती है, अर्थात् विवाह के बाद पहिले ज्येष्ठ, मलमास, आषाढ़, पूस और क्षयमास में स्त्रियों को

पिता के घर में और पहिले चैत्र मास में पति के घर में रहना चाहिए। जिन महीनों में जहाँ रहने से जिन लोगों को दोष कहा है, उस स्त्री के यदि वे लोग जीवित न हों तो उन महीनों में वहाँ रहने का कोई दोष नहीं है ॥ ३ ॥

द्विरागमनप्रकरण

चरेदथौजहायने घटालिमेषगे रवौ रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे ।
नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके द्विरागमं लघुध्रुवे चरेऽस्रपे मृदूडुभिः ॥ १ ॥

अन्वयः—अथ (वधूप्रवेशानन्तरं) ओजहायने घटालिमेषगे रवौ, रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके लघुध्रुवे चरे अस्रपे मृदूडुभिः द्विरागमं चरेत् ॥ १ ॥

विवाह के दिन से पहिले, तीसरे, पाँचवें आदि विषम वर्षों में तथा कुम्भ, वृश्चिक, मेष इन राशियों में से किसी में सूर्य के रहते; सूर्य और बृहस्पति के शुद्ध रहते; सोमवार, बुध, बृहस्पति या शुक्रवार में; मिथुन, मीन, कन्या, तुला वा वृष लग्न में तथा अश्विनी, पुष्य, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, मूल, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती नक्षत्र में स्त्री दूसरी बार अपने स्वामी के घर में जाय तो शुभ होता है ॥ १ ॥

सम्मुख और दक्षिण शुक्र का दोष

दैत्येज्यो ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्याद्गच्छेयुर्नहि शिशुगर्भिणीनवोढाः ।
बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा ॥ २ ॥

अन्वयः—यदि दैत्येज्यः अभिमुखदक्षिणे स्यात् (तदा) शिशुगर्भिणीनवोढाः न गच्छेयुः । हि चेत् [यदि] बालः व्रजति तदा विपद्यते, नवोढा व्रजति तदा वन्ध्या भवति, च गर्भिणी अगर्भा भवति ॥ २ ॥

यदि शुक्र सामने या दाहिनी ओर पडते हों तो बालकयुक्त, गर्भवती और नववधू स्त्रियाँ दूसरी बार अपने पति के घर को न जायँ; क्योंकि सम्मुख या दक्षिण शुक्र के रहते स्वामी के घर जानेवाली बालकयुक्त स्त्री का बालक मर जाता है, गर्भवती का गर्भ नष्ट हो जाता है और नववधू स्त्री का यदि द्विरागमन होता है तो वह वन्ध्या होती है ॥ २ ॥

शुक्रदोष का परिहार

नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः ।
नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्नहि ॥ ३ ॥
पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्पसंभवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसंभवः ।
भृग्वंगिरोवत्सवशिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥ ४ ॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ द्विरागमनप्रकरणं समाप्तम् ॥ ८ ॥

अन्वयः—नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवः दोषकृत् नहि भवति । चेत् पित्र्ये गृहे स्त्रीणां कुचपुष्पसम्भवः तदा प्रतिशुक्रसम्भवः दोषः न भवेत् । तथा भृग्वङ्गिरोवत्सवसिष्ठकश्यपात्रीणां तथा भरद्वाजमुनेः कुले प्रतिशुक्रसम्भवः दोषः न (स्यात्) ॥ ३-४ ॥

नगर को जाने में, देश या गाँव में किसी प्रकार का उपद्रव होने पर, देश या गाँव छोड़ने में तथा विवाह, देवयात्रा, तीर्थयात्रा, राजदण्ड और वधूप्रवेश में सम्मुख शुक्र दोषकारक नहीं होता। पिता के ही घर में जिनके पूरे स्तन तथा रजोदर्शन हुआ हो, अर्थात् जवानी हो गई हों, उन स्त्रियों को सम्मुख शुक्र का दोष नहीं होता। ऐसे ही भृगु, अंगिरा, वत्स, वशिष्ठ, कश्यप, अत्रि और भरद्वाज मुनि के कुल में सम्मुख शुक्र का दोष नहीं होता ॥ ३-४ ॥

अग्न्याधानप्रकरण

—:o:—

स्यादग्निहोत्रविधिरुत्तरगे दिनेशे मिश्रध्रुवान्त्यशशिशक्रसुरेज्यधिष्ण्ये ।
रिक्तासु नो शशिकुजेज्यभृगौ न नीचे नास्तंगते न विजिते न च शत्रुगेहे ॥ १॥

अन्वयः—उत्तरगे दिनेश, मिश्रध्रुवान्त्यशशिशक्रसुरेज्यधिष्ण्ये, अग्निहोत्रविधिः (शुभः) स्यात् । रिक्तासु नो, शशिकुजेज्यभृगौ नीचे न, अस्तं गते न, विजिते न, च शत्रुगृहे स्थिते न (शस्तः) ॥ १ ॥

उत्तरायण सूर्य के रहते कृत्तिका, विशाखा, रोहिणी, तीनों उत्तरा, रेवती, मृगशिरा, ज्येष्ठा व पुष्य नक्षत्र में अग्न्याधान हो तो शुभ होता है। चौथि, नवमी, चतुर्दशी तिथि में, और चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति और शुक्र अपने-अपने नीच स्थान में हों, अस्त हों, अन्य ग्रहों से पराजित हुए हों, अथवा शत्रु के स्थान में हों तो अग्न्याधान नहीं करना चाहिए ॥ १ ॥

लग्नशुद्धि

**नो कर्कनक्रझषकुम्भनवांशलग्ने नोऽब्जे तनौ रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे ।
केन्द्रर्क्षषट्त्रिभवगे च परैस्त्रिलाभषट्खस्थितैर्निधनशुद्धियुते विलग्ने ॥ २ ॥**

अन्वयः—कर्कनक्रझषकुम्भनवांशलग्ने (अग्निहोत्रविधिः) नो, अब्जे तनौ नो शुभः । रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे केन्द्रर्क्षषट्त्रिभवगे परैः (बुधशुक्रशनैश्चरैः) त्रिलाभषट्खस्थितैः निधनशुद्धियुते विलग्ने [सति अग्निहोत्रविधिः शुभः स्यात्] ॥ २ ॥

कर्क, मकर, मीन, कुम्भ लग्न में और इनके नवांशों में तथा लग्न में चन्द्रमा के (किसी के मत से शुक्र के भी) रहते अग्न्याधान नहीं करना चाहिए। पाँचवें, नवें, लग्न, चौथे, सातवें, दशवें और छठे स्थान में सूर्य, चन्द्रमा, बृहस्पति और मंगल हों, तीसरे, गेरहवें, छठे और दशवें स्थान में बुध, शुक्र, शनैश्चर, राहु और केतु हों, जन्मलग्न से आठवीं को छोड़ अन्य लग्न में, अथवा जिससे आठवें स्थान में कोई ग्रह हो उस लग्न में अग्न्याधान शुभ होता है ॥ २ ॥

अग्न्याधानकालिक लग्नवश से यज्ञकारक योग

**चापे जीवे तनुस्थे वा मेषे भौमेऽम्बरे द्युने ।
षट्त्र्यायेऽब्जे रवौ वा स्याज्जाताग्निर्यजति ध्रुवम् ॥ ३ ॥
इति मुहूर्त्तचिन्तामणावग्न्याधानप्रकरणं समाप्तम् ॥ ९ ॥**

अन्वयः—जीवे चापे तनुस्थे, वा भौमे मेषे (तनुस्थे), अम्बरे द्युने, वा अब्जे [चन्द्रे] षट् त्र्याये, वा रवौ षट्त्र्याये तदा जाताग्निः ध्रुवं यजति ॥ ३ ॥

धन राशि में स्थित बृहस्पति लग्न में हो, अथवा मेष राशि में स्थित मंगल लग्न में हो, अथवा मंगल लग्न से सातवें या दशवें स्थान में हो, अथवा चन्द्रमा लग्न से तीसरे, छठे या गेरहवें स्थान में हो अथवा सूर्य लग्न से तीसरे, छठे या गेरहवें स्थान में हो तो अग्न्याधान करनेवाला निश्चय करके ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ करता है ॥ ३ ॥

राजाभिषेकप्रकरण

**राजाभिषेकः शुभ उत्तरायणे गुर्विन्दुशुक्रैरुदितैर्बलान्वितैः ।
भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैर्नो चैत्ररिक्तारनिशामलिम्लुचे ॥ १ ॥**

अन्वयः—उत्तरायणे गुर्विन्दुशुक्रैः उदितैः, भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैः बलान्वितैः राजाभिषेकः शुभः (स्यात्)। चैत्ररिक्तारनिशामलिम्लुचे नो (शुभः स्यात्) ॥ १ ॥

उत्तरायण सूर्य के रहते तथा बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा ग्रहों के उदित रहते और मंगल, सूर्य, तात्कालिक लग्न का स्वामी, तात्कालिक दशा का स्वामी और जन्मलग्न का स्वामी बली हो तो राजाभिषेक शुभ होता है। चैत्रमास, मलमास, चौथि, नवमी, चतुर्दशी तिथि और मंगल दिन तथा रात्रि का समय अशुभ होता है, इसलिए इनमें राज्याभिषेक न करना चाहिए ॥ १ ॥

नक्षत्र तथा लग्नशुद्धि

शाक्रश्रवः क्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः शीर्षोदये वोपचये शुभे तनौ।
पापैस्त्रिषष्ठायगतैः शभग्रहैः केन्द्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थितैः ॥ २ ॥

अन्वयः—शाक्रश्रवः क्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः शीर्षोदये वा उपचये शुभे तनौ, पापैस्त्रिषष्ठायगतैः, शुभग्रहैः केन्द्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थितैः (राजाभिषेकः शुभः स्यात्) ॥२॥

ज्येष्ठा, श्रवण, हस्त, अश्विनी, पुष्य, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, रोहिणी, तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रों में; मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक वा कुम्भ लग्न में रहते अथवा जन्मलग्न वा जन्मराशि से तीसरी, छठी, गेरहवीं लग्न में और लग्न से तीसरे, छठे, गेरहवें स्थान में पापग्रहों के रहते तथा लग्न, चौथे, सातवें, दशवें, पाँचदें, नवें गेरहवें, दूसरे, तीसरे स्थान में शुभग्रहों के रहते राजाभिषेक शुभ होता है ॥ २ ॥

राजाभिषेक काल में ग्रहस्थित फल

पापैस्तनौ रुङ्निधने मृतिः सुते पुत्रार्तिरर्थव्ययगैर्दरिद्रता।
स्यात् खेऽलसो भ्रष्टपदो द्युनाम्बुगैः सर्वं शुभं केन्द्रगतैः शुभग्रहैः ॥ ३ ॥

अन्वयः—पापैः तनौ रुग्, निधने पापैः मृतिः, सुते पापैः पुत्रार्तिः, अर्थव्ययगैः पापैः दरिद्रता, खे पापैः अलसः, द्युनाम्बुगैः पापैः भ्रष्टपदः स्यात्, केन्द्रगतैः शुभग्रहैः सर्वं शुभम् स्यात् ॥ ३ ॥

पापग्रह लग्न में हो तो रोग, आठवें स्थान में हो तो मृत्यु, पाँचवें स्थान में हो तो पुत्र-क्लेश, दूसरे या बारहवें स्थान में हो तो निर्धनता दशवें स्थान में हो तो निरुद्योग, सातवें या चौथे स्थान में हो तो राज्यच्युत और पूर्ण चन्द्रमा यदि लग्न से छठे, आठवें, बारहवें स्थान में स्थित हो तो

राजा का मरण होता है। किन्तु यदि शुभग्रह केन्द्र में स्थित हो तो सब शुभ हो जाता है ॥ ३ ॥

सम्पत्ति तथा पृथ्वीस्थिति ये दो योग

गुरुर्लग्नकोणे कुजोऽरौ सितः खे स राजा सदा मोदते राजलक्ष्म्या।
तृतीयायगौ सौरिसूर्यौ खबन्ध्वोर्गुरुश्चेद्धरित्री स्थिरा स्यान्नृपस्य ॥ ४ ॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ राजाभिषेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ १० ॥

अन्वयः—[यस्य राजाभिषेकसमये] गुरुः लग्नकोणे, कुजः अरौ, सितः खे स राजा सदा राजलक्ष्म्या मोदते चेत् यदि सौरिसूर्यौ तृतीयायगौ, गुरुः खबन्ध्वोः तदा नृपस्य धरित्री स्थिरा स्यात् ॥ ४ ॥

जिस राजा के अभिषेककाल में बृहस्पति लग्न में या नवें, पाँचवें स्थान में, मंगल लग्न से छठे और शुक्र दशवें स्थान में स्थित हो वह राजा सदा राजलक्ष्मीयुक्त होकर आनन्द करता है। शनैश्चर लग्न से तीसरे, सूर्य गेरहवें और बृहस्पति चौथे या दशवें स्थान में स्थित हो तो उस राजा का राज्य सदा स्थिर रहता है ॥ ४ ॥

यात्राप्रकरण

यात्रायां प्रविदितजन्मनां नृपाणां दातव्यं दिवसमबुद्धजन्मनां च।
प्रश्नाद्यैरुदयनिमित्तमूलभूतैर्विज्ञाते ह्यशुभशुभे बुधः प्रदद्यात् ॥ १ ॥

अन्वयः—प्रविदितजन्मनां नृपाणां यात्रायां दिवसं दातव्यम्। अबुद्धजन्मनां नृपाणां च प्रश्नाद्यैः उदयनिमित्तमूलभूतैः अशुभशुभे विज्ञाते बुधः यात्रायां दिवसं प्रदद्यात् ॥ १ ॥

किसी कार्य की सिद्धि के लिए अन्य देशादि में जाने का नाम यात्रा है। वह कार्यभेद से दो प्रकार की होती है। एक वह जो कि आगे कहे हुए योग, लग्न और जन्मकुण्डली में राजयोग, शुभलग्न के रहते होती है, यथा समरयात्रा। और दूसरी वह जो कि साधारण पंचांगादि की शुद्धि रहते होती है। यथा द्रव्यादि के कमाने या तीर्थादि करने के लिए साधारण यात्रा। इन दोनों के विशेष विचार करने की इच्छा से पहिले उसके अधिकारी को कहते हैं।

पण्डितों को चाहिए कि जिनके जन्मकालिक शुभाशुभ राजयोगादि जाने गये हों उन राजाओं को, और जिनका जन्मकाल न जाना गया हो, प्रश्नकालिक लग्न वा शकुनादि द्वारा उनके शुभाशुभ राजयोगादि को जानकर उन राजाओं को भी यदि बताने के योग्य हो तो यात्रा करने के योग्य दिन बतावे। यहाँ राजाओं के सिवा साधारण अन्य मनुष्य भी ग्रहण किये जाते हैं; क्योंकि यात्रा के बिना किसी का काम नहीं चल सकता इसलिए राजा से लेकर साधारण मनुष्य तक सब यात्रा करने के अधिकारी हैं ॥ १ ॥

प्रश्नकालिक शुभ यात्रायोग

जननराशितनू यदि लग्नगे तदधिपौ यदि वा तत एव वा।
त्रिरिपुखायगृहं यदि वोदये विजय एव भवेद्वसुधापतेः ॥ २ ॥
रिपुजन्मलग्नभमथाधिपौ तयोस्ततएववोपचयसद्म चेद् भवेत्।
हिबुके द्यूनेऽथ शुभवर्गकस्तनौ यदि मस्तकोदयगृहं तदा जयः ॥ ३ ॥
यदि पृच्छतनौ वसुधा रुचिरा शुभवस्तु यदि श्रुतिदर्शनगम्।
यदि पृच्छति चादरतश्च शुभग्रहदृष्टयुतं चरलग्नमपि ॥ ४ ॥

अन्वयः—यदि जननराशितनू लग्नगे, यदि वा तदधिपौ, वा तत एव त्रिरिपुखायगृहं यदि वा उदये: तदा वसुधापतेः विजय एव भवेत्। रिपुजन्मलग्नभं अथवा तयोः अधिपौ, वा ततः एव उपचयसदम् चेत् हिबुके द्यूने भवेत् तदा वसुधापतेः जयः, अथ यदि तनौ शुभवर्गकः वा मस्तकोदयगृह तदा जयः स्यात् यदि पृच्छतनौ वसुधा रुचिरा, यदि (वा) शुभवस्तु श्रुतिदर्शनगं (भवेत्) च (तथा) यदि आदरतः पृच्छति अपि (वा) शुभग्रहदृष्टयुतं चरलग्नं यदि स्यात् तदा जयः स्यात् ॥ २-४ ॥

जिसकी जन्मराशि या जन्मलग्न प्रश्नलग्न में हो, अथवा जन्मराशि का स्वामी या जन्मलग्न का स्वामी प्रश्नलग्न में हो, अथवा जन्मराशि से या जन्मलग्न से तीसरे, छठे, दशवें, गेरहवें स्थान में प्रश्नलग्न पड़ती हो तो यात्रा करनेवाले राजा की विजय अवश्य हो ॥ २ ॥ अथवा जिसके शत्रु की जन्मराशि या जन्मलग्न, प्रश्नलग्न से चौथे या सातवें स्थान में हो, अथवा शत्रु की जन्मराशि का स्वामी या जन्मलग्न का स्वामी प्रश्नलग्न से चौथे या सातवें स्थान में हो, अथवा शत्रु की जन्मराशि से या जन्मलग्न से तीसरी, छठी, दशवीं, गेरहवीं राशि, प्रश्नलग्न से चौथे या सातवें स्थान में पड़ती हो, अथवा शुभग्रह का गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांशादि षड्वर्ग प्रश्नलग्न में हो, अथवा मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक,

कुम्भ इनमें से कोई राशि प्रश्नलग्न में हो तो यात्रा करनेवाले राजा की विजय होती है ॥ ३ ॥ अथवा यात्रा पूछनेवाला ऐसे स्थान में पूछे कि जहाँ की भूमि, फूल, दूर्वा, देवमंदिर आदि शुभ वस्तुओं से अति मनोरम हो अथवा यात्रा पूछने के समय कोई शुभ वस्तु देखने या सुनने में आवे अथवा यात्रा पूछनेवाला बड़े आदर से पूछे, अथवा मेष, कर्क, तुला, मकर इन राशियों में से कोई प्रश्नलग्न में हो और शुभग्रह उसे देखते हों या उस लग्न में हों तो भी यात्रा करनेवाले की विजय होती है ॥ ४ ॥

प्रश्नकालिक अशुभ यात्रायोग

विधुकुजयुतलग्ने सौरिदृष्टेऽथ चन्द्रे
मृतिभमदनसंस्थे लग्नगे भास्करेऽपि ।
हिबुकनिधनहोराद्यूनगे वापि पापे
सपदि भवति भंगः प्रश्नकर्त्तुस्तदानीम् ॥ ५ ॥

अन्वयः—अथ विधुकुजयुतलग्ने सौरिदृष्टे, चन्द्रे मृतिभमदनसंस्थे, अपि वा भास्करे लग्नगे, अपि वा पापे हिबुकनिधनहोराद्यूनगे, तदानी प्रश्नकर्तुः सपदि भंगः भवति ॥ ५ ॥

यदि प्रश्नकालिक लग्न में चन्द्रमा या मंगल हो और शनैश्चर उसे देखता हो, अथवा प्रश्नकालिक लग्न में सूर्य हो और उससे सातवें या आठवें स्थान में चन्द्रमा हो, अथवा प्रश्नलग्न में या उससे चौथे, आठवें, सातवें स्थानों में पापग्रह हो तो यात्रा करनेवाले का नाश या पराजय होता है ॥ ५ ॥

प्रश्नद्वारा यात्रा की दिशा का निर्णय

त्रिकोणे कुजात्सौरिशुक्रज्ञजीवा
यदैकोऽपि वा नो गमोर्काच्छशी वा ।
बलीयांस्तु मध्ये तयोर्यो ग्रहः स्या-
त्स्वकीयां दिशं प्रत्युतासौ नयेच्च ॥ ६ ॥
प्रश्ने गम्यदिगीशात्खेटः पञ्चमगो यः ।
बोभूयाद्बलयुक्तः स्वामाशां नयतेऽसौ ॥ ७ ॥

अन्वयः—सौरिशुक्रज्ञजीवाः (सर्वे) वा एकोऽपि यदा कुजात् त्रिकोणे (स्थितः) वा शशी अर्कात् त्रिकोणे स्यात् तदा गमः [गमनं] नो भवेत्, प्रत्युत तयोर्मध्ये यः ग्रहः बलीयान् स्यात् असौ स्वकीयां दिशं नयेत् । प्रश्ने गम्यदिगीशात् पञ्चमगः यः खेटः बलयुक्तः बोभूयात् असौ स्वां आशां नयते ॥ ६-७ ॥

प्रश्नकाल में शनैश्चर, शुक्र, बुध, बृहस्पति, ये चारों ग्रह या इनमें से कोई एक ही ग्रह यदि मंगल से नवें, पाँचवें स्थान में स्थित हो, अथवा चन्द्रमा यदि सूर्य से नवें, पाँचवें स्थान में हो, तो यात्रा करनेवाला जिस दिशा में जाने की इच्छा करता है उस दिशा में यात्रा नहीं होती, किंतु इन यात्राप्रतिबंधक ग्रहों में से जो ग्रह बलवान् होता है वह अपनी ही दिशा में ले जाता है अथवा जिस दिशा में यात्रा करने की इच्छा से प्रश्न किया गया हो उस दिशा का स्वामी प्रश्नलग्न से जिस स्थान में स्थित हो उस स्थान से पाँचवें स्थान में यदि कोई बली ग्रह हो तो वह ग्रह अपनी ही दिशा में यात्रा करनेवाले को ले जाता है। ग्रहों की दिशा इसी प्रकरण के ४६ वें श्लोक में कही गई हैं ।। ६-७ ।।

मासभेद से यात्रा के शुभाशुभभेद और तारा

धनुर्मेषसिंहेषु यात्रा प्रशस्ता शनिज्ञोशनोराशिगे चैव मध्या।
रवौ कर्कमीनालिसंस्थेऽतिदीर्घा जनुःपञ्चसप्तत्रितारारश्च नेष्टाः ॥८॥

अन्वयः—धनुर्मेषसिंहेषु रवौ यात्रा प्रशस्ता स्यात्, च शनिज्ञोशनोराशिगे रवौ मध्या स्यात्, कर्कमीनालिसंस्थे रवौ अतिदीर्घा यात्रा स्यात्, तथा जनुः पञ्चसप्तत्रि-ताराः नेष्टाः ।। ८ ।।

धनु, मेष वा सिंह में सूर्य हो तो यात्रा उत्तम; मकर, कुम्भ, मिथुन, कन्या, वृष वा तुला में सूर्य हो तो यात्रा मध्यम; और कर्क, वृश्चिक वा मीन में सूर्य हो तो यात्रा बहुत दिनों में लौटानेवाली अर्थात् अशुभ होती है। जन्मनक्षत्र से यात्रा के दिननक्षत्र तक गिनने से जितनी संख्या हो उसमें नौ का भाग देने से १ । ३ । ५ वा ७ शेष रहे तो शुभ नहीं होते, अर्थात् यात्रा में पहिली, पाँचवीं, सातवीं और तीसरी तारा निषिद्ध है ।। ८ ।।

यात्रा में निषिद्धतिथि और विहिततिथि

न षष्ठी न च द्वादशी नाष्टमी नो
सिताद्या तिथिः पूर्णिमाऽमा न रिक्ता।
हयादित्यमैत्रेन्दुजीवान्त्यहस्त-
श्रवो वासवरेव यात्रा प्रशस्ता ।। ९ ।।

अन्वयः—षष्ठी (शुभा) न, च द्वादशी न, अष्टमी न, सिताद्या तिथिः पूर्णिमा अमा न, रिक्ता न प्रशस्ता भवति। हयादित्यमैत्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवो वासवैः एव यात्रा प्रशस्ता स्यात् ।। ६ ।।

छठि, द्वादशी, अष्टमी, शुक्लपक्ष की परीवा, पूर्णमासी, अमावास्या, चौथि, नवमी, चतुर्दशी ये तिथियाँ यात्रा में शुभ नहीं हैं, अर्थात् इन तिथियों में यात्रा न करे, इनको छोड़कर अन्य तिथियों में यात्रा करे; और अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, इन नक्षत्रों में की हुई यात्रा शुभ होती है ॥ ९ ॥

वारशूल और नक्षत्रशूल

न पूर्वदिशि शक्रभे न विधुसौरिवारे तथा
न चाजपदभ गुरौ यमदिशीनदैत्येज्ययोः ।
न पाशिदिशि धातृभे कुजबुधेऽर्यमर्क्षे तथा
न सौम्यककुभि व्रजेत्स्वजयजीवितार्थी बुधः ॥ १० ॥

अन्वयः—स्वजयजीवितार्थी बुधः पूर्वदिशि शक्रभे न, तथा विधुसौरिवारे न व्रजेत् । च अजपदभे, गुरौ (दिने) यमदिशि न व्रजेत् । इनदैत्येज्ययोः धातृभे पाशिदिशि न व्रजेत् तथा कुजबुधे अर्यमर्क्षे सौम्यककुभि न व्रजेत् ॥ १० ॥

धन, विजय और जीवन चाहनेवाला बुद्धिमान् मनुष्य ज्येष्ठा नक्षत्र में तथा सोमवार और शनैश्चर के दिन पूर्व दिशा में, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में तथा बृहस्पति के दिन दक्षिण दिशा में, रोहिणी नक्षत्र में तथा रविवार और शुक्र के दिन पश्चिम दिशा में और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में तथा मंगल, बुध के दिन उत्तर दिशा में यात्रा न करे ॥ १० ॥

कालविशेष में विशेष नक्षत्रों का निषेध

पूर्वाह्णे ध्रुवमिश्रभैर्न नृपतेर्यात्रा न मध्याह्नके
तीक्ष्णाख्यैरपराह्णके न लघुभैर्नो पूर्वरात्रे तथा ।
मित्राख्यैर्न च मध्यरात्रिसमये चोग्रैस्तथा नो चरै
रात्र्यन्ते हरिहस्तपुष्यशशिभिः स्यात्सर्वकाले शुभा ॥ ११ ॥

अन्वयः—पूर्वाह्णे ध्रुवमिश्रभैः नृपतेः यात्रा न शुभा, मध्याह्नके तीक्ष्णाख्यैः न शुभा, अपराह्णके लघुभैः न, तथा मित्राख्यैः पूर्वरात्रे न, तथा च उग्रैः मध्यरात्रिसमये न, तथा चरैः रात्र्यन्ते न (शुभा भवति) । हरिहस्तपुष्यशशिभिः सर्वकाले नृपतेः यात्रा शुभा स्यात् ॥ ११ ॥

दिन के तीन भाग करके पहिले भाग में तीनों उत्तरा, रोहिणी, विशाखा और कृत्तिका में; दूसरे भाग में मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और श्लेषा में; तीसरे

भाग में अश्विनी और अभिजित् में यात्रा न करे। ऐसे ही रात्रि के तीन भाग करके पहिले भाग में रेवती, चित्रा और अनुराधा में; दूसरे भाग में तीनों पूर्वा, भरणी और मघा में और तीसरे भाग में स्वाती, पुनर्वसु, धनिष्ठा और शतभिष में यात्रा न करनी चाहिए। श्रवण, हस्त, पुष्य, मृगशिरा, इन नक्षत्रों में सब काल में यात्रा शुभ होती है ॥ ११ ॥

यात्रा में मध्यम नक्षत्र तथा कई निषिद्ध नक्षत्रों की त्याज्य घटी

पूर्वाग्निपित्र्यान्तकतारकाणां भूपप्रकृत्युग्रतुरङ्गमाः स्युः ।
स्वातीविशाखेन्द्रभुजङ्गमानां नाड्यो निषिद्धा मनुसंमिताश्च ॥ १२ ॥

अन्वयः—पूर्वाग्निपित्र्यान्तकतारकाणां भूपप्रकृत्युग्रतुरंगमाः नाड्यः, च स्वाती-विशाखेन्द्रभुजङ्गमानां मनुसम्मिताः नाड्यः निषिद्धाः स्युः ॥ १२ ॥

तीनों पूर्वाओं के प्रथम सोलह दण्ड, कृत्तिका के इक्कीस दण्ड, मघा के ग्यारह दण्ड, भरणी के सात दण्ड, और स्वाती, विशाखा, ज्येष्ठा, श्लेषा, इन नक्षत्रों के चौदह दण्ड यात्रा में निषिद्ध होते हैं ॥ १२ ॥

अन्यमत से त्याज्य घटी

पूर्वार्द्धमाग्नेयमघानिलानां त्यजेद्धि चित्राहियमोत्तरार्द्धम् ।
नृपः समस्तां गमने जयार्थी स्वातीं मघां चोशनसो मतेन ॥ १३ ॥

अन्वयः—जयार्थी नृपः गमने आग्नेयमघानिलानां पूर्वार्धं, चित्राहियमोत्तरार्द्धं हि त्यजेत्, च उशनसः मतेन स्वातीं मघां समस्तां त्यजेत् ॥ १३ ॥

विजय चाहनेवाला राजा कृत्तिका, मघा और स्वाती का पूर्वार्द्ध तथा चित्रा, श्लेषा और भरणी का उत्तरार्द्ध यात्रा में त्याग दे। शुक्राचार्य के मत से सम्पूर्ण स्वाती और सम्पूर्ण मघा को यात्रा में त्याग दे ॥ १३ ॥

नक्षत्रों की जीवपक्षादि संज्ञा

तमोभुक्ततारा: स्मृता विश्वसंख्याः शुभो जीवपक्षो मृतश्चापि भोग्याः ।
तदाक्रान्तभं कर्तरीसंज्ञमुक्तं ततोऽक्षेन्दुसंख्यं भवेद्ग्रस्तनाम ॥ १४ ॥

अन्वयः—विश्वसंख्याः तमोभुक्ततारा: जीवपक्षः शुभः स्मृतः, च भोग्याः विश्वसंख्याः मृतः उक्तः, तदा क्रान्तभं कर्तरीसंज्ञं उक्तम, ततः (राहोः) अक्षेन्दुसंख्यं ग्रस्तनाम भवेत् ॥ १४ ॥

राहु के भुक्त तेरह नक्षत्र जीवपक्षसंज्ञक, और भोग्य तेरह नक्षत्र मृतपक्ष-संज्ञक होते हैं और जिस नक्षत्र में राहु स्थित हो वह नक्षत्र कर्तरीसंज्ञक और उससे पन्द्रहवाँ नक्षत्र ग्रस्तसंज्ञक होता है। इनमें यात्रा के लिए

जीवपक्ष शुभ होता है। उदाहरण—जैसे हस्त नक्षत्र में राहु हो तो उसके उलटे चलने के कारण चित्रा से लेकर पूर्वाभाद्रपद तक तेरह नक्षत्र भुक्त होंगे उनकी जीवपक्ष संज्ञा होगी, और उत्तराफाल्गुनी से पूर्व रेवती तक तेरह नक्षत्र भोग्य होंगे उनकी मृतपक्ष संज्ञा होगी, और हस्त कर्तरी-संज्ञक तथा उत्तराभाद्रपद ग्रस्तसंज्ञक होगा। ये सब नीचे के चक्र में स्पष्ट ज्ञात होंगे ॥ १४॥

जीवपक्षादि संज्ञाचक्र

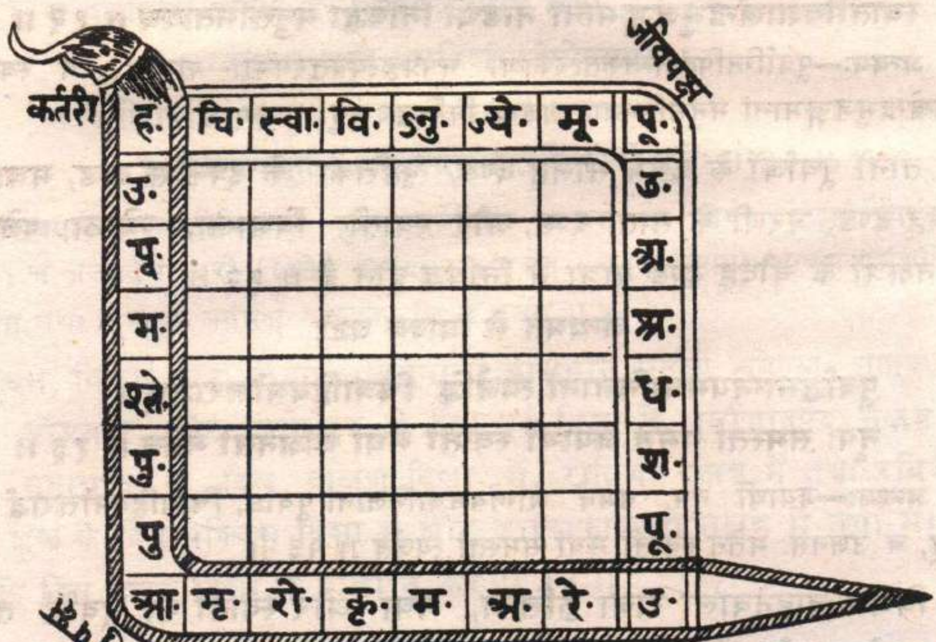

जीवपक्षादि का विशेष फल

मार्तण्डे मृतपक्षगे हिमकरश्चेज्जीवपक्षे शुभा
यात्रा स्याद्विपरीतग क्षयकरी द्वौ जीवपक्षे शुभा।
ग्रस्तर्क्षं मृतपक्षतः शुभकरं ग्रस्तात्तथा कर्त्तरी
यायीन्दुः स्थितिमान्रविर्जयकरौ तौ द्वौ तयोर्जीवगौ ॥ १५ ॥

अन्वयः—मार्तण्डे मृतपक्षगे चेत्, हिमकरः जीवपक्षे, तदा यात्रा शुभा स्यात्, विपरीतगे क्षयकरी स्यात्, द्वौ यदि जीवपक्षे तदा यात्रा शुभा, ग्रस्तर्क्षं मृतपक्षतः शुभकरं, तथा ग्रस्तात् कर्त्तरी [शुभकरा] तथा इन्दुः यायी, रविस्थितिमान् तौ द्वौ जीवगौ तयोः [यायिस्थायिनोः] जयकरौ ॥ १५ ॥

सूर्य मृतपक्ष में और चन्द्रमा जीवपक्ष में हो तो यात्रा शुभ होती है, और इससे विपरीत अर्थात् चन्द्रमा मृतपक्ष में और सूर्य जीवपक्ष में हो तो यात्रा विनाश करनेवाली होती है। यदि सूर्य और चन्द्रमा, दोनों जीवपक्ष में हों तो यात्रा अति शुभ होती है, और यदि सूर्य-चन्द्रमा दोनों मृतपक्ष में हों तो यात्रा अति अशुभ होती है। मृतपक्ष से ग्रस्तसंज्ञक नक्षत्र कैसा शुभकर है जैसे मरे हुए से मरनेवाला रोगी अच्छा होता है, और ग्रस्तसंज्ञक नक्षत्र से कर्तरीसंज्ञक कैसा अच्छा है जैसे कि एक दिन में मरनेवाले से दो दिन में मरनेवाला अच्छा होता है। अब राजाओं की यात्रा का विशेष फल कहते हैं। राजा दो प्रकार के होते हैं—एक यायी, दूसरा स्थायी। जो दूसरे राजा के ऊपर चढ़ाई करता है उसे यायी और जो अपने घर में है उसे स्थायी कहते हैं। चन्द्रमा यायी का स्वामी और सूर्य स्थायी का स्वामी है। यदि सूर्य-चन्द्रमा दोनों जीवपक्ष में हों तो यायी-स्थायी दोनों की विजय होती है और यदि चन्द्रमा जीवपक्ष में हो तो यायी राजा की विजय और सूर्य जीवपक्ष में हो तो स्थायी राजा की विजय होती है, और यदि सूर्य-चन्द्रमा दोनों मृतपक्ष में हों तो दोनों की पराजय होती है ॥ १५ ॥

युद्धयात्रा के उपयोगी कुलाकुलसंज्ञक तिथि, वार, नक्षत्र

स्वात्यन्तकाहिवसुपौष्णकरानुराधा-
दित्यध्रुवाणि विषमास्तिथयोऽकुलाः स्युः।
सूर्येन्दुमन्दगुरवश्च कुलाकुलाज्ञो
मूलाम्बुपेशविधिभं दशषड्द्वितिथ्यः ॥ १६ ॥
पूर्वाश्वीज्यमघेन्दुकर्णदहनद्वीशेन्द्रचित्रास्तथा
शुक्रारौ कुलसंज्ञकाश्च तिथयोऽर्काष्टेन्द्रवेदैर्मिताः।
यायी स्यादकुले जयी च समरे स्थायी च तद्वत्कुले
सन्धिः स्यादुभयोः कुलाकुलगणे भूमीशयोर्युध्यतोः ॥ १७ ॥

अन्वयः—स्वात्यन्तकाहिवसुपौष्ण्यकरानुराधादित्यध्रुवाणि विषमाः तिथयः सूर्येन्दुमन्दगुरवश्च अकुलाः स्युः। ज्ञः मूलाम्बुपेशविधिभं, दशषड्द्वितिथ्यः कुलाकुलाः स्युः। पूर्वाश्वीज्यमघेन्दुकर्णदहनद्वीशेन्द्रचित्राः तथा शुक्रारौ अर्काष्टेन्द्रवेदैर्मिताः तिथयः कुलसंज्ञकाः स्यु। अकुले समरे यायी जयी स्यात्। तद्वत् कुले स्थायी जयी स्यात्। कुलाकुलगणे, युध्यतोः उभयोः भूमीशयोः सन्धिः स्यात् ॥ १६-१७ ॥

स्वाती, भरणी, श्लेषा, धनिष्ठा, रेवती, हस्त, अनुराधा, पुनर्वसु, रोहिणी,

तीनों उत्तरा, ये बारह नक्षत्र, और परीवा, तीज, पंचमी, सप्तमी, नवमी, एकादशी, त्रयोदशी, पूर्णमासी, अमावास्या थ तिथियाँ और रविवार, सोमवार, शनैश्चर, बृहस्पति ये दिन अकुलसंज्ञक तथा बुधवार यह एक दिन और मूल, शतभिष, आर्द्रा, अभिजित् ये चार नक्षत्र और दशमी, छठि, दुइज ये तिथियाँ कुलाकुलसंज्ञक ॥ १६ ॥ तथा तीनों पूर्वा, अश्विनी, पुष्य, मघा, मृगशिरा, श्रवण, कृत्तिका, विशाखा, ज्येष्ठा, चित्रा, ये बारह नक्षत्र और शुक्र, मंगल ये दो दिन और द्वादशी, अष्टमी, चतुर्दशी, चौथि, ये चार तिथियाँ कुलसंज्ञक हैं। अकुलसंज्ञक तिथि, वार, नक्षत्रों में यात्रा या युद्ध का प्रारम्भ करनेवाला यायी राजा, और कुलसंज्ञक तिथि, वार नक्षत्रों में युद्ध का प्रारम्भ करनेवाला स्थायी राजा युद्ध में विजयी होता है, और कुलाकुलसंज्ञक तिथि, वार, नक्षत्रों में युद्ध करनेवाले यायी, स्थायी दोनों राजाओं में सन्धि हो जाती है ॥ १७ ॥

पन्थाराहु का विचार

स्युर्धर्मे दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राण्यथार्थे
याम्याजाङ्घ्रीन्द्रकर्णादितिपितृपवनोडून्यथोभानि कामे ।
वह्न्यार्द्राबुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानि मोक्षेथरोहि-
ण्यार्यम्णाप्येन्दुविश्वान्तिमभदिनकरर्क्षाणि पन्थादिराहौ ॥ १८ ॥

अन्वयः—पन्थादिराहौ दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राणि धर्मे स्युः, अथ याम्याजांघ्रीन्द्रकर्णादितिपितृपवनोडूनि अर्थे स्युः, अथो वह्न्यार्द्राबुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानि भानि कामे स्युः, अथ रोहिण्यार्यम्णाप्येन्दुविश्वान्तिमभदिनकरर्क्षाणि मोक्षे स्युः ॥ १८ ॥

पाँच खड़ी रेखाओं के ऊपर नौ आड़ी रेखाओं के खींचने से जो बत्तीस कोठों का चक्र होता है उसे पन्थाराहुचक्र कहते हैं। उसमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, ये चार मार्ग होते हैं। उन चारों में से धर्ममार्ग में अश्विनी, पुष्य, आश्लेषा, धनिष्ठा, शतभिष, विशाखा, अनुराधा, ये सात नक्षत्र; अर्थमार्ग में भरणी, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा, श्रवण, पुनर्वसु, मघा, स्वाती, ये सात नक्षत्र; काममार्ग में कृत्तिका, आर्द्रा, उत्तराभाद्रपद, चित्रा, मूल, अभिजित्, पूर्वाफाल्गुनी ये सात नक्षत्र और मोक्षमार्ग में रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, मृगशिरा, उत्तराषाढ़, रेवती, हस्त, ये सात नक्षत्र स्थापन करने से यह पंथादि राहु स्पष्ट होता है ॥ १८ ॥

पन्थाराहुचक्र

धर्ममार्ग	अ०	पु०	आश्ले०	वि०	अनु०	ध०	श०
अर्थमार्ग	भ०	पुन०	म०	स्वा०	ज्ये०	श्र०	पू०भ०
काममार्ग	कृ०	आ०	पू० फा०	चि०	मू०	अभि०	उ०भा०
मोक्षमार्ग	रो०	मृ०	उ० फा०	ह०	पू० फा०	उ०फा०	रे०

पन्थाराहुचक्रफल

धर्मगे भास्करे वित्तमोक्षे शशी वित्तगे धर्ममोक्षस्थितिः शस्यते ।
कामगे धर्ममोक्षार्थगः शोभनो मोक्षगे केवलं धर्मगः प्रोच्यते ॥ १९ ॥

अन्वयः—धर्मगे भास्करे, वित्तमोक्षे शशी शस्यते; वित्तगे भास्करे, धर्ममोक्षस्थितः शशी; कामगे भास्करे, धर्ममोक्षार्थगः शशी शोभनः; मोक्षगे भास्करे, केवलं धर्मगः शशी शोभनः प्रोच्यते ॥ १९ ॥

धर्ममार्ग में सूर्य हो और अर्थमार्ग या मोक्षमार्ग में चन्द्रमा हो तो शुभ है, तथा अर्थमार्ग में सूर्य और धर्ममार्ग या मोक्षमार्ग में चन्द्रमा हो तो शुभ है, तथा काममार्ग में सूर्य और धर्ममार्ग या मोक्षमार्ग या अर्थमार्ग में चन्द्रमा हो तो शुभ है, तथा मोक्षमार्ग में सूर्य और धर्ममार्ग में चन्द्रमा हो तो शुभ है, और इससे विपरीत अशुभ है ॥ १९ ॥

पौषादि मासों की परीवादि तिथियों में पूर्वादि दिशाओं की यात्रा का शुभाशुभ फल

पौषे पक्षत्यादिका द्वादशैवं तिथ्यो माघादौ द्वितीयादिकास्ताः ।
कामात्तिस्रः स्युस्तृतीयादिवच्च याने प्राच्यादौ फलं तत्र वक्ष्ये ॥ २० ॥
सौख्यं क्लेशो भीतिरर्थागमश्च शून्यं नैस्स्वं निस्स्वता मिश्रता च ।
द्रव्यक्लेशो दुःखमिष्टाप्तिरर्थो लाभः सौख्यं मङ्गलं वित्तलाभः ॥ २१ ॥
लाभो द्रव्याप्तिर्धनं सौख्यमुक्तं भीतिर्लाभो मृत्युरर्थागमश्च ।
लाभः कष्टं द्रव्यलाभः सुखं च कष्टं सौख्यं क्लेशलाभः सुखं च ॥ २२ ॥
सौख्यं लाभः कार्यसिद्धिश्च कष्टं क्लेशः कष्टात्सिद्धिरर्थो धनं च ।
मृत्युर्लाभो द्रव्यलाभश्च शून्यं शून्यं सौख्यं मृत्युरत्यन्तकष्टम् ॥ २३ ॥

अन्वयः—पौषे पक्षत्यादिकाः द्वादश तिथ्यः, एवं माघादौ द्वितीयादिकाः ताः [तिथ्यः], च कामात् तिस्रः तृतीयादिवत् ज्ञेयाः। तत्र प्राच्यादौ याने फलं वक्ष्ये। श्लोकक्रमेणैव सुगमः। इदं प्राच्यादौ याने क्रमेण फलं ज्ञेयम् ॥ २०-२३ ॥

खड़ी खींची हुई तेरह रेखाओं के ऊपर आड़ी चौदह रेखा ऐसी खींचे कि जिनसे एकसौ छप्पन कोठोंवाला एक चक्र बन जावे। तदनन्तर उस चक्र की ऊपरवाली पहिली पंक्ति में पौषादि बारह महीने लिखे। उन महीनों में से पौष के नीचे बारह कोठों में क्रम से परीवा से लेकर द्वादशीपर्यन्त बारह तिथियाँ लिखे और जिन कोठों में तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, ये तीन तिथियाँ हों उन्हीं कोठों में त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, ये तीन तिथियाँ भी क्रम से लिखे। ऐसे ही माघ आदि मासों में द्वितीया से लेकर परीवा पर्यन्त बारह तिथियाँ क्रम से और तृतीया आदि तीन तिथियों के कोठों में त्रयोदशी आदि तीन तिथियाँ क्रम से लिखे। वे सब आगे चक्र में स्पष्ट होंगी। अब उन तिथियों में पूर्व आदि दिशाओं के यात्रा करने का फल कहते हैं ॥ २० ॥ पौष की परीवा तिथि में पूर्व दिशा को यात्रा करने में सौख्य, दक्षिण में क्लेश, पश्चिम में भय, उत्तर में धन का लाभ होता है; द्वितीया में पूर्वदिशा में शून्य फल, दक्षिण में धन की हानि, पश्चिम में धन की हानि, उत्तर में मिश्रता अर्थात् कभी हानि, कभी लाभ होता है; तृतीया में पूर्व में द्रव्यक्लेश, दक्षिण में दुःख पश्चिम में वाञ्छित वस्तु का लाभ, उत्तर में धन होता है; चतुर्थी में पूर्व में लाभ, दक्षिण में सौख्य, पश्चिम में मंगल, उत्तर में धनलाभ होता है ॥ २१ ॥ पञ्चमी में पूर्व में लाभ, दक्षिण में द्रव्यलाभ, पश्चिम में धन, उत्तर में सौख्य होता है; छठि में पूर्व में भय, दक्षिण में लाभ, पश्चिम में मरण, उत्तर में धनलाभ होता है; सप्तमी में पूर्व में लाभ, दक्षिण में कष्ट, पश्चिम में द्रव्यलाभ, उत्तर में सुख होता है; अष्टमी में पूर्व में कष्ट, दक्षिण में सौख्य, पश्चिम में क्लेश, उत्तर में सुख होता है ॥ २२ ॥ नवमी में पूर्व में सौख्य, दक्षिण में लाभ, पश्चिम में कार्यसिद्धि, उत्तर में कष्ट होता है; दशमी में पूर्व में क्लेश, दक्षिण में कष्ट से सिद्धि, पश्चिम में धन, उत्तर में धन होता है और एकादशी में पूव में मरण, दक्षिण में लाभ, पश्चिम में द्रव्यलाभ, उत्तर में शून्य फल होता है; द्वादशी में पूर्व में शून्य फल, दक्षिण में सौख्य, पश्चिम में मरण, उत्तर में अत्यन्त कष्ट होता है; त्रयोदशी आदि तीन तिथियों का फल तृतीया आदि तीन तिथियों के समान होता है और माघ आदि महीनों की द्वितीया आदि तिथियों का भी यही फल है। सो भी चक्र में स्पष्ट है ॥ २३ ॥

तिथिचक्र

पौ०	मा०	फा०	चै०	वै०	ज्ये०	आ०	श्रा०	भा०	कु०	का०	आ०	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्य	क्लेश	भीति	अर्थागम
२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्य	नैःस्व	नैःस्व	मिश्रता
३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	द्रव्यक्लेश	दुःख	इष्टाप्ति	अर्थ
४।१४	५।१५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३।१३	लाभ	सौख्य	मंगल	वित्तलाभ
५।१५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३।१३	४।१४	लाभ	द्रव्याप्ति	धन	सौख्य
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	भीति	लाभ	मृत्यु	अर्थागम
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	लाभ	कष्ट	द्रव्यलाभ	सुख
८	९	१०	११	१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	कष्ट	सौख्य	क्लेशलाभ	सुख
९	१०	११	१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	सौख्य	लाभ	कार्यसिद्धि	कष्ट
१०	११	१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	९	क्लेश	कष्ट से सि०	अर्थ	धन
११	१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	९	१०	मृत्यु	लाभ	द्रव्यलाभ	शून्य
१२	१	२	३।१३	४।१४	५।१५	६	७	८	९	१०	११	शून्य	सौख्य	मृत्यु	अत्यन्त कष्ट

सर्वाङ्क योग

तिथ्यर्क्षवारयुतिरद्रिगजाग्नितष्टा
स्थानत्रयेत्र वियति प्रथमेऽतिदुःखी ।
मध्ये धनक्षतिरथो चरमे मृतिः स्या-
त्स्थानत्रयेऽङ्कयुजि सौख्यजयौ निरुक्तौ ॥ २४ ॥

अन्वयः—तिथ्यर्क्षवारयुतिः स्थानत्रये अत्र (स्थाप्या) (क्रमेण) अद्रिगजाग्नितष्टा प्रथमे [स्थाने] वियति शून्ये सति अतिदुःखी स्यात्, मध्ये वियति (सति) धनक्षतिः स्यात्, अथो चरमे वियति मृतिः स्यात्, स्थानत्रये अंकयुजि (सति) सौख्यजयौ निरुक्तौ ॥ २४ ॥

जिस दिन यात्रा करना हो उस दिन शुक्लपक्ष की परीवा से लेकर जो तिथि हो, अश्विनी से लेकर जो नक्षत्र हो और रविवार से लेकर जो दिन हो, उन सबकी संख्याओं के योग को तीन स्थानों में रक्खे। प्रथम स्थान में सात का, दूसरे स्थान में आठ का, तीसरे स्थान में तीन का भाग दे। उन तीनों स्थानों में या प्रथम स्थान में शून्य शेष रहे तो यात्रा करने-वाला अतिदुःखी होता है, दूसरे स्थान में शून्य शेष रहे तो धन की हानि और तीसरे स्थान में शून्य बचे तो मृत्यु होती है। तीनों स्थानों में यदि अंक शेष हों तो यात्रा करनेवाला सुखी तथा विजयी होता है। उदाहरण—जैसे कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया को मंगल दिन, अनुराधा नक्षत्र में यात्रा करना है। यहाँ तिथि की संख्या २, दिन की संख्या ३, नक्षत्र की संख्या १७ हुई। इन सबका योग २२ हुआ। इसको तीन स्थानों में रक्खे। प्रथम स्थान में सात का भाग देने से एक, दूसरे स्थान में आठ का भाग देने से छः और तीसरे स्थान में तीन का भाग देने से एक शेष रहा। यहाँ तीनों स्थानों में अंक शेष हैं, इसलिए इस दिन की यात्रा सुख और विजय देनेवाली होगी ॥ २४ ॥

महाडल और भ्रमण योग

रवेर्भतोऽब्जभोन्मितिर्नगावशेषिता द्व्यगाः ।
महाडलो न शस्यते त्रिषण्मिता भ्रमो भवेत् ॥ २५ ॥

अन्वयः—रवेर्भतः अब्जभोन्मितिः नगावशेषिताः द्व्यगाः [द्विसप्तंमिताः चेत्] तदा महाडलः स्यात् (स) न शस्यते, (यदि) त्रिषण्मिता (तदा) भ्रमो भवेत्। सोऽपि न शस्यते ॥ २५ ॥

सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिने। जितनी संख्या हो उसमें

सात का भाग दे। यदि दो अथवा सात शेष रहें तो महाडल दोष होता है, और यदि तीन अथवा छः शेष रहें तो भ्रमण दोष होता है। ये दोनों दोष यात्रा में निषिद्ध हैं ॥ २५ ॥

हिम्बराख्य योग

शशाङ्कभं सूर्यभतोऽत्र गण्यं पक्षादितिथ्या दिनवासरेण।
युतं नवाप्तं नगशेषकं चेत्स्याद्धिम्बरं तद्गमनेऽतिशस्तम् ॥ २६ ॥

अन्वयः—सूर्यभतः शशाङ्कभं अत्र गण्यं [तत्] पक्षादितिथ्या दिनवासरेण युतं नवाप्तं चेत् नगशेषकं तदा हिम्बरं स्यात् तत् गमने अतिशस्तं स्यात् ॥ २६ ॥

सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र पर्यन्त जितनी संख्या हो, उसमें शुक्ल या कृष्ण पक्ष की वर्त्तमान तिथि की संख्या जोड़कर नव का भाग देने से यदि सात शेष रहें तो हिम्बरयोग होता है यह यात्रा में अति शुभ होता है ॥ २६ ॥

घातचन्द्र योग

भूपञ्चाङ्कद्वयङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः।
मेषादीनां राजसेवाविवादे यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः ॥ २७ ॥

अन्वयः—मेषादीनां (क्रमात्) भूपञ्चाङ्कद्वयङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काः घाताख्य-चन्द्रः (स्यात्) स राजसेवाविवादे यात्रायुद्धाद्ये च वर्ज्यः अन्यत्र न वर्ज्यः ॥ २७ ॥

मेष राशिवाले का पहिला, वृष राशिवाले का पाँचवाँ, मिथुन का नवाँ, कर्क का दूसरा, सिंह का छठा, कन्या का दशवाँ, तुला का तीसरा, वृश्चिक का सातवाँ, धनु का चौथा, मकर का आठवाँ, कुम्भ का ग्यारहवाँ और मीन का बारहवाँ चन्द्रमा घातक होता है। यह घातचन्द्रमा योग राजा की सेवा, विवाद, यात्रा, युद्ध, इन कार्यों में वर्जित है, अन्यत्र वर्जित नहीं है ॥ २७ ॥

घातचन्द्र चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मीन	राशि
१	५	६	२	६	१०	३	७	४	८	११	१२	घात-चन्द्रमा

घातक नक्षत्रपाद

आग्नेयत्वाष्ट्रजलपपित्र्यवासवरौद्रभे।
मूलब्राह्मयाजपादर्क्षे पित्र्यमूलाजभे क्रमात् ॥ २८ ॥

रूपद्वयग्न्यग्निभूरामं द्वयब्ध्यग्न्यब्धियुगाग्नयः ।
घातचन्द्रे धिष्ण्यपादा मेषाद्वर्ज्या मनीषिभिः ॥ २९ ॥

अन्वयः—आग्नेयत्वाष्ट्रजलपपित्र्यवासवरौद्रभे मूलब्राह्मचाजपादर्क्षे पित्र्यमूलाजभे क्रमात् मेषादीनां (घातको ज्ञेयः)। मेषात्घातचन्द्रे (क्रमात्) रूपद्वयग्न्यग्निभूराम-द्वयब्ध्यग्न्यब्धियुगाग्नयः धिष्ण्यपादाः मनीषिभिः वर्ज्याः ॥ २८-२९ ॥

मेष राशिवाले को कृत्तिका का पहिला चरण घातक है, वृष राशिवाले को चित्रा का दूसरा पाद घातक है, मिथुन राशिवाले को शतभिष का तीसरा पाद घातक है, कर्क राशिवाले को मघा का तीसरा पाद घातक है, सिंह राशिवाले को धनिष्ठा का पहिला पाद घातक है, कन्या राशिवाले को आर्द्रा का तीसरा पाद घातक है, तुला राशिवाले को मूल का दूसरा पाद घातक है, वृश्चिक राशिवाले को रोहिणी का चौथा पाद घातक है, धनु राशिवाले को पूर्वाभाद्रपद का तीसरा पाद घातक है, मकर राशिवाले को मघा का चौथा पाद घातक है, कुम्भ राशिवाले को मूल का दूसरा पाद घातक है और मीन राशिवाले को पूर्वाभाद्रपद का तीसरा पाद घातक होता है। ये कृत्तिका आदि के घातपाद यात्रा आदि में पण्डितों को वर्जित करना चाहिए ॥ २८-२९ ॥

घातक नक्षत्रपाद चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशि
कृ०	चि०	श०	म०	ध०	आ०	मू०	रो०	पू. भा.	म०	मू०	पू० भा०	नक्षत्र
१	२	३	३	१	३	२	४	३	४	२	३	पाद

घातक तिथियाँ

गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा भद्रा नृयुक्कर्कटकेऽथ नन्दा ।
कौर्प्याजयोर्नक्रधटे च रिक्ता जया धनुः कुम्भहरौ न शस्ता ॥ ३० ॥

अन्वयः—गोस्त्रीझषे पूर्णा घाततिथिः (स्यात्) तु (तथा) नृयुक्कर्कटके भद्रा घात-तिथिः, अथ कौर्प्याजयोः नन्दा, नक्रधटे रिक्ता, धनुः कुम्भहरौ जया घाततिथिः (ताः) न शस्ताः (स्युः) ॥ ३० ॥

वृष, कन्या और मीन राशिवाले को पञ्चमी, दशमी, पूर्णमासी, अमावास्या ये तिथियाँ घातक हैं। मिथुन और कर्क राशिवाले को द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी घातक हैं। वृश्चिक और मेष राशिवाले को परीवा, छठि और एकादशी। मकर और तुला राशिवाले को चौथि नवमी और

चतुर्दशी । धनु, कुम्भ और सिंह राशिवाले को तृतीया, अष्टमी और त्रयोदशी ये तिथियाँ घातक हैं । इस कारण यात्रा आदि में वर्जित हैं ॥ ३० ॥

घाततिथि चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशि
१	५	२	२	३	५	४	१	३	४	३	५	
६	१०	७	७	८	१०	९	६	८	९	८	१०	घात
११	१५	१२	१२	१३	१५	१४	११	१३	१४	१३	१५	तिथि

घातक वार

नक्रे भौमो गोहरिस्त्रीषु मन्दश्चन्द्रो द्वन्द्वेऽर्कोजभे ज्ञश्च कर्के ।
शुक्रः कोदण्डालिमीनेषु कुम्भजूके जीवो घातवारा न शस्ताः ॥ ३१ ॥

अन्वयः—नक्रे भौमः, गोहरिस्त्रीषु मन्दः, द्वन्द्वे चन्द्रः, अजभे अर्कः, च (तथा) कर्के ज्ञः, कोदण्डालिमीनेषु शुक्रः, कुम्भजूके जीवः, (इमे) घातवाराः न शस्ताः स्युः ॥ ३१ ॥

मकर राशिवालों को मङ्गल; वृष, सिंह और कन्या राशिवालों को शनैश्चर; मिथुन राशिवालों को सोमवार; मेष राशिवालों को रविवार; कर्क राशिवालों को बुध; धनु, मीन और वृश्चिक राशिवालों को शुक्र; तुला और कुम्भ राशिवालों को ब्रहस्पतिवार घातक होता है । ये यात्रा आदि शुभ कार्य में निषिद्ध हैं ॥ ३१ ॥

घातवार चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशि
सू०	श०	चं०	बु०	श०	श०	बृ०	शु०	शु०	मं०	बृ०	शु०	घातवार

घातक नक्षत्र

मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम् ।
याम्यब्राह्मचशसार्पञ्च मेषादेर्घातभं न सत् ॥ ३२ ॥

अन्वयः—मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभं च (तथा) याम्यब्राह्मचेशसार्पं मेषादेः (क्रमात्) घातभं न सत् ॥ ३२ ॥

मेष राशिवालों को मघा, वृष राशिवालों को हस्त, मिथुन राशिवालों को स्वाती, कर्क राशिवालों को अनुराधा, सिंह राशिवालों को मूल, कन्या राशिवालों को श्रवण, तुला राशिवालों को शतभिष, वृश्चिक राशिवालों को रेवती, धनु राशिवालों को भरणी, मकर राशिवालों को रोहिणी, कुम्भ

राशिवालों को आर्द्रा और मीन राशिवालों को आश्लेषा नक्षत्र घातक होता है । ये यात्रा आदि में निषिद्ध हैं ॥ ३२ ॥

घातनक्षत्र चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशि
म०	ह०	स्वा०	अनु०	मू०	श्र०	श०	रे०	भ०	रो०	आ०	श्ले०	घातनक्षत्र

तिथियोगिनी

नव ९ भूम्यः १ शिव ११ वह्नयो ३ ऽक्ष ५ विश्वे ३१
ऽर्क १२ कृताः ४ शक्र १४ रसा ६ स्तुरङ्ग ७ तिथ्यः १५ ।
द्वि २ दिशो १० ऽमा ३० वसवश्च ८ पूर्वतः स्यु-
स्तिथयः सम्मुखवामगा न शस्ताः ॥ ३३ ॥

अन्वयः—नवभूम्यः, शिववह्नयः, अक्षविश्वे, अर्ककृताः शक्ररसाः, तुरंगतिथ्यः, द्विदिशः च (तथा) अमावसवः इमाः तिथयः पूर्वतः (पूर्वदिशमारभ्य क्रमेण) स्युः, एताः सम्मुखवामगाः न शस्ताः (भवन्ति) ॥ ३३ ॥

नवमी, परीवा पूर्व में; एकादशी, तृतीया आग्नेय में; पञ्चमी, त्रयोदशी दक्षिण में; द्वादशी, चौथि नैर्ऋत्य में; चतुर्दशी, छठि पश्चिम में; सप्तमी, पूर्णमासी वायव्य में; द्वितीया, दशमी उत्तर में, अमावास्या, अष्टमी ईशान दिशा में योगिनी-संज्ञक तिथियाँ हैं । यात्रा आदि में ये सम्मुख और वामभाग में शुभ नहीं हैं ॥ ३३ ॥

तिथियोगिनी चक्र

ई० ८ । ३०	पू० १ । ९	आ० ३ । ११
उ० २ । १०	तिथियोगिनी	द० ५ । १३
वा० ७ । १५	प० ६ । १४	नै० ४ । १२

घातलग्न

भूमि १ द्वय २ ब्ध्य ४ द्रि ७ दिक् १० सूर्या १२
ङ्ग ६ ष्टा ८ ङ्के ९ शा ११ ग्नि ३ शायकाः ५ ।
मेषादिघातलग्नानि यात्रायां वर्जयेत्सुधीः ॥ ३४ ॥

अन्वयः–भूमिद्वयब्ध्यद्रिदिक्सूर्याङ्गाष्टांकेशाग्निशायकाः (क्रमात्) मेषादिघातलग्नानि सुधीः यात्रायां वर्जयेत् ॥ ३४ ॥

मेष राशिवालों को मेष, वृषराशिवालों को वृष, मिथुन राशिवालों को कर्क, कर्क राशिवालों को तुला, सिंह राशिवालों को मकर, कन्या राशिवालों को मीन, तुला राशिवालों को कन्या, वृश्चिक राशिवालों को वृश्चिक, धनु राशिवालों को धनु, मकर राशिवालों को कुम्भ, कुम्भ-राशिवालों को मिथुन, मीन राशिवालों को सिंह लग्न घातक है। पण्डित को चाहिए कि यात्रा में इन लग्नों का त्याग करे ॥ ३४ ॥

घातलग्न चक्र

मे०	बृ०	मि०	क०	सिं०	कं०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशि
मे०	बृ०	क०	तु०	म०	मी०	कं०	वृ०	ध०	कुं०	मि०	सिं०	घातलग्न

कालपाश योग

कौबेरीतो वैपरीत्येन कालो वारेऽर्काद्य सम्मुखे तस्य पाशः ।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ यात्रायुद्धे सम्मुखे वर्जनीयौ ॥ ३५ ॥

अन्वयः–कौबेरीतः (उत्तरदिशमारभ्य क्रमेण) अर्काद्ये वारे कालः (स्यात्) तस्य सम्मुखे पाशः (स्यात्) एतौ [कालपाशौ] रात्रौ वैपरीत्येन गण्यौ (तौ) यात्रायुद्धे सम्मुखे वर्जनीयौ ॥ ३५ ॥

रविवार आदि में उत्तर दिशा से लेकर विपरीतक्रम से काल रहता है, अर्थात् रविवार के दिन उत्तर में, सोमवार के दिन वायव्य में, मंगल के दिन पश्चिम में, बुध के दिन नैर्ऋत्य में, बृहस्पति के दिन दक्षिण में, शुक्र के दिन आग्नेय में, शनैश्चर के दिन पूर्व दिशा में काल रहता है, और काल के सम्मुख पाश रहता है, अर्थात् रविवार के दिन दक्षिण में, सोमवार के दिन आग्नेय में, मंगल के दिन पूर्व में, बुध के दिन ईशान में, बृहस्पति के दिन उत्तर में, शुक्र के दिन वायव्य में, शनैश्चर के दिन पश्चिम दिशा में पाश रहता है। ये दोनों रात्रि में इससे विपरीत रहते हैं। जैसे रविवार की रात्रि में काल दक्षिण में और पाश उत्तर में रहता है। ऐसे ही सोमवार आदि में भी जानना चाहिए। ये दोनों यात्रा तथा युद्ध में सम्मुख वर्जनीय हैं ॥ ३५ ॥

कालपाशचक्र

र०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	वार
उ०	वा०	प०	नै०	द०	आ०	पू०	दिशा दिन में काल
द०	आ०	पू०	ई०	उ०	वा०	प०	दिशा दिन में पाश
द०	आ०	पू०	ई०	उ०	वा०	प०	दिशा रात्रि में काल
उ०	वा०	प०	नै०	द०	आ०	पू०	दिशा रात्रि में पाश

परिघदण्ड दोष

पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु सप्तसप्तानलर्क्षतः ।
वायव्याग्नेयदिक्संस्थं पारिघं नैव लङ्घयेत् ॥ ३६ ॥

अन्वयः—अमलर्क्षतः सप्त सप्त [नक्षत्राणि] पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु (ज्ञेयानि) (तत्र) वायव्याग्नेयदिक्संस्थं पारिघं नैव लंघयेत् ॥ ३६ ॥

चतुष्कोण चक्र बनाकर उसमें कृत्तिका से लेकर सात सात नक्षत्र चारों दिशाओं में लिखे, अर्थात् कृत्तिका से श्लेषा तक पूर्व में, मघा से विशाखा तक दक्षिण में, अनुराधा से श्रवण तक पश्चिम में और धनिष्ठा से भरणी तक उत्तर में । उसी चक्र में वायव्य कोण से आग्नेय कोण में गई हुई रेखा का परिघदण्ड नाम है यात्रा में उसका उल्लंघन न करे, अर्थात् उत्तर और पूर्व दिशा के नक्षत्रों में दक्षिण और पश्चिम की यात्रा तथा दक्षिण और पश्चिम दिशा के नक्षत्रों में उत्तर और पूर्व दिशा की यात्रा न करे ॥ ३६ ॥

परिघदण्ड चक्र

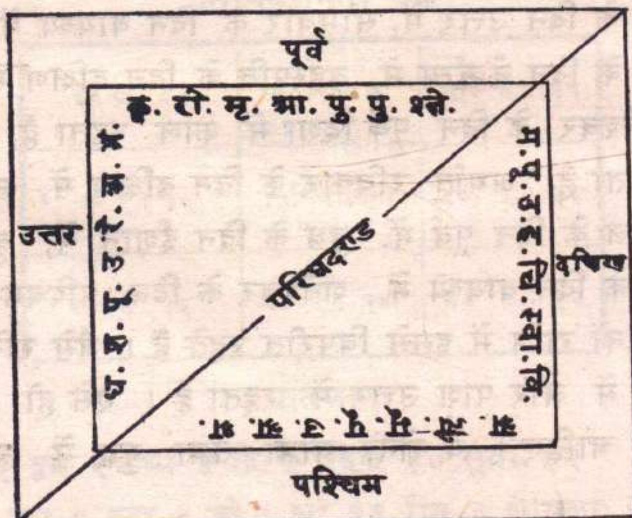

आग्नेयादि कोणों की यात्रा तथा परिघदण्ड का अपवाद

अग्नेर्दिशं नृप इयात्पुरुहूतदिग्भै-
रेवं प्रदक्षिणगता विदिशोऽथ कृत्ये ।
आवश्यकेऽपि परिघं प्रविलङ्घ्य गच्छे-
च्छूलं विहाय यदि दिक्तनुशुद्धिरस्ति ॥ ३७ ॥

अन्वयः—नृपः पुरुहूतदिग्भैः अग्नेः दिशं इयात्, एवं प्रदक्षिणगताः विदिशः (इयात्), अथ आवश्यके कृत्ये शूलं विहाय यदि दिक्तनुशुद्धिः अस्ति, तदा परिघं प्रविलंघ्य अपि गच्छेत् ॥ ३७ ॥

राजा को चाहिए कि पूर्व दिशा के नक्षत्रों में आग्नेय कोण की यात्रा करे, दक्षिण दिशा के नक्षत्रों में नैर्ऋत्य कोण की, पश्चिम दिशा के नक्षत्रों में वायव्य कोण की, और उत्तर दिशा के नक्षत्रों में ईशान कोण की यात्रा करे। यदि कोई अत्यावश्यक कार्य हो तो दिक्शूल और परिघदण्ड का उल्लंघन करके भी यात्रा करे। यदि दिग्लग्न शुद्ध हो, अर्थात् मेषादि चार चार राशियाँ पूर्वादि चारों दिशाओं की स्वामिनी हैं, इस क्रम से यदि लग्न सम्मुख पड़ती हो और लग्न से आठवें आदि स्थानों में कोई अनिष्ट ग्रह न हो। यथा श्रवण नक्षत्र में पूर्व की यात्रा आवश्यक हो तो मेष या सिंह या धन लग्न में करे ॥ ३७ ॥

परिघदण्ड का अन्य अपवाद तथा केन्द्र आदि स्थानों में वक्रीग्रह का निषेध

मैत्रार्कपुष्याश्विनिभैर्निरुक्ता यात्रा शुभा सर्वदिशासु तज्ज्ञैः ।
वक्रीग्रहः केन्द्रगतोऽस्यवर्गो लग्ने दिनं चास्य गमे निषिद्धम् ॥ ३८ ॥

अन्वयः—मैत्रार्कपुष्याश्विनिभैः सर्वदिशासु तज्ज्ञैः यात्रा शुभा निरुक्ता। वक्री ग्रहः केन्द्रगतः (वा) लग्ने अस्य वर्गः च अस्य दिनं गमे निषिद्धम् ॥ ३८ ॥

अनुराधा, हस्त, पुष्य, अश्विनी इन नक्षत्रों में सब दिशाओं की यात्रा पण्डितों ने शुभ कही है। केन्द्र में और लग्न में स्थित वक्रीग्रह का षड्वर्ग और वक्रीग्रह का दिन, ये सब यात्रा में निषिद्ध हैं ॥ ३८ ॥

अयनशुद्धि

सौम्यायने सूर्यविधू तदोत्तरां प्राचीं व्रजेत्तौ यदि दक्षिणायने ।
प्रत्यग्यमाशां च तयोर्दिवानिशं भिन्नायनत्वेऽथ वधोऽन्यथा भवेत् ॥ ३९ ॥

अन्वयः—यदि सूर्यविधू सौम्यायने तदा उत्तरां प्राचीं व्रजेत्, यदि तौ दक्षिणायने तदा प्रत्यग्यमाशां व्रजेत्। अथ च तयोः भिन्नायनत्वे दिवानिशं व्रजेत्, अन्यथा वधः भवेत् ॥ ३९ ॥

जब सूर्य और चन्द्रमा उत्तरायण में हों तब उत्तर और पूर्व की यात्रा, और जब दक्षिणायन में हों तब पश्चिम और दक्षिण की यात्रा करे, और यदि सूर्य और चन्द्रमा का अयन भिन्न हो, अर्थात् एक दक्षिणायन और दूसरा उत्तरायण हो तो कहे हुए क्रम से सूर्य के अयन की दिशाओं की यात्रा दिन में और चन्द्रमा के अयन की दिशाओं की यात्रा रात्रि में करे। इससे अन्यथा यात्रा करनेवाले का नाश होता है ॥ ३९ ॥

सम्मुख शुक्रदोष

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति गोलभ्रमाद्वाथ ककुब्भसङ्घे।
त्रिधोच्यते सम्मुख एव शुक्रो यत्रोदितस्तां तु दिशं न यायात् ॥ ४० ॥

अन्वयः—यस्यां दिशि उदेति गोलभ्रमाद्, वा यत्र दिशि याति, अथवा ककुब्भसंघे (यत्र तिष्ठति), त्रिधा शुक्रः सम्मुख एव उच्यते। शुक्रः यत्र दिशि उदितः तां दिशं तु न यायात् ॥ ४० ॥

जिस दिशा में उदित हो, अथवा गोलभ्रम* वश होकर जिस दिशा में जाता हो, अथवा दिग्द्वार नक्षत्रों के क्रम से जिस दिशा में हो, इन तीन प्रकार से शुक्र सम्मुख कहा जाता है। परन्तु राजा को चाहिए कि जिस दिशा में शुक्र उदित हो उस दिशा की यात्रा न करे ॥ ४० ॥

वक्रनीचादिस्थित शुक्रदोष

वक्रास्तनीचोपगते भृगोः सुते राजा व्रजन्याति वशं हि विद्विषाम्।
बुधोऽनुकूलो यदि तत्र संचलन् रिपूञ्जयेन्नैव जयः प्रतीन्दुजे ॥ ४१ ॥

अन्वयः—भृगो सुते वक्रास्तनीचोपगते व्रजन् राजा हि विद्विषां वशंयाति। यदि बुधः अनुकूलः तत्र संचलन् रिपून् जयेत्, प्रतीन्दुजे (सम्मुखबुधे) जयः नैव ॥ ४१ ॥

यदि वक्रमार्ग तथा नीचस्थान में शुक्र के रहते यात्रा करे तो राजा शत्रुओं के वशीभूत होता है। परन्तु शुक्र के वक्रादि रहते भी यदि बुध अनुकूल अर्थात् पीछे स्थित हो तो यात्रा करनेवाला राजा शत्रुओं को अवश्य ही जीत लेता है, और यदि बुध सम्मुख हो तो जय नहीं होती ॥ ४१ ॥

---

*मेष से लेकर कन्याराशि पर्यन्त सूर्य के रहते उत्तर गोल और तुला से लेकर मीनराशिपर्यन्त सूर्य के रहते दक्षिण गोल होता है।

कालविशेष में शुक्रदोषाभाव तथा अस्तादिविचार

यावच्चन्द्रः पूषभात्कृत्तिकाद्ये पादे शुक्रोऽन्धो न दुष्टोऽग्रदक्षे ।
मध्ये मार्गं भार्गवास्तेऽपि राजा तावत्तिष्ठेत्संमुखत्वेऽपि तस्य ॥ ४२ ॥

अन्वयः—पूषभात् कृत्तिकाद्ये पादे यावत् चन्द्रः (तिष्ठति) तावत् शुक्रः अन्धः (भवति तदा) अग्रदक्षे दुष्टः न (भवेत्), मध्ये मार्गं अपि भार्गवास्ते अपि वा तस्य सम्मुखत्वे राजा तावत् तिष्ठेत् ॥ ४२ ॥

जब तक चन्द्रमा रेवती से लेकर कृत्तिका के पहिले चरण तक रहता है तब तक शुक्र अन्धा रहता है। इस कारण सम्मुख व दाहिने दोषकारक नहीं होता। कदाचित् मार्ग ही में शुक्र अस्त हो तो राजा को चाहिए कि जब तक फिर उदित न हो तब तक वहीं टिका रहे और उदित होने पर भी यदि सम्मुख पड़ता हो तो जब तक फिर पीछे या बायें न हो तब तक वहीं टिका रहे ॥ ४२ ॥

लग्नविशेष का त्याग

कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ सर्वथा यत्नतो बुधैः ।
तत्र प्रयातुर्नृपतेरर्थनाशः पदे पदे ॥ ४३ ॥

अन्वयः—बुधैः यत्नतः सर्वथा कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ, (यतः) तत्र प्रयातुः नृपतेः पदे-पदे अर्थनाशः (स्यात्) ॥ ४३ ॥

पण्डितों को चाहिए कि यत्नपूर्वक कुम्भ लग्न और कुम्भराशि का नवांश इन दोनों को यात्रा में त्याग दें, क्योंकि इनमें यात्रा करनेवाले राजा का धन अथवा प्रयोजन पद-पद में नष्ट होता है ॥ ४३ ॥

मीन और मीन के नवांश का फल तथा शुभलग्न

अथ मीनलग्न उत वा तदंशके चलितस्य वक्रमिह वर्त्म जायते ।
जनिलग्नजन्मभपती शुभग्रहौ भवतस्तदा तदुदये शुभो गमः ॥ ४४ ॥

अन्वयः—अथ मीनलग्ने उत वा तदंशके चलितस्य वर्त्म इह वक्र जायते । यदि जनिलग्नजन्मभपती शुभग्रहौ भवतः तदा तदुदये गमः शुभः (स्यात्) ॥ ४४ ॥

मीन लग्न अथवा मीन राशि के नवांश में यात्रा करनेवाला मार्ग भूलकर टेढ़े मार्ग से यात्रा करता है। जन्म लग्न और जन्मराशि के स्वामी शुभ ग्रह हों और जिस लग्न में स्थित हों उसमें की हुई यात्रा शुभ होती है ॥ ४४ ॥

अन्य अनिष्ट लग्न

जन्मराशितनुतोऽष्टमेऽथवा स्वारिभाच्च रिपुभे तनुस्थिते ।
लग्नगास्तदधिपा यदाथवा स्युर्गतं हि नृपतेर्मृतिप्रदम् ॥ ४५ ॥

अन्वयः—जन्मराशितनुतः अष्टमे अथवा स्वारिभात् रिपुभे तनुस्थिते, अथवा तदधिपाः यदा लग्नगाः स्युः (तदा) नृपतेः गतं [गमनं] हि मृतिप्रदं स्यात् ॥ ४५ ॥

जन्मराशि से या जन्मलग्न से आठवीं लग्न में अथवा शत्रु की जन्मराशि या जन्मलग्न से छठी लग्न में अथवा इन राशियों के स्वामी यदि लग्न में हों तो यात्रा करनेवाले राजा की यात्रा मृत्यु देनेवाली होती है ॥ ४५ ॥

अन्य शुभलग्न

लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमस्थे यात्रा प्रोक्ता वाञ्छितार्थैकदात्री ।
अम्भोराशौ वा तदंशे प्रशस्तं नौकायानं सर्वसिद्धिप्रदापि ॥ ४६ ॥

अन्वयः—लग्ने अपि वा चन्द्रे, वर्गोत्तमस्थे वाञ्छितार्थैकदात्री यात्रा प्रोक्ता । अम्भोराशौ वा तदंशे नौकायानं प्रशस्तं सर्वसिद्धिप्रदायि स्यात् ॥ ४६ ॥

मीन और कुम्भ को छोड़ अन्य लग्न, अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश में हो तो यात्रा वाञ्छित वस्तु देनेवाली होती है । यदि नाव में यात्रा करना हो तो जलचर लग्न में या जलचर राशि के नवांश में यात्रा करे । सब काम सिद्ध होते हैं ॥ ४६ ॥

सम्मुख तथा पृष्ठ गत लग्न

दिग्द्वारभे लग्नगते प्रशस्ता यात्रार्थदात्री जयकारिणी च ।
हानिं विनाशं रिपुतो भयं च कुर्यात्तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने ॥ ४७ ॥

अन्वयः—दिग्द्वारभे लग्नगते सति यात्रा प्रशस्ता अर्थदात्री च पुनः जयकारिणी (स्यात्) तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने यात्रा हानिं, विनाशं, च रिपुतः भयं कुर्यात् ॥ ४७ ॥

यात्राकाल में दिग्द्वार राशि लग्न में हो, अर्थात् सम्मुख या दाहिने हो तो यात्रा शुभ, धनादि की देनेवाली तथा विजय करानेवाली होती है, और यदि वही दिग्द्वार राशि पीछे या बायें हो तो यात्रा हानि, विनाश और शत्रु से भय देनेवाली होती है ॥ ४७ ॥

शुभलग्न

राशिः स्वजन्मसमये शुभसंयुतो यो
यः स्वारिभान्निधनगोऽपि च वेशिसंज्ञः ।

लग्नोपगः स गमने जयदोऽथ भूप-
योगैर्गमो विजयदो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥ ४८ ॥

अन्वयः—स्वजन्मसमये यः राशिः शुभसंयुतः, यः स्वारिभात् निधनगः, अपि च यः वेशिसंज्ञः स लग्नोपगः जयदः (स्यात्)। अथ भूपयोगैः गमः मुनिभिः विजयदः प्रदिष्टः ॥ ४८ ॥

यात्रा करनेवाले के जन्मकाल में जो राशि शुभ ग्रहों से संयुक्त हो, अथवा जो राशि शत्रु की जन्मराशि से या जन्मलग्न से आठवीं हो, अथवा जो राशि वेशिसंज्ञक अर्थात् सूर्य से दूसरे स्थान में हो, इन तीनों में से जो राशि लग्न में हो वह यात्रा में विजय देनेवाली होती है। अथवा जातक में कहे हुए राजयोगों में जो यात्रा होती है उसे भी मुनियों ने विजय देनेवाली कही है ॥ ४८ ॥

दिशाओं के स्वामी

सूर्यः सितो भूमिसुतोऽथ राहुः शनिः शशी ज्ञश्च बृहस्पतिश्च ।
प्राच्यादितो दिक्षु विदिक्षु चापि दिशामधीशाः क्रमतः प्रदिष्टाः ॥ ४९ ॥

अन्वयः—अथ सूर्यः, सितः, भूमिसुतः, राहुः, शनिः, शशीः, ज्ञः च बृहस्पतिः, दिक्षु, विदिक्षु अपि च प्राच्यादितः दिशां प्रदिष्टाः ॥ ४९ ॥

सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनैश्चर, चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति ये आठ ग्रह क्रम से पूर्वादि दिशाओं के तथा कोणों के स्वामी कहे गये हैं ॥ ४९ ॥

दिक्स्वामिचक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०
सूर्य	शुक्र	मंगल	राहु	शनि	चन्द्र	बुध	गुरु

दिगीश कहने का प्रयोजन

केन्द्रे दिगधीशे गच्छेदवनीशः ।
लालाटिनि तस्मिन्नेयादरिसेनाम् ॥ ५० ॥

अन्वयः—दिगधीशे केन्द्रे अवनीशः गच्छेत्। तस्मिन् [दिगधीशे] लालाटिनि (सति) अरिसेनां न इयात् ॥ ५० ॥

जिस दिशा को यात्रा करनी हो उस दिशा का स्वामी यदि केन्द्र में स्थित हो तो राजा यात्रा करे और यदि दिशा का स्वामी लालाटिक योग-कारक हो तो राजा शत्रु की सेना पर चढ़ाई न करे ॥ ५० ॥

लालाटिक योग

प्राच्यादौ तरणिस्तनौ भृगुसुतो लाभव्यये भूसुतः
कर्मस्थोऽथ तमो नवाष्टमगृहे सौरिस्तथा सप्तमे ।
चन्द्रः शत्रुगृहात्मजेऽपि च बुधः पातालगो गीष्पति-
वित्तभ्रातृगृहे विलग्नसदनाल्लालाटिकाः कीर्तिताः ॥ ५१ ॥

अन्वयः—अथ तरणिः तनौ, भृगुसुतः लाभव्ययेः, भूसुतः कर्मस्थः, तमः नवाष्टमगृहे, तथा सौरिः सप्तमे, चन्द्रः शत्रुगृहात्मजे, अपि च बुधः पातालगः, गीष्पतिः वित्तभ्रातृगृहे (स्थितः), (इमे) विलग्नसदनात् प्राच्यादौ (क्रमेण) लालाटिकाः कीर्तिताः ॥ ५१ ॥

पूर्व दिशा को यात्रा करनेवाले को लग्न में स्थित सूर्य, आग्नेय दिशा को यात्रा करनेवाले को गेरहवें या बारहवें स्थान में स्थित शुक्र, दक्षिणा को यात्रा करनेवाले को दशवें स्थान में स्थित मंगल, नैर्ऋत्य को यात्रा करनेवाले को नवें या आठवें स्थान में स्थित राहु, पश्चिम को यात्रा करनेवाले को सातवें स्थान में स्थित शनैश्चर, वायव्य दिशा को यात्रा करनेवाले को छठे या पाँचवें स्थान में स्थित चन्द्रमा, उत्तर दिशा को यात्रा करनेवाले को चौथे स्थान में स्थित बुध और ईशान दिशा को यात्रा करनेवाले को तीसरे या दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति लालाटिक हैं। लालाटिक योग में यात्रा न करनी चाहिए ॥ ५१ ॥

प्रास्थानिक यात्रायोग

मृगे गत्वा शिवे स्थित्वादृतौ गच्छन् जयेद्रिपून् ।
मैत्रे प्रस्थाय शाक्रे हि स्थित्वा मूले व्रजंस्तथा ॥ ५२ ॥
प्रस्थाय हस्तेऽनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा जयार्थी प्रवसेद्द्विदैवे ।
वस्वन्त्यपुष्ये निजसीम्नि चैकरात्रौषितः क्ष्मां लभतेऽवनीशः ॥ ५३ ॥

अन्वयः—मृगे गत्वा शिवे स्थित्वा अदितौ गच्छन् रिपून् जयेत् । तथा मैत्रे प्रस्थाय शाक्रे स्थित्वा मूले व्रजन् हि रिपून् जयेत् ॥ जयार्थी अवनीशः हस्ते प्रस्थाय अनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा द्विदैवे प्रवसेत् च [तथा] वस्वन्त्यपुष्ये निजसीम्नि एकरात्रोषितः अवनीशः क्ष्मां लभते ॥ ५२-५३ ॥

जिस दिशा को यात्रा करना हो उसी दिशा को अपने घर से मृगशिरा नक्षत्र में चलकर आर्द्रा नक्षत्र में किसी के घर में टिककर पुनर्वसु नक्षत्र में वहाँ से भी यात्रा करे, और अनुराधा नक्षत्र में अपने घर से चलकर ज्येष्ठा नक्षत्र में कहीं टिककर मूल नक्षत्र में वहाँ से भी यात्रा करे तो शत्रुओं को

जीते ॥ ५२ ॥ ऐसे ही हस्त नक्षत्र में अपने घर से चलकर चित्रा, स्वाती इन दो नक्षत्रों में कहीं टिककर विशाखा नक्षत्र में वहाँ से भी यात्रा करे और धनिष्ठा, रेवती, पुष्य इन नक्षत्रों में अपने घर से चलकर गाँव की सीमा पर एक रात्रि टिककर वहाँ से यात्रा करे तो वह राजा शत्रु का राज्य जीत लेता है ॥ ५३ ॥

समयबल

उषःकालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना ।
विनोत्तरां निशीथः सन् याने याम्यां विनाऽभिजित् ॥ ५४ ॥

अन्वयः—पूर्वां विना उषःकालः, पश्चिमां विना गोधूलिः, उत्तरां विना निशीथः याने [यात्रायां] सन् स्यात्, तथा याम्यां विना अभिजित् (मुहूर्तः) सन् स्यात् ॥ ५४ ॥

पूर्व दिशा को छोड़ अन्य दिशाओं को यात्रा करने के लिए प्रातःकाल, पश्चिम को छोड़ अन्य दिशाओं को यात्रा करने के लिए गोधूलिकाल, उत्तर दिशा को छोड़ अन्य दिशाओं को यात्रा करने के लिए आधी रात का समय और दक्षिण दिशा को छोड़ अन्य दिशाओं को यात्रा करने के लिए अभिजित् मुहूर्त्त शुभ होता है, अर्थात् प्रातःकाल पूर्व दिशा को, सायंकाल पश्चिम दिशा को, आधीरात में उत्तर दिशा को, मध्याह्न में दक्षिण दिशा को अभिजित् मुहूर्त्त में यात्रा न करनी चाहिए ॥ ५४ ॥

लग्नादि बारह भावों के नाम

लग्नाद्भावाः क्रमाद्देह १ कोश २ धानुष्क ३ वाहनम् ४ ।
मन्त्रो ५ ऽरि ६ मार्ग ७ आयुश्च ८
हृत ९ व्यापारा १० गम ११ व्ययाः १२ ॥ ५५ ॥

अन्वयः—देहकोशधानुष्कवाहनम्, मन्त्रः, अरिः, मार्गः, आयुः च [तथा] हृद्व्यापारागमव्ययाः [इमे] क्रमात् लग्नात् भावाः (ज्ञेयाः) ॥ ५५ ॥

लग्नादि क्रम से देह १, कोश २, धानुष्क ३, वाहन ४, मन्त्र ५, अरि ६, मार्ग ७, आयु ८, हृदय ९, व्यापार १०, आगम ११, व्यय १२ ये बारह भाव होते हैं, अर्थात् लग्न की देह, दूसरे की कोश, तीसरे की धानुष्क, चौथे का वाहन, पाँचवें की मन्त्र, छठे की अरि, सातवें की मार्ग, आठवें की आयु, नवें की हृदय, दशवें की व्यापार, गेरहवें की आगम, बारहवें की व्यय संज्ञा हैं ॥ ५५ ॥

यात्रा में ग्रहों का शुभाशुभफल

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभास्स्युर्याने पापास्त्र्यायषट्खेषु चन्द्रः ।
नेष्टो लग्नान्त्यारिरन्ध्रे शनिः खेऽस्ते शुक्रो लग्नेट् नगान्त्यारिरन्ध्रे ॥ ५६ ॥

अन्वयः—केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः, त्र्यायषट्खेषु पापाः याने शुभाः स्युः, लग्नान्त्यारिरन्ध्रे चन्द्रः नेष्टः (स्यात्), खे शनिः नेष्टः, अस्ते शुक्रः नेष्टः, नगान्त्यारिरन्ध्रे लग्नेट् नेष्टः स्यात् ॥ ५६ ॥

यात्रा में लग्न से पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, पाँचवें, नवें इन स्थानों में स्थित शुभग्रह और तीसरे, छठे, दशवें, गेरहवें इन स्थानों में स्थित पापग्रह शुभ होते हैं। लग्न, बारहवें, छठे, आठवें, इन स्थानों में स्थित चन्द्रमा, दशवें स्थान में स्थित शनैश्चर, सातवें स्थान में स्थित शुक्र और सातवें, बारहवें, छठे, आठवें इन स्थानों में स्थित लग्न का स्वामी अशुभ होता है ॥ ५६ ॥

यात्रा के अधिकारी

योगात्सिद्धिर्धरणिपतीनामृक्षगुणैरपि भूदेवानाम् ।
चौराणामपि शकुनैरुक्ता भवति मुहूर्त्तादपि मनुजानाम् ॥ ५७ ॥

अन्वयः—धरणिपतीनां योगात्, भूदेवानां ऋक्षगुणैः, अपि चौराणां शुभशकुनैः सिद्धिः उक्ता, मनुजानां मुहूर्त्तात् अपि सिद्धिः भवति ॥ ५७ ॥

आगे कहे हुए योग-लग्न-बल से राजाओं की, चन्द्र-तारा-बल-सहित विहित नक्षत्रादि में की हुई यात्रा ब्राह्मणों की, आगे कहे हुए शकुनों से चोरों की और मुहूर्त्त-बल से अन्य मनुष्यों की यात्रा सिद्धिदायक होती है ॥ ५७ ॥

योगयात्रा

सहजे रविर्दशमे शशी तथा शनिमङ्गलौ रिपुगृहे सितः सुते ।
हिबुके बुधो गुरुरपीह लग्नगः स जयत्यरीन् प्रचलितोऽचिरान्नृपः ॥ ५८ ॥

अन्वयः—रविः सहजे, शशी दशमे, तथा शनिमगलौ रिपुगृहे, सितः सुते, बुधः हिबुके, गुरुः अपि लग्नगः (यदि स्यात्) इह (अस्मिन् समये यः) नृपः प्रचलितः स अचिरात् अरीन् जयति ॥ ५८ ॥

यदि लग्न से तीसरे स्थान में शुक्र और दशवें स्थान में चन्द्रमा हो, छठे स्थान में शनि, मंगल ये दोनों हों, पाँचवें स्थान में शुक्र, चौथे स्थान में बुध, लग्न में बृहस्पति हो, ऐसे योग में चला हुआ राजा शीघ्र ही अपने शत्रुओं को जीतता है ॥ ५८ ॥

भ्रातरि सौरिर्भूमिसुतो वैरिणि लग्ने देवगुरुः ।
आयगतेऽर्के शत्रुजयश्चेदनुकूलो दैत्यगुरुः ॥ ५९ ॥

अन्वयः—भ्रातरि सौरिः, वैरिणि भूमिसुतः, लग्ने देवगुरुः, आयगतः अर्कः, च (तथा) चेत् दैत्यगुरुः अनुकूलः (तदा) शत्रुजयः स्यात् ॥ ५९ ॥

अथवा तीसरे स्थान में शनैश्चर, छठे स्थान में मंगल, लग्न में बृहस्पति, ग्यारहवें स्थान में सूर्य हो और यदि शुक्र पीछे या वामभाग में हो, ऐसे योग में चले हुए राजा की जय होती है ॥ ५९ ॥

तनौ जीव इन्दुर्मृतौ वैरिगोऽर्कः प्रयातो महीन्द्रो जयत्येव शत्रून ॥ ६० ॥

अन्वयः—(यदि) तनौ जीवः, मृतौ इन्दुः, अर्कः वैरिगः (तदा) प्रयातः महीन्द्रः शत्रून् जयत्येव ॥ ६० ॥

अथवा लग्न में बृहस्पति, आठवें स्थान में चन्द्रमा, छठे स्थान में सूर्य हो, ऐसे योग में यात्रा करनेवाला राजा शत्रुओं को अवश्य ही जीतता है ॥ ६० ॥

लग्नगतः स्याद्देवपुरोधाः । लाभधनस्थैः शेषनभोगैः ॥ ६१ ॥

अन्वयः—(यदि) देवपुरोधाः लग्नगतः स्यात्, शेषनभोगैः लाभधनस्थैः (तदा राज्ञो विजयः) ॥ ६१ ॥

अथवा यदि लग्न में बृहस्पति हो और गेरहवें, दूसरे इन दोनों स्थानों में शेष सब ग्रह हों, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा को विजय होती है ॥ ६१ ॥

द्यूने चन्द्रे समुदयगेऽर्के जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे ।
ईदृग्योगे चलति नरेशो जेता शत्रून् गरुड इवाहीन् ॥ ६२ ॥

अन्वयः—चन्द्रे द्यूने, अर्के समुदयगे, जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे, ईदृग्योगे नरेशः चलति (तदा) गरुडः अहीन् इव शत्रून् जेता ॥ ६२ ॥

अथवा यदि सातवें स्थान में चन्द्रमा, लग्न में सूर्य और गुरु, शुक्र, बुध ये तीनों ग्रह दूसरे स्थान में हों ऐसे योग में चलनेवाला राजा इस प्रकार शत्रुओं को जीतता है जैसे गरुड़ सर्पों को जीतता है ॥ ६२ ॥

वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः ।
लग्नगते भृगुपुत्रे स्युः शलभा इव सर्वे ॥ ६३ ॥

अन्वयः—शशिपुत्रः वित्तगतः वासरनाथः भ्रातरि (स्थितः), भृगुपुत्रे लग्नगते (सति) सर्वे (शत्रवः) शलभाः इव स्युः ॥ ६३ ॥

अथवा दूसरे स्थान में बुध, तीसरे स्थान में सूर्य और लग्न में शुक्र हो, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा के सामने शत्रुगण इस प्रकार के हो जाते हैं जैसे अग्नि के सामने शलभ ।। ६३ ।।

उदये रविर्यदि सौरिररिगः शशी दशमेऽपि ।
वसुधापतिर्यदि याति रिपुवाहिनी वशमेति ।। ६४ ।।

अन्वयः—यदि रविः उदये, सौरिः अरिगः, शशी दशमे अपि (स्थितः) (अत्र) यदि वसुधापतिः याति (तदा) रिपुवाहिनी वशं एति ।। ६४ ।।

अथवा यदि लग्न में सूर्य, छठे स्थान में शनैश्चर वा दशवें स्थान में चन्द्रमा हो, ऐसे योग में यदि राजा यात्रा करे तो शत्रु की सेना उसके अधीन हो जाती है ।। ६४ ।।

तनौ शनिकुजौ रविर्दशमभे बुधो भृगुसुतोऽपि लाभदशमे ।
त्रिलाभरिपुभेषु भूसुतशनी गुरुज्ञभृगुजास्तथा बलयुताः ।। ६५ ।।

अन्वयः—तथा तनौ शशिकुजौ, दशमभे रविः, बुधः भृगुसुतोपि लाभदशमे, भूसुतशनी त्रिलाभरिपुभेषु (स्थितौ) गुरुज्ञभृगुजाः बलयुताः (तदा जयः स्यात्) ।। ६५ ।।

अथवा यदि लग्न में शनैश्चर, मंगल ये दोनों स्थित हों, दशवें स्थान में सूर्य हो और दशवें या गेरहवें स्थान में बुध वा शुक्र हो, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा की विजय होती है। अथवा तीसरे, छठे, गेरहवें इन तीनों स्थानों में कहीं मंगल, शनैश्चर हों और बृहस्पति, बुध, शुक्र ये बली होकर कहीं भी स्थित हों, ऐसे योग में भी यात्रा करनेवाले राजा की विजय होती है ।। ६५ ।।

समुदयगे विबुधगुरौ मदनगते हिमकिरणे ।
हिबुकगतौ बुधभृगुजौ सहजगताः खलखचराः ।। ६६ ।।

अन्वयः—विबुधगुरौ समुदयगे, हिमकिरणे मदनगते (सति) यदि बुधशुक्रौ हिबुकगतौ, खलखचराः सहजगताः (तदा जयः स्यात्) ।। ६६ ।।

अथवा बृहस्पति यदि लग्न में हो और चन्द्रमा सातवें स्थान में हो, और बुध, शुक्र ये दोनों चौथे स्थान में स्थित हों और तीसरे स्थान में पापग्रह स्थित हों, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा की विजय होती है ।। ६६ ।।

त्रिदशगुरुस्तनुगो मदने हिमकिरणो रविरायगतः ।
सितशशिजावपि कर्मगतौ रविसुतभूमिसुतौ सहजे ।। ६७ ।।

अन्वयः—त्रिदशगुरुः तनुगः, हिमकिरणः मदने, रविः आयगतः, सितशशिजौ कर्मगतौ, रविसुतभूमिसुतौ सहजे, (तदापि जयः स्यात्) ॥ ६७ ॥

अथवा यदि बृहस्पति लग्न में, चन्द्रमा सातवें स्थान में, सूर्य गेरहवें स्थान में और शुक्र, बुध ये दोनों दशवें स्थान में, शनैश्चर और मंगल ये दोनों तीसरे स्थान में स्थित हों, ऐसे योग में यात्रा करने से शत्रु राजा के अधीन हो जाते हैं ॥ ६७ ॥

देवगुरौ वा शशिनि तनुस्थे वासरनाथे रिपुभवनस्थे ।
पञ्चमगेहे हिमकरपुत्रः कर्मणि सौरिः सुहृदि सितश्च ॥ ६८ ॥

अन्वयः—देवगुरौ वा शशिनि तनुस्थे, वासरनाथे रिपुभवनस्थे, हिमकरपुत्रः पञ्चमगेहे, सौरिः कर्मणि, च सितः सुहृदि (तदापि जयः स्यात्) ॥ ६८ ॥

अथवा बृहस्पति या शुक्र लग्न में, सूर्य छठे स्थान में, बुध पाँचवें स्थान में, शनैश्चर दशवें स्थान में तथा शुक्र चौथे स्थान में हो, ऐसे योग में राजा की यात्रा माता के समान हितकारिणी होती है ॥ ६८ ॥

हिमकिरणसुतो बली चेत्तनौ त्रिदशपतिगुर्रुहि केन्द्रस्थितः ।
व्ययगृहसहजारिधर्मस्थितो यदि च भवति निर्बलश्चन्द्रमाः ॥ ६९ ॥

अन्वयः—चेत् बली हिमकिरणसुतः तनौ, त्रिदशपतिगुरुः केन्द्रस्थितः, च यदि निर्बलः चन्द्रमाः व्ययगृहसहजारि धर्मस्थितो भवति (तदापि जयः स्यात्) ॥ ६९ ॥

अथवा यदि बली होकर बुध लग्न में और बृहस्पति केन्द्र में स्थित हो और चन्द्रमा निर्बल होकर बारहवें, तीसरे, छठे, नवें इनमें से किसी स्थान में स्थित हो, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा की विजय होती है ॥ ६९ ॥

अशुभखगैरनवाष्टमदस्थैर्हिबुकसहोदरलाभगृहस्थः ।
कविरिह केन्द्रगगीष्पतिदृष्टो वसुचयलाभकरः खलु योगः ॥ ७० ॥

अन्वयः—अशुभखगैः अनवाष्टमदस्थैः, कविः हिबुक सहोदरलाभगृहस्थः केन्द्रगगीष्पतिदृष्टः इह खलु (निश्चयेन) वसुचयलाभकरः योगः स्यात् ॥ ७० ॥

अथवा यदि नवें, आठवें, सातवें इन स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में पापग्रह स्थित हों और चौथे, तीसरे, गेरहवें इन स्थानों में स्थित शुक्र को केन्द्रस्थ बृहस्पति देखता हो तो यह योग यात्रा करनेवाले को धनसमूह का लाभ कराता है ॥ ७० ॥

रिपुलग्नकर्महिबुके शशिजे परिवीक्षिते शुभनभोगमनैः ।
व्ययलग्नमन्मथगृहेषु जयः परिवर्जितेष्वशुभनामधरैः ॥ ७१ ॥

अन्वयः—शशिजे रिपुलग्नकर्महिबुके (स्थिते) शुभनभोगमनैः परिवीक्षिते, अशुभनामधरैः (पापैः) व्ययलग्नमन्मथगृहेषु परिवर्जितेषु [स्थानेषु] स्थितैः (जयः स्यात्) ॥ ७१ ॥

अथवा शुभग्रहों से दृष्ट बुध छठे या लग्न या दशवें या चौथे स्थान में हो और लग्न, बारहवें, सातवें इन स्थानों को छोड़ अन्यत्र शुभग्रह स्थित हों, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा की जय होती है ॥ ७१ ॥

लग्ने यदि जीवः पापा यदिलाभे कर्मण्यपि चेद्राज्याधिगमः स्यात्।
द्यूने बुधशुक्रौ चन्द्रो हिबुके वा तद्वत्फलमुक्तं सर्वैर्मुनिवर्यैः ॥ ७२ ॥

अन्वयः—यदि जीवः लग्ने, यदि पापाः लाभे अपि वा कर्मणि चेत् (तदा) राज्याधिगमः स्यात्। वा बुधशुक्रौ द्यूने, चन्द्रः हिबुके (तदा) सर्वैः मुनिवर्यैः तद्वत् फलं उक्तम् ॥ ७२ ॥

अथवा यदि लग्न में बृहस्पति हो और पापग्रह गेरहवें, दशवें इन दोनों स्थानों में हों, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा को राज्य मिलती है। अथवा बुध, शुक्र ये दोनों सातवें स्थान में हों और चन्द्रमा चौथे स्थान में हो, ऐसे योग में यात्रा करनेवाले राजा को भी राज्य मिलती है ॥ ७२ ॥

रिपुतनुनिधने शुक्रजीवेन्दवो ह्यथ बुधभृगुजौ तुर्यगेहस्थितौ।
मदनभवनगश्चन्द्रमा वाम्बुगः शशिसुतभृगुजान्तर्गतश्चन्द्रमाः ॥ ७३ ॥

अन्वयः—शुक्रजीवेन्दवः रिपुतनुनिधने (स्थिताः) (तदा जयः स्यात्) वा बुधभृगुजौ तुर्यगेहस्थितौ, चन्द्रमाः मदनभवनगः (तदा जयः स्यात्) ॥ ७३ ॥

अथवा लग्न में बृहस्पति, छठे स्थान में शुक्र, आठवें स्थान में चन्द्रमा हो, अथवा बुध, शुक्र ये दोनों चौथे स्थान में और चन्द्रमा सातवें स्थान में हो, अथवा चन्द्रमा चौथे स्थान में स्थित होकर बुध और शुक्र के मध्य में हो, इन योगों में की हुई यात्रा जयकारिणी होती है ॥ ७३ ॥

सितजीवभौमबुधभानुतनूजास्तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे चेत्।
क्रमतोऽरिसोदरखशात्रवहोराहिबुकायगैर्गुरुदिनेऽखिलखेटैः ॥ ७४ ॥

अन्वयः—चेत् सितजीवभौमबुधभानुतनूजाः क्रमतः तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे (स्थिताः) वा गुरुदिने अखिलखेटैः [सूर्याद्यैः] क्रमतः अरिसोदरखशात्रवहोराहिबुकायगैः (तदा जयः स्यात्) ॥ ७४ ॥

अथवा लग्न में शुक्र, सातवें बृहस्पति, छठे मंगल, चौथे बुध, और तीसरे स्थान में शनैश्चर हो, अथवा बृहस्पति के दिन छठे स्थान में सूर्य, तीसरे

स्थान में चन्द्रमा, दशवें स्थान में मंगल, छठे स्थान में बुध, लग्न में बृहस्पति, चौथे स्थान में शुक्र, गेरहवें स्थान में शनैश्चर हो, ऐसे योग में भी यात्रा करनेवाले राजा की जय होती है ॥ ७४ ॥

सहजे कुजो निधनगश्च भार्गवो मदने बुधो रविररौ तनौ गुरुः ।
अथ चेत्स्युरिज्यसितभानवो जलत्रिगता हि सौरिरुधिरौ रिपुस्थितौ ॥ ७५ ॥

अन्वयः—कुजः सहजे, भार्गवश्च निधनगः, बुधः मदने, रविः अरौ, गुरुः तनौ । अथ चेत् इज्यसितभानवः जलत्रिगताः सौरिरुधिरौ रिपुस्थितौ (तदा) हि जयः स्यात् ॥ ७५ ॥

अथवा तीसरे स्थान में मंगल, आठवें स्थान में शुक्र, सातवें स्थान में बुध, छठे स्थान में सूर्य और लग्न में बृहस्पति हो, अथवा बृहस्पति, शुक्र, सूर्य ये ग्रह चौथे और तीसरे स्थानों में हों और शनैश्चर, मङ्गल ये दोनों छठे स्थान में हों, ऐसे योग में भी यात्रा करनेवाले राजा की जय होती है ॥ ७५ ॥

यात्राकालिक योगादि

एको ज्ञेज्यसितेषु पञ्चमतपःकेन्द्रेषु योगस्तथा
द्वौ चेत्तेष्वधियोग एषु सकला योगाधियोगः स्मृतः ।
योगे क्षेममथाधियोगगमने क्षेमं रिपूणां वधं
चाथो क्षेमयशोऽवनीश्च लभते योगाधियोगे व्रजन् ॥ ७६ ॥

अन्वयः—ज्ञेज्यसितेषु एकः (यदि) पञ्चमतपःकेन्द्रेषु (स्थितः तदा) योगः (स्यात्) तथा तेषु चेत् द्वौ [स्थितौ] (तदा) अधियोगः एषु यदि सकलाः (स्थिताः तदा) योगाधियोगः स्मृतः । अथ योगे [गमने] क्षेमं, अधियोगगमने क्षेमं, रिपूणां वधं च लभते, योगाधियोगे व्रजन् क्षेमयशोऽवनीश्च लभते ॥ ७६ ॥

पाँचवें, नवें, पहिले, चौथे, सातवें, दसवें इन स्थानों में यदि बुध, बृहस्पति अथवा शुक्र इनमें से कोई एक ग्रह स्थित हो तो योग, दो ग्रह एक साथ अथवा अलग-अलग इन्हीं स्थानों में स्थित हों तो अधियोग और तीनों ग्रह साथ अथवा अलग-अलग इन्हीं स्थानों में स्थित हों तो योगाधियोग होता है । योग में यात्रा करने से क्षेम, अधियोग में यात्रा करने से क्षेम और शत्रुओं का नाश और योगाधियोग में यात्रा करने से क्षेम, यश तथा पृथ्वी का लाभ होता है ॥ ७६ ॥

विजयादशमी की प्रशंसा

इषमासि सिता दशमी विजया शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता।
श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा नृपतेस्तु गमे जयसन्धिकरी ॥ ७७ ॥

अन्वयः—इषमासि सिता विजयादशमी शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता। श्रवणर्क्षयुता सा सुतरां शुभदा (स्यात्) नृपतेः गमे तु जयसन्धिकरी (भवति) ॥ ७७ ॥

आश्विन मास की शुक्ल दशमी विजयासंज्ञक है। यह यात्रा करनेवालों के सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि करानेवाली है। यदि यह श्रवण नक्षत्र से युक्त हो तो अति ही शुभ फल देनेवाली होती है। विशेष करके राजा की यात्रा में विजय अथवा सन्धि करानेवाली होती है ॥ ७७ ॥

यात्रा में चित्तशुद्धि की प्रधानता

चेतोनिमित्तशकुनैरतिसुप्रशस्त-
र्ज्ञात्वा विलग्नबलमुर्व्यधिपः प्रयाति।
सिद्धिर्भवेदथ पुनः शकुनादितो-
ऽपि चेतोविशुद्धिरधिका न च तां विनेयात् ॥ ७८ ॥

अन्वयः—यदि विलग्नबलं ज्ञात्वा सुप्रशस्तैः चेतोनिमित्तशकुनैः उर्व्यधिपः प्रयाति (तदा) खलु [निश्चयेन] सिद्धिः भवेत्। अथ पुनः शकुनादितोऽपि चेतोविशुद्धिः अधिका (भवति) तां (चेतोविशुद्धिं) विना च न इयात् ॥ ७८ ॥

चित्त की प्रसन्नता, शुभ अंगस्फुरणादि निमित्त, शुभ शकुन इन सबके सहित लग्नबल जानकर यदि राजा चलता है तो वाञ्छित कार्य की सिद्धि होती है। परन्तु इनमें शकुनादि से चित्त की प्रसन्नता अधिक गिनी जाती है, इसलिए यदि चित्त की प्रसन्नता हो और शुभ शकुनादि भी हों तो यात्रा करे और यदि सब वस्तु शुभ हों परंतु चित्त की शुद्धि न हो तो यात्रा न करे ॥ ७८ ॥

यात्राप्रतिबन्धक कार्य

व्रतबन्धनदैवतप्रतिष्ठाकरपीडोत्सवसूतकासमाप्तौ।
न कदापि चलेदकालविद्युद्घनवर्षातुहिनेऽपि सप्तरात्रम् ॥ ७९ ॥

अन्वयः—व्रतबन्धनदैवतप्रतिष्ठाकरपीडोत्सवसूतकासमाप्तौ कदापि न चलेत्, अकालविद्युद्घनवर्षातुहिने अपि सप्तरात्रं (यावत् न चलेत्) ॥ ७९ ॥

यज्ञोपवीत, देवप्रतिष्ठा, विवाह, होलिकादि उत्सव और जननाशौच, मरणाशौच इन सबों की समाप्ति के विना कदापि यात्रा न करे और ऐसे ही

अकाल * में बिजली चमकने, मेघों के गर्जने, वर्षा होने और कुहरा पड़ने पर सात दिन तक यात्रा न करे ॥ ७९ ॥

यात्रा-विशेष का विचार

महीपतेरेकदिने पुरात्पुरे यदा भवेतां गमनप्रवेशकौ।
भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीर्विचारयेन्नैवकदापि पण्डितः ॥ ८० ॥

यद्येकस्मिन्दिवसे महीपतेर्निर्गमप्रवेशौ स्तः।
तर्हि विचार्यः सुधिया प्रवेशकालो न यात्रिकस्तत्र ॥ ८१ ॥

अन्वयः—यदा महीपतेः एकदिने पुरात् पुरे गमनप्रवेशकौ भवेतां (तदा) भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीः पण्डितः कदापि नैव विचारयेत्। यदि महीपतेः एकस्मिन् दिवसे निर्गमप्रवेशौ स्तः तर्हि तत्र सुधिया प्रवेशकालः विचार्यः यात्रिकः न (विचार्यः) ॥ ८०-८१ ॥

जहाँ एक ही दिन में राजा का गमन और प्रवेश हो अर्थात् किसी गाँव से चलकर अन्य अभीष्ट गाँव में पहुँचना हो, तो पण्डित को चाहिए कि नक्षत्रशूल, वारशूल, सम्मुख शुक्र, योगिनी इत्यादि न विचारे, केवल पंचांगशुद्धि देखकर यात्रा करे ॥ ८० ॥ और जहाँ एक ही दिन में राजा की यात्रा और प्रवेश हो अर्थात् किसी गाँव से चलकर अन्य अभीष्ट गाँव में पहुँचना हो वहाँ पहुँचने ही का काल विचारने योग्य होता है न कि यात्रा का काल ॥ ८१ ॥

यात्रा में त्रिनवमी दोष

प्रवेशान्निर्गमं तस्मात्प्रवेशं नवमे तिथौ।
नक्षत्रे च तथा वारे नैव कुर्यात्कदाचन ॥ ८२ ॥

अन्वयः—प्रवेशात् निर्गमं (कृत्वा) तस्मात् (निर्गमदिनात्) नवमे तिथौ नवमे नक्षत्रे तथा च नवमे वारे प्रवेशः कदाचन नैव कुर्यात् ॥ ८२ ॥

घर में पहुँचने की तिथि नक्षत्र वार से नवम तिथि नक्षत्र वार में यात्रा, और यात्रा के तिथि नक्षत्र वार से नवम तिथि नक्षत्र वार में गृहप्रवेश कदापि न करे। प्रयाण-नवमी प्रवेश-नवमी नवमी तिथि इनमें प्रवेश के दिन से नवम दिन प्रयाण-नवमी और यात्रा के दिन से नवम दिन प्रवेश-नवमी कही जाती है। नवमी तिथि प्रसिद्ध ही है, ये तीनों यात्रा में निषिद्ध हैं ॥ ८२ ॥

---

*पौषादि चार महीनों में पानी बरसना अकाल-वृष्टि है।

यात्राकाल में कर्तव्य विधि

अग्निं हुत्वा देवतां पूजयित्वा नत्वा विप्रानर्चयित्वा दिगीशम् ।
दत्त्वा दानं ब्राह्मणेभ्यो दिगीशं ध्यात्वा चित्ते भूमिपालोऽधिगच्छेत् ॥ ८३ ॥

अन्वयः—अग्निं हुत्वा, देवतां पूजयित्वा, विप्रान् नत्वा, दिगीशं अर्चयित्वा, ब्राह्मणेभ्यो दानं दत्त्वा, चित्ते दिगीशं ध्यात्वा भूमिपालः अधिगच्छेत् ॥ ८३ ॥

राजा को चाहिए कि अग्नि में हवन, इष्टदेवता की पूजा, ब्राह्मणों को नमस्कार, दिशा के स्वामी की पूजा करके और ब्राह्मणों को दान देकर चित्त में दिशा के स्वामी का ध्यान कर यात्रा करे ॥ ८३ ॥

नक्षत्र-दोहद

कुल्माषांस्तिलतण्डुलानपि तथा माषांश्च गव्यं दधि
त्वाज्यं दुग्धमथैणमांसमपरं तस्यैव रक्तं तथा ।
तद्वत्पायसमेव चाषपललं मार्गं च शाशं तथा
षाष्टिक्यं च प्रियङ्ग्वपूपमथवाचित्राण्डजान्सत्फलम् ॥ ८४ ॥
कौर्मं सारिकगौधिकं च पललं शाल्यं हविष्यं हया-
दृक्षे स्यात्कृसरान्नमुद्गमपि वा पिष्टं यवानां तथा ।
मत्स्यान्नं खलु चित्रितान्नमथवा दध्यन्नमेवं क्रमा-
द्भक्ष्याभक्ष्यमिदं विचार्य मतिमान्भक्षेत्तथाऽऽलोकयेत् ॥ ८५ ॥

अन्वयः—हयादृक्षे [अश्विन्यादिनक्षत्रे] क्रमात् कुल्माषान्, तिलतण्डुलान् तथा माषान्, गव्यं दधि, आज्यं, दुग्धं, अथ एणमांसं, तथा अपरं तस्य [मृगस्य] रक्तं, तद्वत् एव पायसम्, चाषपललम्, च मार्गम् [मृगमांसम्] शाशं [शशमांसं] तथा षाष्टिक्यं, प्रियंग्वपूपं अथवा चित्राण्डजान्, सत्फलम् कौर्मं पललं च पुनः सारिकगौधिकं पललं, शाल्यं, हविष्यं कृसरान्नमुद्गम् अपि यवानां पिष्टम्, तथा मत्स्यान्नं चित्रितान्नं अथवा दध्यन्नं (एवं कुलदेशानुसारेण) भक्ष्याभक्ष्यं इदम् विचार्य मतिमान् खलु भक्षेत् तथा आलोकयेत् ॥ ८४-८५ ॥

अश्विनी में पकाये हुए खड़े उड़द, भरणी में तिल मिले हुए चावल, कृत्तिका में उड़द, रोहिणी में गौ का दही, मृगशिरा में गौ का घी, आर्द्रा में गौ का दूध, पुनर्वसु में हरिण का मांस, पुष्य में हरिण का रक्त, आश्लेषा में खीर, मघा में चाषपक्षी का मांस, पूर्वाफाल्गुनी में मृग का मांस, उत्तराफाल्गुनी में शशा का मांस, हस्त में साँठी का भात, चित्रा में काकुनि, स्वाती में पुआ, विशाखा में अनेक प्रकार के पक्षियों का मांस,